ISSN 2277-5587
Impact Factor 4.705
Indexed in ULRICH, ISIFI, SJIF & DOJI
UGC Valid Journal (The Gazette of India,
Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Refereed Journal)

शोध श्री

Issue - 1 January-March 2020 RNI No. RAJHIN/2011/40531

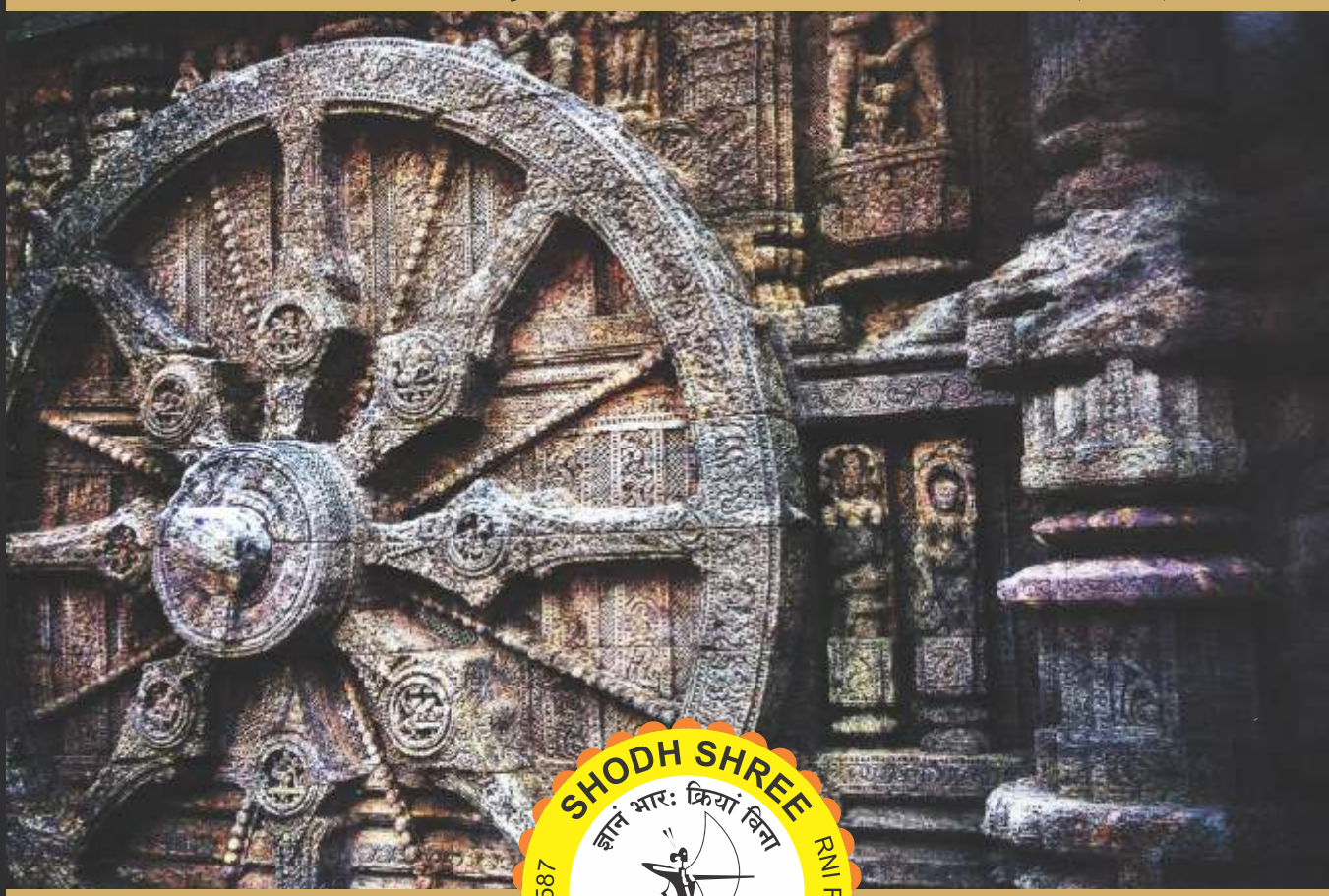

shodhshree@gmail.com
www.shodhshree.com

CHIEF EDITOR
Virendra Sharma

EDITOR
Dr. Ravindra Tailor

Shodh Shree
Issue - 1
Volume-34
January-March 2020

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Refereed Journal)

Virendra Sharma
Chief Editor
Government Girls P.G. College,
Ajmer

Dr Ravindra Tailor
Editor
Shodh Shree,
Jaipur

Editorial Board

Prof. H.S. Sharma (Retd.)
University of Rajasthan, **Jaipur**

Prof. T.K. Mathur (Retd.)
M.D.S. University, **Ajmer**

Prof. Ravindra Kumar Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra **(Haryana)**

Sarah Eloy
Museum The House of Alijn, **Belgium**

Prof. B.P. Saraswat
Dean of Commerce, M.D.S, University, **Ajmer**

Prof. Pushpa Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra **(Haryana)**

Dr. Manorama Upadhayay
Principal, Mahila P.G. Mahavidyalaya, **Jodhpur**

Dr. Veenu Pant
Associate Professor & Head, Department of History, Sikkim University, Gangtok **(Sikkim)**

Dr. Rajesh Kumar
Director (Journal, Publicaiton & Library), I.C.H.R., **New Delhi**

Dr. Pankaj Gupta
Assistant Professor, Department of College Education, **Jaipur**

Dr. Rajendra Singh
Archivist, Rajasthan State Archives, **Jodhpur Division**

Dr. Avdhesh Kumar Sharma
Assistant Professor, Department of College Education, **Jaipur**

Advisory Board

Prof. S.N. Tailor (Retd.)
S.D. Government P.G. College, **Beawar**

Prof. S.P. Vyas
Jainarain Vyas University, **Jodhpur**

Dr. Kate Boehme
University of Leicester, **United Kingdom**

Dr. Mahesh Narayan
Archivist (Retd.), National Archives of India, **New Delhi**

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Refereed Journal)

Contents

Volume-34 **Issue-1** **January-March 2020**

1. **बाबा फरीद और जायसी के काव्य में भाव–साम्य** 1–4
   डॉ. वरिन्दरजीत कौर, फिरोजपुर शहर (पंजाब)

2. **विभिन्न कलाओं का संग्रहालयः जूनागढ़ दुर्ग** 5–10
   अमित राजवंशी, अजमेर

3. **अवध के शासकों का हरम (1722–1856 ई.)** 11–16
   डॉ. चित्रगुप्त, झांसी (उत्तर प्रदेश)

4. **अर्न्तराज्यीय असंगठित श्रमिक प्रवसन सामाजिक विवेचना** 17–21
   डॉ. दिनेश गुप्ता, बीकानेर

5. **मारवाड़ की बहियों में रंगाई – छपाई के संदर्भ** 22–24
   डॉ. अल्का रानी, मैसूर (कर्नाटक)

6. **अर्नोल्ड जे. टॉयन्बी : एक इतिहास दार्शनिक** 25–28
   अमित कुमार रैंकवार, जयपुर

7. **आधुनिक परिप्रेक्ष्य में गृहस्थाश्रम की उपादेयता** 29–34
   डॉ. रंजिता सिंह, जयपुर

8. **भारत के दृष्टिकोण से हिन्दमहासागर का महत्व (अमेरिका, रूस व चीन के हस्तक्षेप का प्रभाव)** 35–42
   सुरेश भाटी, जोधपुर

9. **सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह (बजाज ऑटो लिमिटेड के संदर्भ में)** 43–46
   संजय कुमार, बांदीकुई

10. **19वीं शताब्दी में मारवाड़ की सामाजिक व्यवस्था में अंग्रेजी हस्तक्षेप** 47–49
    सीमा सिंह, जोधपुर

11. **सामाजिक न्याय : जॉन रॉल्स और डॉ. भीमराव अम्बेडकर** 50–54
    डॉ. फूलसिंह गुर्जर, झालावाड़

12. **अलवर मेवात में लोकगीतों की संवेदना** 55–59
    रूपा, अलवर

13. **पूना पैक्ट पर गांधी एवं अम्बेड़कर का विश्लेषण** 60–62
अल्का मंत्री, अजमेर

14. **भारत में मंदी और आर्थिक विकासः एक विस्तृत आर्थिक अध्ययन** 63–67
डॉ. दुर्गेश कच्छवाह, जोधपुर

15. **'छायावाद' में नामवरसिंह की तुलनात्मक आलोचना–पद्धतिः एक अनुशीलन** 68–71
जेराराम, जोधपुर

16. **नृत्य सम्मोहिनी बूंदी रियासत** 72–75
विभा श्रृंगी, कोटा

17. **जसनाथी सम्प्रदाय : परिचयात्मक विवेचन** 76–80
श्री भेराराम, भोपालगढ़

18. **कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों के तनाव का उनके स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव का मनोवैज्ञानिक अध्ययन** 81–84
संगीता रानी, सिहोर (मध्यप्रदेश)

19. **Archaeological Sites in Rajasthan: Their Problems and Suggestions** 85-88
Mr. Kamal Singh & Dr. Ambika Dhaka, Bikaner

20. **Green Finance: A Step Towards Environmental Sustainability** 89-95
Dr. Nuzhat Sadriwala, Udaipur

21. **Impact of MGNREGA on Women Empowerment: A Study of Tonk District (Rajasthan)** 96-103
Gajendra Singh Meena, Jhalawar

बाबा फरीद और जायसी के काव्य में भाव–साम्य

डॉ. वरिन्दरजीत कौर
सहायक आचार्य, देव समाज कालेज फॉर वूमेन, फिरोजपुर शहर (पंजाब)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

निर्गुणोपासक भक्तों की दूसरी शाखा में सूफी संत आते हैं जिन्होंने प्रेम तत्व को ईश्वर प्राप्ति के लिए सबसे अनिवार्य बताया। इनके काव्य में प्रेमतत्व की प्रधानता होने के कारण इस शाखा को प्रेमाश्रयी शाखा, प्रेममार्गी शाखा, प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा इत्यादि कहा जाता है। मुसलमान आक्रमणकारियों के साथ यह सूफी संत व महात्मा भारत आ गए और यहां के विभिन्न धार्मिक व अध्यात्मिक मतों तथा विचारों से प्रभावित हुए।

संकेताक्षर : *बाबा फरीद, जायसी, निगुणोपासक, सूफी, भाव–साम्य।*

सूफी मत इस्लाम धर्म का एक अंग है परन्तु सूफियों में अर्थात् सूफी फकीरों में इस्लाम की कट्टरता का अभाव है। सूफी साधक जिस समय भारत आए उस समय सारे देश में भक्ति लहर एक विराट जन आंदोलन के रूप में प्रवाहित हो रही थी। उस समय मुस्लिम शासन सत्ता कायम थी और हिन्दू–मुस्लिमों में आपसी द्वेष और वैमनस्म कायम था। इस वैमनस्य को मिटाने के लिए इन सूफी साधकों ने अपने काव्य के माध्यम से भरसक प्रयास किए। "कुतबन, जायसी आदि कवियों ने प्रेम का शुद्ध मार्ग दिखाते हुए उन सामान्य जीवन दशाओं को सामने रखा जिनका मनुष्य मात्र के हृदय पर एक सा प्रभाव पड़ता है। हिन्दू और मुसलमान हृदय को आमने–सामने करके अजनबीपन मिटाने वालों में इन्हीं सूफी कवियों का नाम लेना पड़ेगा।"[1] सूफी काव्य में उदारता एवं कोमलता विद्यमान है। इन सूफी फकीरों ने अपने प्रेमाख्यानों द्वारा हिन्दू–मुस्लिम लोगों के दिलों में मौजूद कट्टरपन और अजनबीपन को मनोवैज्ञानिक ढंग से दूर करने का प्रयास किया तथा दोनों संस्कृतियों का सुंदर समन्वय प्रस्तुत किया। इन्होंने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम को प्राप्त करने पर बल दिया। सूफी साधना में साधक की कल्पना पति रूप में तथा ईश्वर की कल्पना पत्नी रूप में की गई है अर्थात् ईश्वर को स्त्री रूप में माना है।

मलिक मुहम्मद जायसी हिंदी साहित्य की सूफी काव्य–धारा के प्रतिनिधि कवि हैं। बचपन में ही माता–पिता की मृत्यु के कारण साधुओं और फकीरों की संगति में रहने वाले जायसी एक नेत्र तथा एक कान से विहीन थे। 'पद्मावत' उनकी एक सशक्त रचना है जिसमें रत्नसेन और पद्मावती की लौकिक प्रेम कहानी के द्वारा अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना की गई है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जायसी के बारे में लिखते हैं कि, "जायसी भारतीय मुसलमान थे और साधु फकीरों के सतसंगी। जिस समाज में उनका जन्म हुआ उसके प्रति अपने विशेष कर्त्तव्यों के पालन के साथ–साथ वह सामान्य मनुष्य धर्म के सच्चे अनुयायी थे। प्रत्येक प्रकार का महत्व स्वीकार करने की क्षमता उनमें थी। वीरता, धीरता, ऐश्वर्य, रूप–गुण–शील सब के उत्कर्ष पर मुग्ध होने वाला हृदय उन्हें प्राप्त था।"[2]

अतः जायसी एक उत्तम विचारों तथा गुणों वाले कवि थे, जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से समस्त संसार में प्रेम को संदेश दिया।

हिंदी के साथ–साथ पंजाबी साहित्य के मध्य काल में सूफी कवियों का आगमन हुआ। जिन्होंने अपनी रचनाओं में अध्यात्मिक भाव प्रकट किए। इन्हीं पंजाबी सूफी कवियों में शेख फरीद प्रतिनिधि कवि हुए हैं। वास्तव में पंजाबी काव्य और सूफी विचारों की शुरूआत उन्होंने ही की है। अरबी, फारसी तथा इस्लाम धर्म का गहन ज्ञान रखने वाले बाबा फरीद ने ख़्वाजा बख्तयार काकी के पास रहकर बहुत समय कठिन अध्यात्मिक अभ्यास और साधना की। फरीद की वाणी पंजाबी, हिंदी और फारसी तीन भाषाओं में है।

शेख फरीद और जायसी दोनों क्रमवार पंजाबी और हिंदी साहित्य के सूफी काव्य धारा के प्रमुख व प्रसिद्ध कवि हैं। इन दोनों के काव्य में भाव साम्यता पर्याप्त है, जिसका वर्णन इस प्रकार है।

सूफी कवि फरीद की वाणी के केन्द्र में प्रेम का भाव है। उनका यह प्रेम भाव अपने भगवान के प्रति है। फरीद एक अल्लाह के उपासक थे। अपने इष्ट को सच्चे दिल से प्रेम करने और खुद उसके इश्क में पूरी तरह से डूब जाना तथा निरंतर उस भगवान के नाम का स्मरण करने पर जोर देते हुए वह कहते हैंः

'दिलों मोहब्बत जिन सेई सचिया
जिनि मनि होर मुखि होर सु कांडे कचिया
रते इश्क खुदाए रंग दीदार के
विसरिया जिनि नाम से भुए भार थीए।'[3]

अर्थात् जो मनुष्य प्रभु के साथ दिल से प्रेम करता है वही सच्चा आशिक है परन्तु जिन के मन व हृदय में कुछ और है तथा मुंह से कुछ और कहते हैं, वह कच्चे आशिक हैं। अतः फरीद ने उन्हीं को सच्चे आशिक का दर्जा दिया जो परमात्मा में सच्चे दिल से प्रेम करते हैं, जो उसके रंग में रंगे हैं परन्तु जिन को प्रभु का नाम भूल गया है उन्हें वह धरती पर बोझ के समान समझते हैं।

फरीद की तरह मलिक मोहम्मद जायसी के काव्य में भी प्रेम की प्रधानता है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना की है। उनकी प्रसिद्ध रचना 'पद्मावत' एक प्रधान रचना है। जिसमें राजा रत्नसेन और पद्मावती के जिस प्रेम का उल्लेख किया गया है वह इसी प्रकार का है। रत्नसेन आत्मा का प्रतीक है और पद्मावती परमात्मा का प्रतीक है। जायसी प्रेम को ईश्वर प्राप्ति का साधन मानते हैं और इश्क मजाजी से इश्क हकीकी तक पहुंचने का संदेश देते है। जायसी ने अपनी रचनाओं में प्रेम को समुद्र की तरह अत्यंत विशाल बताया है, जिसका पार पाना असंभव हैः

'प्रेम समुद जो अति अवगाहा
जहां न वार न पार न था।'

वह कहते हैं प्रेम की प्राप्ति से सृष्टि निर्मल और आनन्दमय हो जाती है।

'लीन लोक चौदह खंड सबै चेरे मोहि सूझि।
प्रेम छांडि नाहि लोन कछु जो देखा मन बूझि।'[4]

जायसी का मत है कि सच्चा प्रेम एक बार उत्पन्न होकर फिर समाप्त नहीं होता। जिस मनुष्य में एक बार प्रभु प्रेम रूपी बेलि छा गई उसके हृदय में और किसी भाव के लिए स्थान ही नहीं रहताः

'प्रीति बेलि जिनि अरुझै कोई।
अरुझै मुए न छूटै सोई'[5]

दूसरी तरफ फरीद का कहना है कि यदि मनुष्य का यौवन अर्थात् उसकी जवानी का बलिदान देकर भी परमात्मा की प्राप्ति हो रही है तो वह इसे महंगा सौदा नहीं मानते। उनका कहना है कि यदि प्रभु पति प्राप्त नहीं तो यौवन किसी काम का नहीं अर्थात् मनुष्य के यौवन की सार्थकता प्रभु पति के मिलन में छिपी हैः

'जोबन जांदे न डरां, जो सह प्रीति न जाए।
फरीदा किसी यौवन प्रीति बिनु सुकि गए
कुमलाए।'[6]

अतः दोनों कवियों के काव्य में प्रेम भाव की प्रधानता है। दोनों कवियों ने सच्चे प्रेम पर बल दिया है। प्रेम भाव को आवश्यक बताते हुए मनुष्य के हृदय में इसे जगाने का प्रयास दोनों कवि कर रहे हैं। दोनों प्रेम के अभाव में मनुष्य को और उसके जीवन को मिथ्या के समान समझते हैं।

प्रेम के साथ–साथ दोनों कवियों के काव्य में विरह भाव की साम्यता है। जायसी के प्रेम तत्व में संयोग के स्थान पर विरह का अधिक महत्व है। अतः जायसी ने परम सत्ता के विरह को व्यापक स्तर पर प्रस्तुत किया है। जायसी की दृष्टि में विरह की गर्मी से स्वर्ग और पाताल जलते रहते हैं, सूर्य भी ईश्वर के विरह की अग्नि में जलकर कांपता है तथा तारागणों और उल्काओं में भी उसी प्रकार का विरह परिव्याप्त रहता है।

विरह की आगि सूर जरि कांपा।
रातिहि दिवस जरै ओहि तापा।
औ सब गखत तराई जरहीं।
दूटहिं लूक धरति गहं परहीं।'[7]

जायसी का कथन है कि ईश्वर विरह की व्यापकता का अनुमान इस तथ्य से किया जा सकता है कि इस विशुद्ध अध्यात्मिक क्षेत्र में पवन और अग्नि आदि सभी उस असीम सत्ता अथवा परम प्रेम तक पहुंचने के लिए तरसते रहते हैं। सृष्टि के संपूर्ण पदार्थ उस परम तत्व में लीन होने के हेतु विह्वत रहते है और अन्ततः उसी में लीन हो जाते हैं।

'धाई जो बाजा कै मन साधा,
मारा चक्र भएउ दुइ आधा।
पवन जार लहँ पहुँचे चहा।
मारा तैस लोटि भुइ रहा।'[8]

दूसरी तरफ बाबर फरीद विरह को बंदगी के मार्ग का सुल्तान कहते है। विरह उनकी जान और प्राणों की इश्क पीड़ा हैः

'फरीदा चित खटोला वाणु दुःख विरह विछावण लेफ।
ऐहो हमारा जीवणा साहेब सचे देख।'[9]

अर्थात् विरह उनके सेज पर बिछाए लेफ के समान है। यह वेदना है, एक ऐसी वेदना जिसकी गहरी पीड़ा और उसका मर्म केवल परमात्मा के सिवाए और किसी के पास नहींः

'साई बाझ अपने वेदन कहिए किसु'

विरह को अति महत्व देते हुए फरीद कहते है कि जो मनुष्य इस विरह से अनभिज्ञ है, जिन्होंने इस विरह की पीढ़ा को महसूस नहीं किया। वह अभागा है, वह शरीर अभागा है जिसमें इस वेदन की चिंगारी नहीं फूटी, वह मनुष्य एक चलता फिरता मुर्दा है, फिर चाहे वह अपने शरीर को कितना भी सजा-संवार ले परन्तु विरह के बिना वह एक खौफनाक शमशान के समान है।

'बिरहा बिरहा आखिए बिरहा तू सुलतान
फरीदा जितु तन विरह न उपजि सो तन जाणु मसान।'[10]

अतः दोनों कवियों के काव्य में विरह की तड़प का व्यापक वर्णन मिलता है। दोनों कवि मानते हैं कि भगवान की प्राप्ति के लिए विरह की पीढ़ा जरूरी है जो मनुष्य इस विरह-वेदना के मार्ग से नहीं गुजरता वह परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकता। क्योंकि विरह की तड़प में आत्मा-परमात्मा से मिलने के लिए व्याकुल होती है और उसे प्राप्त करने के लिए वेदना को झेलती है, सहती है। सूफी कवियों में विरह की प्रधानता के कारण बताते हुए डॉ. सुरिन्दर सिंह कोहली लिखते हैं कि, "इस्लाम का यह सिद्धांत है कि इस शरीर में रहते भगवान के अनुपम कृत्य, उसकी परम ज्योति की झलक हृदय में पड़ती है, पर उसका पूर्ण अनुभव और दर्शन मृत्यु के पश्चात् प्रभु के दरबार में पहुंच कर ही होते हैं। इसी लिए सूफी फकीर इश्क हकीकी की मंजिल पर पहुंच कर भी उस विरह में व्याकुल रहता है।'[11]

अर्थात् सूफी प्रेम साधना में विरह की अनुभूति बहुत ही आवश्यक है क्योंकि जब तक आत्मा रूपी अंश परमात्मा मे मिल नहीं पाता तब तक उनकी तड़प परमात्मा से मिलने तथा उसमें लीन होने के लिए बरकरार रहती है। इसी कारण सूफी फकीर विरह पर अधिक जोर देते हैं।

जायसी और फरीद दोनों सूफी कवि भावात्मक रहस्यवादी कवि हैं। दोनों कवियों ने भावात्मक रहस्यवाद की अभिव्यंजना अपनी अपनी रचनाओं में की है। भावात्मक रहस्यवाद वहां होता है जहां कवि निर्गुण, निराकार परमात्मा से अपना संबंध जोड़कर उससे मिलने की उत्कण्ठा व्यक्त करता है। अर्थात् जब आत्मा संसारिक वस्तुओं से संबंध तोड़कर भावनामय लोक में पहुंच जाती है, जहां वह अपने और परमात्मा की बीच एकरूपता का अनुभव करने लगती है और उसे एक अलौकिक आनंद की अनुभूति होती है। जायसी के रहस्यवाद पर अद्वैतवाद की भावना का प्रभाव है। उनके काव्य में समस्त प्रकृति उस प्रियतम को मिलने के लिए उत्कंठित दिखाई पड़ती है। उन्होंने प्रकृति के कण-कण में परोक्ष ज्योति और सौन्दर्य की झलक देखी हैः

रवि सजि वखत दिपहिं ओहि जोती,
रतन पदारथ मानिक मोवे
जहं जहं विहंलि सुभावहि हंसी।
तहं तहं छिटकि जोति परगायी।[12]

जायसी परमात्मा को, उसकी ज्योति का सर्वत्र व्याप्त मानते हैं। इनका कहना है कि परमात्मा हृदय में निहित है, केवल उसके साक्षात करने की जरूरत है। जिस दिन जीव को इस रहस्य का पता चलता है तो उसी दिन वह विरह अग्नि में जलने लगता है, उसे सारा जगत प्रियत्म के विरह वाणों से घायल दिखाई देता है।

उन बानन अस को जो न मारा,
बेधि रहा सगरो संजारा।
गगन नखत जो जाहि न गनै।
वै सब बान जोहि कै है।[13]

इस विरह की चरम अनुभूति ही मानस में प्रियतम के सामीप्य को दृष्टिगोचर कराती है और उससे जो आनंद प्राप्त होता है, वह संसार में व्याप्त दिखाई देता है।

देख मानसर रूप सोहावा,
हिय हुलास पुरइनि होई छाया।

पदमावत के अंत में रहस्यवादी प्रवृति अर्थात् लौकिक प्रेम से इस प्रकार आत्मा उस परमात्मा को मिलने के लिए व्याकुल है और जब तक उसका यह मिलाप नहीं होता वह विरह के ताप को झेलती आती है और परमात्मा को अपने निकट महसूस करने लगती है और आनंदित हो उठती है।

जायसी की तरह फरीद भी भावात्मक रहस्यवादी सूफी कवि हैं। परमात्मा को वह प्रकृति के कण-करण में

मौजूद मानते हुए वह कहते हैं कि परमात्मा की सत्ता इस सृष्टि की प्रत्येक, जगहा पर व्याप्त है।

'फरीदा खालक खलक महि,
खलक वासे रब माहिं।'[14]

अर्थात् परमात्मा में सारा संसार और सारे संसार में उस परमात्मा का वास है।

आत्मा को जब परमात्मा का आभास होता है तो इधर-उधर मटकती है परन्तु फरीद परमात्मा निवास हृदय में स्थापित मानते हैंः

फरीदा जंगल जंगल किआ भवहि
वण कण्डा मोडेहि
वसी रब हिआलिए।
जंगल किया ढूढेहि।'[15]

आत्मा परमात्मा से मिलने के लिए उत्कंठा से भरपूर हो जाती है। वह परमात्मा से मिलाप करने के लिए तड़प उठती है।

अजु न सुत्ती कंत सियों अंग मुड़े मुड़ि जाए।
जाए पुछ्छु डोहागणी तुम क्यों रैण विहाए।'[16]

इस अवस्था में परमात्मा से मिलने के लिए व्याकुल हो उठती है। वह परमात्मा के विरह में उसके वियोग को सहन करती है क्योंकि इस के बाद उसका और परमात्मा का मिलन होने वाला है। रहस्यवाद जीव-आत्मा की वह स्थिति है कि दोनों में कोई अंतर नहीं रह जाता। जीव आत्मा एक तरह से अपने अस्तित्व को भूल जाती है।

'कन्ना बाझो सुनणा, बिन हत्थीं चलना।'

ऐसे प्रेम में एक तरह का नशा होता है और उसकी सारी इंद्रियों में एकाग्रता आ जाती है अर्थात् आत्मा-परमात्मा का मिलन हो जाता है और दोनों एक हो जाते हैं।

उपर्युक्त समग्र विवेचन के बाद हम कह सकते हैं कि जायसी और फरीद दोनों की चाहे भाषा एक नहीं, दोनों की परिस्थितियों एक नहीं परन्तु सबसे बड़ी उनमें साम्यता यह है कि दोनों सूफी अपने-अपने साहित्य की सूफी काव्य धारा के श्रेष्ठ कवि हैं। दोनों ने सूफी सिद्धांतों पर चलते हुए अपने काव्य का निर्माण किया है। फरीद जहां अपनी बात सहज व सरल रूप से करते हैं, वहीं जायसी अपनी बात बड़े सूक्ष्म ढंग से रखते हैं। दोनों कवियों के काव्य में प्रेम के भाव की प्रधानता है अर्थात् दोनों के काव्य के केन्द्र में प्रेम का भाव है। यह अनन्य प्रेम उनका अपने निराकार परमात्मा से है। दोनों कवि मनुष्य के जीवन का सार तत्व प्रेम में ढूंढते नजर आ रहे हैं। प्रेम को माध्यम बना परमात्मा तक पहुंचने का मार्ग दोनों कवि दिखा रहे है। परन्तु यह प्रेम सच्चार प्रेम होना चाहिए दिखावे का नहीं। फरीद ने जहां अपने प्रभु प्रेम की अभिव्यक्ति सीधे रूप में की है वहीं जायसी ने अपने काव्य में लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम तक पहुंचने का मार्ग बताया है। दोनों कवियों ने विरह को अति आवश्यक माना है। विरह को प्रधानता देते हुए दोनों कवि प्रभु प्राप्ति के लिए उसे अनिवार्य मानते हैं, जिसके बिना प्रभु मिलन असंभव है अर्थात् दोनों यह मानते हैं कि प्रभु प्राप्ति के लिए प्रथमतः तड़प होनी चाहिए, विरह की आग में तप कर ही मनुष्य मनुष्य परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। दोनों भावात्मक रहस्यवादी कवि हैं। भावात्मक रहस्यवादी की स्थितियों का वर्णन दोनों कवियों के काव्य में मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *श्रीकृष्ण दास, पद्मावत में लोक तत्व, पृ.40*
2. *रामचन्द्र शुक्ल, जायसी ग्रंथावली, पृ.23*
3. *उर्द्धत, भाषा विभाग,पंजाब, सेख फरीद : जीवन और रचना, पृ.293*
4. *व्याख्यकार, वासुदेवशरण अग्रवाल, 'पद्मावत', पृ. 173*
5. *वही, पृ.50*
6. *उर्द्धत, भाषा विभाग, पंजाब, शेख फरीद : जीवन और रचना, पृ.293*
7. *व्याख्यकार, वासुदेवशरण अग्रवाल, 'पद्मावत', पृ.210*
8. *उर्द्धत, दीवान सिंह, फरीद दर्शन, पृ.91*
9. *सुरिंदर सिंह कोहली, बाबा फरीद : जीवन, समय और रचना, पृ.58*
10. *उर्द्धत, भाषा विभाग, शेख फरीद : जीवन और रचना, पृ.302*
11. *वही, पृ.92*
12. *व्याख्यकार, वासुदेवशरण अग्रवाल, 'पद्मावत', पृ. 125*
13. *वही, पृ.192*
14. *उर्द्धत, भाषा विभाग, पंजाब, शेख फरीद : जीवन और रचना, पृ.309*
15. *वही, पृ.337*
16. *वही, पृ. 328.*

विभिन्न कलाओं का संग्रहालयः जूनागढ़ दुर्ग

अमित राजवंशी
सहायक आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में बीकानेर के जूनागढ़ दुर्ग का स्थापत्य एवं विभिन्न कलाओं का अध्ययन तथा उनकी विशेषताओं के बारे में विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है, जो बीकानेर की कला एवं संस्कृति का का अभिन्न हिस्सा है। बीकानेर में भित्ति चित्रों की समृद्ध परंपरा रही है। जूनागढ़ दुर्ग के विभिन्न महलों एवं बीकानेर के विभिन्न मन्दिरों, मृत्यु स्मारकों (छतरियों) राज प्रसादों व सेठ--राहूकारों की हवेलियों में भित्ति-चित्रों का आलेखन बहुतायत से हुआ है। प्राचीनता की दृष्टि से तो भित्ति चित्र के आलेखन में जैन धर्म का प्रभाव दर्शनीय है, परन्तु भागवत-धर्म का प्रभाव भी कम नहीं रहा है। यहां के राज प्रसादों के भित्ति चित्रण में मुगल शैली, दक्खनी शैली व राजपूती शैली के चित्रांकन का व्यापक आलेखन मिलता है। यहाँ हम जूनागढ़ दुर्ग के विभिन्न महलों में हुए भित्ति चित्रों एवं विभिन्न आलेखनों पर शोध करेंगे।

संकेताक्षर : *बीकानेर, जूनागढ़ दुर्ग, महल, स्थापत्य कला, भित्ति चित्र, राजपूती शैली, मुगल शैली, दक्खनी शैली, वास्तुकला, चित्रकला, वैष्णव धर्म, जैन धर्म, दरी कारपेट, छत, पच्चीकारी, मीनाकारी, जरी कलम, सोने की कलम।*

राजस्थान के बालुकामय प्रदेश में निर्मित बीकानेर का जूनागढ़ दुर्ग राठौड़ राजपूतों के शौर्य एवं वैभव की अनुपम कृति है। पत्थरों पर उकेरी गयी नक्काशी, मनमोहक चित्रकारी, पच्चीकारी, जाली-झरोखें, मेहराब, बारादरियाँ आदि में कलात्मक बारीकियों को देखकर लगता है मानो कलाकार ने सम्पूर्ण कला को ही दुर्ग में उतार दिया हो।[1] कहते हैं कि दीवारों के कान होते हैं परन्तु जूनागढ़ के महलों की दीवारें तो बोलती प्रतीत होती है।[2] दुर्ग को कलात्मक जगत का अद्भुत केन्द्र, वास्तुकला का श्रेष्ठ उदाहरण एवं कला का मन्दिर आदि सँज्ञाऐं दी जा सकती है। अब तक चार शताब्दियों में इक्कीस शासकों की रूचिनुसार निर्माण के फलस्वरूप दुर्ग मध्यकालीन स्थापत्य, हिन्दू पद्धति, स्थानीय शैली, मुगल तुर्की शैली एवं यूरोपियन शैली के उत्कृष्ट समन्वय का उदाहरण बन गया है।

किले का निर्माण व नामकरण

बीकानेर जिला प्राचीन जांगल प्रदेश में स्थित है, जिसके उत्तर में कुरू व मद्र देश थे। जांगल देश के उत्तरी भाग पर राठौड़ों के अधिकार के बाद राजधानी बीकानेर बनी।यह किला उत्तर पश्चिमी राजस्थान में बीकानेर जिला मुख्यालय में कोट गेट से एक कि.मी. दूर शहर के बीच भूमि तल पर बना हुआ है।

दुर्ग का वास्तविक नाम चिन्तामणी दुर्ग है, परन्तु प्रसिद्धि जूनागढ़ नाम से है। 20वीं शताब्दी के आरम्भ में इसका नाम बदलकर जूनागढ़ रखा गया। नाम के संदर्भ में एक मत यह है कि महाराजा रायसिंह द्वारा सौराष्ट्र प्रान्त को जीतने के कारण इस दुर्ग का नाम भी जूनागढ़ रखा गया, इसी प्रकार एक अन्य मत के अनुसार जनूागढ़ का शाब्दिक अर्थ है पुराना किला, राजपरिवार द्वारा दुर्ग को छोड़कर लालगढ़ पैलेस में निवास करने के कारण इसे जूना अर्थात पुराना गढ़ कहा जाने लगा तृतीय मतानुसार दुर्ग की नींव पुराने दुर्ग की नींव पर ही रखी जाने के कारण इसे जूनागढ़ कहा जाने लगा।[3] इस किले का निर्माण बीकानेर के शासक राजा रायसिंह के प्रधानमंत्री करमचन्द की निगरानी में

किया गया था। इस किले का निर्माण 1574 ई. से 1594 ई. के दौरान हुआ था।[4]

किले की भव्यता एवं शासकों का कलागत योगदान

यह किला चारदीवारी के भीतर बने महलों का एक समूह है। जूनागढ़ बख्तरबन्द दुर्ग न होकर राजपरिवार का राजमहल मात्र है, जिसे भव्यता एवं सुन्दरता से सजाया गया है। किले में निर्मित महल में दिल्ली, आगरा व लाहौर स्थित महलों की झलक मिलती है।[5] विभिन्न शासकों व विभिन्न कालों में बनने के कारण इनके वास्तु विन्यास व शैली में विविधता दिखाई पड़ती है। इण्डो–इस्लामिक स्थापत्य कला या इण्डो–सार्सेनिक स्थापत्य कला की जितनी भी विशेषताएँ हैं वे सभी विशेषताएँ इस किले में देखने को मिलती है। डाड़दार छत, मेहराब, तक्षणकला, झरोखा, कंगूरा या मुगल स्थापत्य कला की किसी भी विशेषता को देखे, वो इन महलों में प्रयुक्त की गयी हैं।[6] बलुआ और संगमरमर पर इतनी बेजोड़ कारीगरी अन्य दुर्ग में देखने को नहीं मिलती। जूनागढ़ के सभी शासक कला प्रेमी थे उन्होंनें देश के विभिन्न हिस्सों से आए कलाकारों को अपनी राजधानी में प्रश्रय दिया। मिनिएचर कलाकार, उस्ता कलाकार आदि ने भित्ती–चित्रण, दरी कारपेट, छत, पच्चीकारी, मीनाकारी, जरी कलम, सोने की कलम आदि का प्रयोग कर महलों को सजाया। चित्रकला के दक्कनी स्कूल व बीकानेर स्कूल का समन्वय जूनागढ़ में देखने को मिलता है। मुगल चित्रकारों के चित्रों की बारीकियों की झलक भी यहाँ दिखाई पड़ती है।[7]

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया किया कि जूनागढ़ दुर्ग के अन्दर कई महलों का समूह है, उनमें मुख्य रूप से चित्रित महलों में करण महल, फूल महल, अनूप महल, बादल महल व चन्द्र महल हैं।

करण महल

करण महल जिसे सार्वजानिक सभा कक्ष भी कहा जाता है, करण महल बीकानेर का पहला स्मारक और राजपूताना का दूसरा सबसे पुराना स्मारक है, जो क्लासिक मुगल शैली पर आधारित है।[8] इसकी रचना राजा करण सिंह के द्वारा 1680 ई. में की गई थी। इसके बाद महाराज अनूपसिंह ने 1690 ई. में अपने पिता करण सिंह के स्मारक के रूप में इसको महत्व प्रदान किया।[9] अति सुन्दर आर्थिक डिजाइन दिल्ली के दीवान–ए–खास, रगं महल और मुमताज महल जैसी क्लासिक कला की विशेषता है।[10] इसके नीचे औरंगजेब कालीन शैली के प्रकार के छोटे बेल वाले कोलमों पर आराम करने वाले कचूदार मेहराब की पंक्ति है और एक बोर्ड कगंनी और आस–पास के गैलरी के समान एक लकड़ी की छत है।[11] महाराज गजसिंह चतुर पर्यवेक्षक और एक विद्वान थे, जो मुस्लिम साम्राज्य को असहाय समझते थे, जहाँ कलात्मक जीवन का अवशेष खत्म हो गया था।[12] दिल्ली लाहौर और अन्य स्थानों से कुशल कारीगर लोग राजपूत राजाओं के संरक्षण में आये थे। गजसिंह ने उन्हें अपनी सेवा में शामिल किया। जिन्होंने बीकानेर की कला को गति प्रदान की। उन्होंने करण महल के पुर्ननिर्माण में अहम भूमिका निभाई।

करण महल भित्ति–चित्रण की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। इसे आगरा किले के खास महल और दिल्ली के लाल किले के दीवान ए खास, रंगमहल और मुमताज महल की लघु अनुकृति माना जाता है। इसका निर्माण लगभग सन् 1650 ई. में महाराजा अनूपसिंह ने अपने पिता महाराजा करणसिंह की स्मृति मे करवाया था। इस महल के चारों ओर के बरामदों की छत पर सोने का धरातल और उस पर फूल महीन डण्ठल नोकदार पत्तियों का सुन्दर आलेखन हुआ है। इन्हीं भित्ति–चित्रों के नीचे की ओर छोटी–बड़ी हरी पत्तियों व लाल फूलों को चित्रित किया गया है। इसके अतिरिक्त इस महल के सभी स्तम्भ भी सौन्दर्यपूर्ण अलंकरणों से आच्छादित हैं। यह जूनागढ़ का पहला महल है जो बादशाह जहांगीर के काल में विकसित अभिजात्य व अलंकृत मुगल शैली पर आधारित है। (चि. सं. 8) 1690–1755 ई. के मध्य इस चित्रण में महाराजा अनूपसिंह के अतिरिक्त महाराजा सुजानसिंह व महाराजा गजसिंह का यथा सम्भव योगदान रहा।

फूल महल

फूल महल इस किले का सबसे पुराना भाग है और इसका निर्माण बीकानेर के राजा राय सिंह (1574–1612 ई.) ने करवाया था।[13] यह महल राजसिंह की रानी फूल कौर के नाम से बनाया गया था। इस महल में दो दरवाजे हैं, जहां पर बहुत अन्धकार रहता है। हालाकि इस कमी को दूर करने के लिए चमकदार दर्पण से अच्छी तरह से इसकी सजावट की गई है, जो सभी दीवारों पर बेहद फैला हुआ है इसको एक रूप में देखा जा सकता है। अगर आज हम फूल महल को देखते हैं तो फूल महल की सजावट काफी पुराने जमाने की प्रतीत होती है। इस महल की

भीतरी दीवार जो काफी पुरानी लगती है। जिसको देखकर हमें पुरानी तारीख में जाने का एहसास होता है। अनूप सिंह तथा सुजान सिंह के शासन काल में इस महल में प्लास्टर पैनल लगवाये ताकि दर्पण के द्वारा अन्धकार के भाग को बांटा जा सके।[14] इस प्लास्टर पैनल पर बोतलों को कप-कटोरों द्वारा चित्रित किया गया है। जिन पर फूलों की सुन्दर चित्रकारी की गई है। छोटे फूल के आकार के दर्पण को भीतरी पैनल के ढाचें में रखा गया है, जो काफी सुन्दर लगता है। प्रत्येक दीवार के ऊपरी हिस्से पर नारी प्रतिमा के ऊपरी भाग को उभारकर चित्रित किया गया है।[15] दीवारों के कुछ भाग पर अर्ध यूरोपीय, अर्ध मुस्लिम पोशाक लगाई गई है, जो 1720-1780 ई. मुगल कलाकारों की कला को प्रदर्शित करते हैं।[16] जो सुजान सिंह, जोरावर सिंह तथा गजसिंह के समय को जाहिर करते है। इस महल में बने पहले दृश्य में प्राकृतिक फूलों की सजावट का सुन्दर कार्य किया गया है [17], जैसे मुगल लघु एल्बमों के हाशिये में पाये जाते हैं। संगमरमर प्लास्टर की पतली स्लैब में काट रखे है; जिनके नीचे कांच का दर्पण रखा गया है और जिसमें आभूषण रखे गये है। जो चमकते हुए फूलदान सा लगता है। आखिरकार बड़े दर्पण को दीवारों के डेड़ोस के केन्द्र में इस तरह प्रतिबिंबित किया गया है ताकि वह जमीन पर बैठी हुई महिलाओं द्वारा इस्तेमाल किया जा सके। कगंनी के चारों ओर एक फिरोज पेटिगं : कृष्ण लीला, नायक और रागमाला विषयों से सम्बन्धित हैं, जिसमें प्रत्येक विषय अलग दिखाई देता है।[18]

फूल महल, जो चन्द्रमहल की अपेक्षा बड़ा है, स्वंय तथा उसके आगे की साल, भित्ति-चित्रण की दृष्टि से भव्य कही जा सकती है। (चि. सं. 3) इसकी छत व फ्रिज पर चारों ओर रागमाला व नायिका के साथ कृष्ण लीला के विभिन्न प्रसंगों का चित्रण है। इनमें गोकूल में ग्वाल व ग्वालिन गाये हांक रहे हैं व कृष्ण-सुदामा, दान लीला, गायों के मध्य बांसुरी बजाते कृष्ण व ग्वालिनों द्वारा स्नान आदि उल्लेखनीय है। (चि. सं. 4) इसकी छत के शहतीर पर भी बादल और परियों को उड़ते हुए चित्रित किया गया है। फूल महल के अगले कक्ष, साल, में सभी हिन्दू देवी-देवताओं की चित्रित मूर्तियां लगी हुई हैं। इसी भांति इसके आगे झरोखों के पास छोटे से कमरे की छत के नीचे की फ्रिज पर शाही शिकार की सवारी, हाथी व अन्य जंगली जानवरों के शिकार के दृश्य चित्रित हैं और शेष भाग सुन्दर फूल-पत्तियों से सुसज्जित है। इसे विद्वान अवध शैली का चित्रण मानते हैं। (चि. सं. 5) 1750-1760 ई. का इन दोनों महलों का चित्रण मुख्य रूप से राजपूत शैली में ही हुआ है किन्तु कहीं मुगल शैली का भी अंकन है। (चि. सं. 6)

अनूप महल

यह बीकानेर किले का सर्वाधिक अंलकृत और सुशोभित है। अनूप महल महाराज अनूपसिंह का दरबार-ए-खास था। जहां वे विशिष्ट अतिथियों से मिला करते थे।[18] समूचा महल, छते तथा खम्भों पर सोने का जड़ाऊ काम हुआ है। इसलिए यह सबसे अलंकृत महल है। बीकानेर किले के सिंहासनों में से एक यहां आज भी है। दरवाजों पर भी सुन्दर चित्रकारी की गई है। अनूप महल की दीवारों पर की गई कलाकृतियों से 'संबधित जानकारी' दर्शाता एक फलक यहां लगाया गया है। इसके अनुसार, 17वीं शताब्दी के शासक करण सिंह गोलकुंडा अभियान पर गये थे। तब वहां के एक स्थानीय कलाकार ने उन्हें सोने से बनी कलाकृतियां भेंट में दी थी। उस कलाकृति को बीकानेर के अनूपमहल के ऊपर लगाया गया है[19], जो सम्पूर्ण सोने से बने स्तम्भ का आभास देता था। महाराज कर्णसिंह की जिज्ञासा को देखकर उस कलाकार ने उन्हें बतलाया कि वह जैसलमेर का मूल निवासी था। परन्तु कार्य हेतु उसका परिवार दक्कन में स्थापित हो गया। महाराजा करणसिंह ने उसे बीकानेर आमंत्रित किया व शाही संरक्षण प्रदान किया। इस कला शैली को उस्ता कला कहा जाने लगा।[20] इस कला शैली का प्रभाव 18वीं शताब्दी की बीकानेर चित्रकला शैली पर स्पष्ट दिखाई देता है। इस महल में एक लकडी़ की दीवार है, जिस पर सूक्ष्म चित्रकारी की गयी है।[21] राजस्थान में स्थित होने के कारण इन कलाकृतियों में काँच का भरपूर समावेश है। इस महल को बाहर से देखने पर यह सादा व श्वेत रंग का प्रतीत होता है।

कर्ण महल के पश्चात् अनूपमहल में दुर्ग की श्रेष्ठतम चित्रकारी है। इसकी छतें दीवारें और खम्भे सोने से जड़े हुए हैं। इस महल के अन्दरूनी भाग में लाल रंग की पृष्ठ भूमि में स्वर्ण-वर्ण के आलंकारिक पुष्प, पत्तियां एवं डण्ठल चित्रित किये गये हैं। रेखाओं में लय और गति का आभास होता है। कुछ स्थलों पर सागर-उर्मियों को पुष्प-गुच्छों के साथ चित्रित किया गया है। बीच-बीच में गहरे हरे रंग का जंगल सा दर्शाया गया है।

इस महल के द्वार–पट्टों पर राजपूत शैली में चित्रित की गई श्री कृष्ण लीला के दृश्य अंकित है। इनमें पूतना–वध, वासूदेव द्वारा बाल–कृष्ण को लेकर यमुना पार कराना, कृष्ण की बहन का कंस द्वारा मारा जाना और उसका विद्युत रूप में परिवर्तित होना, कृष्ण का अर्जुन को गीता–उपदेश तथा भागवत पुराण के अन्य कथानकों का अंकन मिलता है। एक अन्य द्वार–पट्ट पर गोचारण, वकासुर वधहयग्रीव–वध आदि चित्र–संयोजनों में अमानुशी शक्तियों के वृहद् आकार एवं भयावह आकृतियों का चित्रण है। इसके एक अन्य दरवाजे पर बरसाती तूफान में हंसों को उड़ते हुए दर्शाया गया। इसी महल के दो अलिन्दों में रंगीन कांच के टुकड़ों से ''राम–दरबार'' के भव्य चित्र दर्शनीय है। इन अलिन्दों का उक्त चित्रण राजपूत शैली की जयपुरी शैली में जयपुरिया चित्रकारों द्वारा किया गया अनुपम उदाहरण है। इस महल का भी भित्ति चित्रण उस्ता, दक्खनी व जयपुरिया कलाकारों द्वारा किया गया है। (चि. सं. 7)

चन्द्र महल

चन्द्र महल को महाराजा गंगा सिंह जी ने अपनी जैसलमेर की रानी चाँद कँवर, जो कि चन्दन महल कहलाती थी के नाम पर बनवाया। यह महल अपने नक्काशीदार संगमरमर के कंगूरों, दर्पणों और भित्ति–चित्र शैली के कारण विशेष रूप से लोकप्रिय है। चन्द्र महल इस भवन का सबसे आलीशान कमरा है। जिसमें मेहराबार छत तथा चार दरवाजे हैं, इसकी दीवारों में नक्काशीयुक्त आले तथा खिड़कियाँ है, इनकी चौखटों पर सजावट है तथा मार्बल की स्लेब्स लगी हैं। यह कमरा तीन तरफ से चन्दन महल की साल (चन्द्रमहल की साल) से घिरा है। इसके प्लास्टर पर करण महल तथा अनूप महल के समान फूल पत्तियाँ भी उकेरी गयी हैं। इस महल में देवताओं की मूर्तियां स्थापित की गई हैं, तथा उनकी चित्रकारी भी की गई है। जिसमें सोने और कीमती पत्थरों का जड़ाऊ अलंकरण किया गया है।

चन्द्रमहल में मुख्य कमरे में लकड़ी की छत पर फूल पत्तियों के अंकन की ही अधिकता है। केवल छत के नीचे कुछ उभारदार सालों पर एक स्त्री के मुंह का चित्रण है। किन्तु इस महल की साल जो चन्द्रमहल के तीन तरफ है पर फूल पत्तियों के अतिरिक्त, उसकी छत के नीचे बहुत सुन्दर लघु चित्रण हुआ है। यह चित्र शिकार के दृश्यों हाथी, घोड़ों के शाही जुलूस, पानी में उछल–कूद करती भील कन्याओं, राज्य के शासकों द्वारा शाही दरबार लगाने, जूनागढ़ स्वयं का अंकन, चौगान खेलने व कृष्ण लीला सम्बन्धी प्रसंगों व कुंज में राधा–कृष्ण प्रेम–प्रसंग, कृष्ण राधा द्वारा गो–दोहन, कृष्ण द्वारा कालिय–दमन, चीर हरण–रक्षण, ग्वालिनों द्वारा स्नान करने, गोवर्द्धन सम्बन्धित हैं। (चित्र सं– 1)

साल के शहतीरों तथा झरोखों के छत पर मधयुक्त नभ में अप्सराऐं दर्शायी गयी हैं। यही समस्त चित्रण राजपूत शैली का हैं। चन्द्रमहल के तीन दरवाजों में राधा–कृष्ण को दर्शाया गया है। यह राधा–कृष्ण दरवाजों के नाम से जाने जाते हैं। वैसे तो यह मुख्य रूप से राजपूत शैली के हैं किन्तु विद्वान इसमे कुछ मुगल शैली के तत्वों को देखते हैं। इन पर भगवान कृष्ण को कमल के रूप में दिखाया गया है, वहीं राधा को कृषक परिधान में दर्शाया गया है। इनके पीछे बादल व पहाड़ का अंकन है तथा सामने यमुना नदी में कमल के फूल खिले हैं व चिड़ियां उड़ रहीं है। साल के कुछ अन्य दरवाजों पर चित्रण कार्य महाराजा गजसिंह के बाद का है। (चित्र सं. 2)

बादल महल

बादल महल महाराजा सरदार सिंह जी को प्रसन्न करने हेतु बनवाया गया था। यह महल दुर्ग परिसर में सबसे अधिक ऊँचाई पर स्थित होने के कारण बादल महल कहलाता है। महल की दीवारों पर प्राकृतिक रंगो से शानदार चित्रकारी की गयी है। बीकानेर के स्थानीय मथेन चित्रकारों ने बादलों का चित्रण बड़े की रोचक ढंग से किया है। नभ में बादलों के श्वेत व श्याम वर्ण में चित्रित हैं एवं कड़कती बिजली के दृश्य बने हुए है। चित्र में ऐरावत पर आरूढ़ देवराज इन्द्र को भी दर्शाया गया है। छतों पर बादल और जिसमें नीले आकाशीय और सफेद रंगो का प्रयोग किया गया हैं। दीवारों पर ढ़लती वर्षा का अंकन स्वाभाविकता का भ्रम पैदा करता है। इसकी दीवारों पर कई सूण्डों वाले ऐरावत हाथी पर विराजमान इन्द्र देव दर्शाए गए है। इसमे सूखे मौसम में मानसून के आनन्द की कल्पना की गयी है।[22] महल के चित्रों में बारिश के मौसम में राधा और कृष्ण के प्रेम की अधीरता व पूर्णता को एक साथ बयान करने का प्रयास किया गया है। राजा व रानी इस महल में अपने अन्तरंग क्षण बिताते थे। महल में पहुँच कर आसमान के किसी बादल पर आने का आभास होता है। बादल महल में अनेको फव्वारें लगाए गए हैं जो थार मरूस्थल की गर्मी में ठण्डक देने का काम करते हैं।[23]

इन प्रमुख महलों के अतिरिक्त दुर्ग में रंगमहल, आनन्द बी जी महल (अनूप महल का ऊपरी भाग), सूरत विलास व खुली गैलरियाँ निर्मित करायी गयीं। महाराजा रतन सिंह के काल में बीकानेर कला के स्थान पर ब्रिटिश–यूरोपियन कला को महत्त्व दिया गया। डूंगर सिंह जी के काल में वास्तुकला अपने निम्नतम स्तर तक पहुँच गयी। यूरोपीय पुनर्जागरण शैली का प्रयोग किया गया। भित्ती चित्रों पर रेल, जहाज, घोड़ा–गाड़ी दर्शाए गए। महाराजा गंगासिंह ने गंग निवास में दरबार हॉल बनवाया। इनके काल में डूंगर निवास तथा छत्र महल बनें कुछ कमरें पुनर्सज्जित किए गए परन्तु सभी में यूरोपियन कला हावी रही।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध प्रत्र में अध्ययन के दौरान यह ध्यान में आया कि बीकानेर के शासकों का यहाँ उद्देश्य ना सिर्फ अपनी शानौ–शौकत का प्रदर्शन करना था बल्कि विभिन्न कलाकारों को प्रश्रय देकर कला को विलुप्ति से बचाना, कलाकारों को रोजगार व संरक्षण देना तथा कला को बढ़ावा देकर नये आयाम स्थापित करना भी था। एक शासक अपने शासन काल में जितना संभव होता, उसे अपनी रूचि के चित्रों से अलंकृत करा देता बाद मे उनके उत्तराधिकारी शेष बचे अथवा अतिरिक्त कार्य को अपनी रूचि के अनुसार अपने संरक्षित चित्रकारों से पूरा करवाने के प्रयत्न मे रहते थे। उनके महलों में पूर्व में हुए चित्रण का पुर्न उद्धार भी करवा दिया जाता था। बीकानेर में भित्ति चित्रों की समृद्ध परंपरा रही है। यहां पर मन्दिरों, मृत्यु स्मारकों (छतरियों) राज प्रसादों व सेठ––राहूकारों की हवेलियों में भित्ति–चित्रों का आलेखन बहुतायत से हुआ है। इस प्रकार का आलेखन बीकानेर राज्य के मुख्य भवनों के साथ राज्य के बड़े ठिकानों में भी हुआ है। प्राचीनता की दृष्टि से तो भित्ति चित्र के आलेखन में जैन धर्म का प्रभाव दर्शनीय है, परन्तु भागवत–धर्म का प्रभाव भी कम नहीं रहा है। यहां कुछ महलों को छोड़कर अधिकतर महलों में भित्ति चित्रण हुआ है। फलस्वरूप यहां के राज प्रसादों के भित्ति चित्रण में मुगल शैली, दक्खनी शैली व राजपूती शैली के चित्रांकन का व्यापक आलेखन मिलता है। यही नहीं मुगल चित्रकला में अवधी शैली व राजपूती शैली में बीकानेरी, जोधपुरी, जयपुरी व नागौरी शैली का अंकन भी हुआ है। जूनागढ़ दुर्ग में विभिन्न कलाओं को देख कर हम उसे एक संग्रहालय की संज्ञा दे सकते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 *खत्री, दीनानाथ, बीकानेर राज्य का संक्षिप्त इतिहास, रा.हि.ग्र.अका.,*

2 *दयालदास की ख्यात, दशरथ शर्मा (अनु.), म.मा.पु.प्र, मेहरानगढ़, भाग 2 पृ 122*

3 *ओझा, गौरीशकंर, बीकानेर राज्य का इतिहास, भाग–1, पृ. 55; मोहन लाल गुप्ता, बीकानेर : जिलेवार सांस्कृतिक इतिहास, पृ. 22*

4 *साक्षात्कार, डॉ. शिव कुमार भनोत, फोर्ट्स ऑफ इण्डिया, दिल्ली दूरदर्शन।*

5 *चन्नी, जी.एस. एवं सिंह ज्ञानदेव, निर्देशक, फोर्ट्स ऑफ इण्डिया, पूर्वोक्त।*

6 *उक्त*

7 *श्रीबड़े कमठाणे री बही, वि.सं. 1749, नं. 1*

8 *बड़े कमठाणे री बही, वि.सं. 1819, नं. 204*

9 *हरमन गोएट्ज, आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर बीकानेर स्टेट, पृ. 72*

10 *कोठ रे कमठाणे री बही, वि.सं. 1812–13, नं. 203*

11 *श्रीबड़े कमठाणे री बही, वि.सं. 1821, नं. 5*

12 *कोठ रे कमठाणे री बही, वि.सं. 1812–13, नं. 203*

13 *कमठाणे री बही, वि.सं. 1727, नं. 203*

14 *हरमन गोएट्ज, पूर्वोक्त, पृ. 73*

15 *कोठ रे कमठाणे री बही, वि.सं. 1819, नं. 24*

16 *वही, वि.सं. 1825, नं. 3*

17 *मोहन लाल गुप्त, पूर्वोक्त, पृ. 22*

18 *हरमन गोएट्ज, आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर बीकानेर स्टेट, पृ. 78*

19 *कोठ रे कमठाणे री बही, वि.सं. 1754–61, नं. 135*

20 *करणी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 136*

21 *कोठ रे कमठाणे रह बही, वि.सं. 1812, नं. 204*

22 *चन्नी, जी.एस. एवं सिंह ज्ञानदेव, निर्देशक, फोर्ट्स ऑफ इण्डिया, पूर्वोक्त।*

23 *एन इन्ट्रोडक्शन टू जूनागढ़ फोर्ट बीकानेर, पूर्वोक्त, पृ 3*

चित्र सं. 1

चित्र सं. 2

चित्र सं. 3

चित्र सं. 4

चित्र सं. 5

चित्र सं. 6

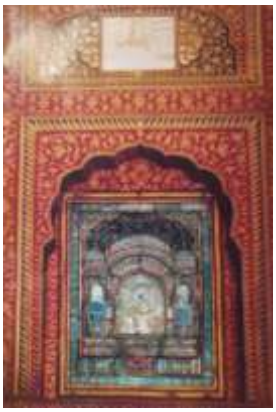

चित्र सं. 7

चित्र सं. 8

ISSN 2277-5587

अवध के शासकों का हरम (1722–1856 ई.)

डॉ. चित्रगुप्त
मोंठ, झांसी (उत्तर प्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

अवध के शासकों ने अपने हरम को मुगल बादशाहों की तर्ज पर सजाने का प्रयास किया था। यहां के नवाबों और बादशाहों ने अपने हरम में देश के विभिन्न हिस्सो से लाई गयीं सुंदर स्त्रियों के साथ-साथ विदेशी स्त्रियों को भी रखा था। केवल नवाब वजीर सफदरजंग को छोड़कर सभी शासकों के हरम में स्त्रियों की संख्या एक से अधिक होती थी। नवाब शुजाउद्दौला के हरम में सुंदर स्त्रियों की संख्या हजारों में थी। हरम की सुरक्षा और व्यवस्था शाही स्तर पर ही रहती थी। बेगमों को जागीरें भी प्रदान की गयीं थीं। शासक वर्ग ने बहु विवाह के चलन को बढ़ावा दिया जिससे स्त्रियों की सामाजिक स्थिति भोग्या की बन गयी थी। विधवा होने पर इन महिलाओं का जीवन कष्टमय बन जाता था।

संकेताक्षर : *ख्वाजासरा, नागा गोसांई, हरमसरा, इमामबाड़ा, सहन, भाबनमी तान, मसनद, मसनवी, दस्तरख्वान, तोशाखाना, दरोगा, कनीज, संखिया, तवायफ, खास महल, खुर्द महल, दीवान खाना।*

हरम शब्द की व्युत्पत्ति अरबी के 'मरहम' शब्द से हुई है। जिसका शाब्दिक अर्थ निजी, गुप्त या निषेध से है। वहीं कुछ विद्वान हरम शब्द की व्युत्पत्ति अरबी भाषा के शब्द हराम से मानते हैं। जिसका अर्थ पूजन स्थान से भी है। लेकिन कालांतर में हरम शब्द का प्रयोग अन्तःपुर के लिए किया जाने लगा था।[1] हरम शब्द की व्युत्पत्ति अरबी के हारूमा शब्द से भी मानी जाती है जिसका अर्थ होता है प्रतिबंधित, अनुमत या अवैध, साथ ही साथ पूरी तरह सुरक्षित और अलंघ्य।[2] साधारणतः इसका अर्थ घर के एक भाग के रूप में किया गया है या एक महल के अर्थ में जहां कि महिलायें रहतीं हों।[3] शाही परिवार की मां, बहन, पत्नियां, रखैलें इत्यादि को हरम में रखा जाता था। मुगलों के आने के पूर्व हिंदू राजा भी एक प्रकार का हरम रखते थे। हर्षवर्धन के समय में महिलाओं के रहने के स्थान को वासर, अंतःपुर या रनिवास कहते थे। संभवतः इन स्थानों में हिजड़े भी, अन्य पहरेदारों के अलावा रखे जाते थे।[4] मुगल बादशाहों के हरम में भी सैकड़ों स्त्रियां होतीं थी। भारत आने से पूर्व अवध के प्रथम नवाब सआदत खां बुरहानुल्मुल्क (1722–1739ई.) का विवाह उसके चाचा मीर मोहम्मद यूसुफ की पुत्री से हो चुका था। मीर मोहम्मद अमीन की पत्नी ने उसे पिता पर आश्रित रहने के लिए कुछ कटु व्यंग्य कर दिया। जिसे वह सहन नहीं कर सके और क्रोधित होकर भारत की ओर चल पड़े।[5] भारत आने के बाद सआदत खां ने तीन विवाह किये। उनकी भारत में पहली पत्नी दिल्ली के एक शाही अधिकारी कल्बे अली खां की पुत्री थी लेकिन उनकी इस पत्नी की मृत्यु विवाह के कुछ समय बाद ही हो गयी थी। दूसरी शादी सैयद तालिब मुहम्मद खां की पुत्री से हुई थी। तीसरी पत्नी अकबराबाद, आगरा के सूबेदार नवाब मुहम्मद नकी खां की पुत्री थी। जिससे उनका विवाह 1719ई में हुआ था।[6] सआदत खां बुरहानुल्मुल्क जब दिल्ली में रहते थे तो उनकी हरमसरा उनके दीवान खाने से जुड़ी हुई थी। जिसे एक दीवार अलग करती थी। अवध में सूबेदारी प्राप्त होने के बाद फैजाबाद में मिट्टी-गारे से बनी इमारत बनवायी थी। जिसमें महिलाओं के रहने के लिए छप्पर डले हुए मकान बनवाये गये थे। सआदत खां की तीसरी बेगम के साथ खदीजा खानम नाम की एक कनीज भी आई थी।[7] सआदत खां की उससे 5 पुत्रियां थी। जिनमें से एक सदरून्निसा बेगम का विवाह नवाब सफदरजंग से हुआ था। चार अन्य पुत्रियां थीं- हनीफा बेगम उर्फ नूरजहां बेगम, हुमा बेगम उर्फ बांदी बेगम, मुहम्मदी बेगम और आमीना बेगम।[8] नवाब वजीर सफदरजंग (1739–1754ई.) का एक ही

विवाह होने के कारण उनके हरम में स्त्रियों की संख्या एक ही थी।[9]

नवाब शुजाउद्दौला (1754–1775ई.) स्त्रियों के मामले में रंगीन मिजाज थे। अनेक गुणों के धनी शुजाउद्दौला को ऐशपरस्ती और विलासिता का चस्का भी था। उनके हरम में कई हजार स्त्रियां थीं, जिनमें से कुछ उनकी पत्नियां थीं तथा कुछ रखैलें थीं। शुजाउद्दौला का विवाह 1745ई. में मौतमुद्दौला की पुत्री उमतुल जोहरा से हुआ था जो बहू बेगम के नाम से प्रसिद्ध थीं।[10] बहू बेगम ही खास महल थी और शेष पत्नियों को खुर्द महल कहा जाता था। शुजाउद्दौला का एक अन्य विवाह 1770ई. में दुल्हन बेगम से हुआ था। नवाब को यदि कोई स्त्री पसंद आ जाती तो उसे प्राप्त करने के लिए वे तत्पर हो जाते थे। जब वे युवा हुए तो सफदरजंग की मृत्यु के बाद नवाब बना दिए गये। नवाब बनने के बाद उन्हें एक खत्री लड़की पसंद आ गयी। उस समय खास दोस्तों में नागा गोसाईं हिम्मत बहादुर थे। हिम्मत बहादुर ने अपने नागाओं को भेजकर रात में उस युवती को पलंग सहित उठवा लिया। जिस कारण तमाम व्यापारियों ने नवाब के इस कृत्य विरोध किया । इस घटना से फैजाबाद में हंगामा हो गया लेकिन शुजाउद्दौला की माता नबाव बेगम ने व्यापारियों को समझाकर शांत कर दिया।[11] इसी तरह के कई मामलों में नवाब बेगम को हस्तक्षेप करना पड़ा । शुजाउद्दौला की विलासिता को नियंत्रण करने के लिए नवाब बेगम ने तीन वेश्याओं को उनके हरम से निकाल दिया था। शुजाउद्दौला अपनी खास महल बहू बेगम का बहुत सम्मान करते थे। जब कभी शुजाउद्दौला रात कहीं और बिताते थे तो बहू बेगम को पांच हजार रूपया जुर्माने के रूप में पहुंचा देते थे। एक बार बहू बेगम ने उनकी सभी खुर्द महल की संतानों को अपने पास बुलाया। जिनकी संख्या देखकर बहू बेगम रोईं थीं।[12] शुजाउद्दौला के हरम में 800 बेगमात और 2 हजार दासियां थी।[13] सात सौ एक उनके महलात थीं। नवाब वजीर शुजाउद्दौला की इस विलासिता के चलते फैजाबाद की गलियां तवायफों और नाचने–गाने वालियों से भर गयीं थी।[14] इनके डेरे युद्ध अभियान पर भी साथ रहते थे। इन स्त्रियों में से प्रत्येक के पास दस–बारह हथियार बंद सैनिक भी होते थे। नवाब के साथ–साथ उनके दरबारी एवं अधीनस्थ भी इस विलासिता में डूबे थे। शुजाउद्दौला ने अपने हरम की सभी स्त्रियों के लिए जागीर और वजीफे नियुक्त कर दिए थे।[15] लेकिन शुजाउद्दौला की मृत्यु के बाद बहू बेगम के अतिरिक्त सभी स्त्रियों को आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा।[16]

नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु के बाद नवाब आसफउद्दौला (1775–1797ई.) गद्दीनसीन हुए। आसफउद्दौला का विवाह इन्तजामुद्दौला खानखाना की पुत्री शम्स–उन–निशा बेगम से हुआ था।[17] इन्हें नवाब बहू बेगम कहा जाता था।[18] इनकी जागीर नवाबगंज के पास प्रतापगंज में थी। जिसकी आय साठ हजार रूपये वार्षिक थी। नवाब आसफउद्दौला के हरम में भी कई सौ स्त्रियां और दासियां थीं।[19] नवाब बहू बेगम से नवाब के संबंध बहुत अच्छे नहीं थे। नवाब ने अपनी स्त्रियों के रहने के लिए मच्छी भवन के पश्चिम में हरमसरा बनवायी। इस हरमसरा में शीशमहल, खुर्दमहल और रंगमहल नामक तीन अलग–अलग इमारतें बनीं थीं। लेकिन खासमहल नवाब बहू बेगम मच्छी भवन में ही रहतीं थीं। नवाब वजीर आसफउद्दौला के पुत्र नवाब वजीर अली खां (1797–1798ई.) को विवाह अशरफ अली खां की पुत्री से 1792ई में हुआ था जो उनकी खास महल थीं।[20] लेकिन उनके हरम में कई स्त्रियां थीं। नवाब सआदत अली खां (1798–1814ई.) का विवाह अमीरूद्दौला की पुत्री से हुआ था। उनके हरम में भी अनेक स्त्रियां थीं। उनके कई वेश्याओं से संबंध थे। नवाब गाजीउद्दीन हैदर (1814–1827ई.) की कई पत्नियां थीं। उसने दो ईसाई स्त्रियों से भी विवाह किया था।[21] अपनी एक यूरोपीय बीबी के लिए उन्होंने विलायती महल बनवाया था। गाजीउद्दीन हैदर की मृत्यु के बाद उनके बेटे नसीरूद्दीन हैदर (1827–1837ई.) तख्त पर बैठे। नसीरूद्दीन हैदर का प्रथम विवाह मुगल सम्राट शाहआलम के पुत्र शाहजादा मिर्जा सुलेमान शिकोह की पुत्री रूकैय्या सुल्तान बेगम से हुआ था। ये सुल्तान बहू के नाम से प्रसिद्ध थी। विवाह पश्चात उन्हें 'मलिका ए दौरा' की उपाधि मिली थी।[22] ये बादशाह की खास महल थीं। सुल्तान बहू के अलावा बादशाह नसीरूद्दीन हैदर की कई पत्नियां थीं, जिनमें से मुख्य बेगमों के नाम इस प्रकार हैं– शर्फुन्निसा अफजल खान, मलिका–ए–जमानी, मुकद्दरे आलिया, ताजमहल, बादशाह महल, कुदसिया महल, बादशाह जहां, नूर महल, फूल महल, खुर्शीद महल, ऐशमहल, अब्बासी महल, मुमताज महल, आफताब महल, बराती

बेगम।[23] नसीरूद्दीन हैदर के संबंध एक बांदी सुखचैन से भी हो गये । जिसे 'अफजल महल' की उपाधि दे दी गयी। अफजल महल से नसीरूद्दीन हैदर का पुत्र मुन्ना जान था।[24] मुन्ना जान की देखभाल के लिए रखी गयी दासी हुसैनी पर भी बादशाह मेहरबान हो गये थे। उससे विवाह कर शाहजाद महल की उपाधि दे दी। 1827 में नसीरूद्दीन हैदर ने बादशाह बनने के बाद हुसैनी को मलिका-ए-जमानी की उपाधि दे दी।[25] मलिका ए जमानी ने एक समय तक बादशाह को अपने वश में कर लिया था जो वह चाहती थी, बादशाह वही करते थे। यहां तक कि उनके कहने पर बादशाह ने मुन्नाजान को अपना पुत्र मानने से इंकार कर दिया था और मलिका ए-जमानी के पूर्व पति से उत्पन्न पुत्र कैवाजहां को अपना पुत्र और उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। लेकिन नसीरूद्दीन हैदर का दिल अब मलिका जमानी की बांदी बिसमिल्ला खानम पर आ गया। उन्होनें बिसमिल्ला खानम से विवाह कर उसको 'कुदसिया महल' की उपाधि दे दी। कैवाजहां को भी अपने उत्तराधिकारी पद से हटा दिया।[26] लेकिन मलिका-ए-जमानी का शासन पर काफी प्रभाव था। नसीरूद्दीन हैदर बादशाह बेगम को सौतेली मां होने के बावजूद बहुत सम्मान करते थे। बादशाह बेगम शासन के विविध पक्षों पर नसीरूद्दीन हैदर को परामर्श देतीं रहतीं थी। लेकिन मलिका-ए-जमानी और बादशाह बेगम में आपस में बहुत कटुता थी। उसका कारण अवध की गद्दी थी। बादशाह बेगम मुन्ना जान को बादशाह बनाना चाहतीं थी। लेकिन मलिका-ए-जमानी अपने पुत्र कैवाजहां को। बादशाह बेगम ने इमामों की छठी मनाने और अछूतियों से उनका विवाह कराने की परंपरा डाल दी थी। जिसमें शाही खजाने से बहुत खर्च होता था। उस समय वजीर हकीम मेंहदी अली खां 'मुंतजामुद्दौला' थे। उनकी फिजूलखर्ची को मुन्तजामुद्दौला बन्द कराना चाहते थे। जिससे बादशाह बेगम वजीर से भी नाराज हो गयीं। नसीररूद्दीन हैदर से कह कर वजीर को बर्खास्त करवा किया। नसीरूद्दीन हैदर ने कुदसिया बेगम के रहने के लिए 1832ई में छतर मंजिल के सामने ''कोठी दर्शन विलास'' का निर्माण करवाया।[27] कुदसिया महल का सल्तनत के बंदोबस्त में भी दखल हो गया। बेगम को 20 हजार रूपये माहवार मिलते थे। इसके अलावा कई परगने भी जागीर में मिले थे। जब कुदसिया महल गर्भवती हुईं तो हरम की अन्य बेगमों की चालबाजी से गर्भपात हो गया। बादशाह को जब जानकारी हुई तो उन्होंने महलदारनी को मौत की सजा दे दी । जब दोबारा गर्भवती हुईं तो मलिका जमानी ने बादशाह के मन में यह बात बिठवा दी कि यह बच्चा उनका नहीं है। बल्कि कुदसिया महल अपने पूर्व पति से छुप-छुपकर मिलतीं थीं। बादशाह ने भी उस दासी की बात मानकर कुदसिया महल से मिलना जुलना बंद कर दिया। कुदसिया महल द्वारा अपनी वफादारी की सफाई देने के बावजूद जब बादशाह नहीं माने तो बेगम ने संखिया चाटकर अपनी जान दे दी।[28] कुदसिया महल की मौत के बाद बादशाह नसीरूद्दीन हैदर को आत्मग्लानि हुई। बेगम को जनाजा वड़ी धूमधाम से उठा। बेगम को इरादत नगर वाले कर्बला में दफन कर दिया गया था। बादशाह नसीरूदीन हैदर ने एक अंग्रेज लड़की मिस वाल्टर्स से 1827ई में 50 हजार नकद और लाखों का सामान देकर विवाह किया । इनको बेगम मुकद्दरे आलिया या मखदरह आलिया उपाधि दे दी गयी। उसे अंग्रेजी के साथ-साथ उर्दू, फारसी भाषाओं का ज्ञान भी था। बादशाह को भी उसने अंग्रेजी सिखाने प्रयास किया था। अंग्रेजी बेगम को मियागंज, रसूलाबाद जिला उन्नाव की जागीर दे दी गयी थी। मुकद्दरे आलिया पर जनरल इकबालुद्दौला से अवैध संबंधों को आरोप लगा जिसके चलते बेगम के प्रभाव में कमी आ गयी थी। 1837 में बादशाह नसीरूद्दीन हैदर की मृत्यु के बाद मखदरह आलिया बादशाह का हरम छोड़कर रेजीडेंसी में अपने परिवार के साथ रहने लगीं। इनके कोठी के साथ ही इनके द्वारा बनवाये गये मस्जिद एवं इमामबाड़े भी हैं लेकिन विधवा बेगम के गर्भवती होने की खबर फैली तो एक तेज असर अंग्रेजी दवा पीने से 12 नवंबर, 1840 को तबियत बिगड़ने से मृत्यु हो गयी।[29] इन्हें रेजीडेंसी में ही दफना दिया था। नसीरूद्उदीन हैदर ने एक हुसैनी नामक तवायफ की बेटी पर आसक्त होकर उससे विवाह कर लिया था और उसे खुर्शीद महल नाम दे दिया। खुर्शीद महल को नवाबगंज की 6 लाख रूपये वार्षिक आमदनी की जागीर प्राप्त थी। जब नसीरूद्ददीन हैदर बादशाह बने तो खुर्शीद के सिर पर अपना ताज रख दिया, जिससे बेगम का एक नाम ताजमहल भी प्रसिद्ध हो गया।[30] इसके साथ ही उन्हें 9लाख रूपये वार्षिक की सलवन (रायबरेली) की जागीर दे दी गयी। एक फ्रांसीसी महिला पर्यटक फैनी पार्क्स ने अपनी डायरी में ताजमहल की अद्वितीय सुंदरता की तारीफ की है। ताजमहल को बादशाह ने 6 हजार रूपये मासिक खर्च भी दिया था। लखनऊ में संगमरमर से नगीने वाली बारादरी का

निर्माण बेगम ताजमहल के लिए ही करवाया था। लेकिन बादशाह का मन इनसे उब गया और फिर से नयी बेगमों के हुस्न के दीवाने हो गये। अपनी बेकदरी से बेगम ताजमहल दुखी रहतीं थीं। बादशाह की मृत्यु के बाद नये बादशाह मुहम्मद शाह (1837–1842ई.) ने उनसे महल खाली करवा लिया था और शहर मे कोई दूसरा मकान रहने को दे दिया गया था। ताजमहल बेगम विधवा होने के बाद दूसरी बेगमों की तरह रूतबे से नहीं रह सकीं। विधवा स्थिति में उनके प्रेम संबंध मीर कल्ब हुसैन के साथ हो गये थे। जिससे उन्हें एक बच्चे का जन्म भी हुआ था। 1857 के गदर के समय अंग्रेजी सरकार को बेगम ने 39 हजार की धनराशि सहायता के रूप में दी थी और ब्रिटिश सरकार से अनुमति लेकर अपने प्रेमी मीर कल्बे हुसैन के साथ मक्का जाकर बस गयीं थीं।[31]

बादशाह मुहम्मद शाह के हरम में रहने वाली मुख्य बेगमें थीं[32]– खास महल मलिका आफाक, बेगम मलिका जहां, नवाब अमीर खानम, नवाब बजीर खानम, नवाब उमराव खानम, नवाब हुजूल खानम, नवाब नौरोजी खानम , नवाब ताल–उन–निसा बेगम साहिबा, चहेती बेगम, बादशाह खानम, बफाती खानम, नौबती खानम, हमीदा खानम। बादशाह मुहम्मद अली शाह की खास महल मलिका आफाक का वास्तविक नाम नवाब जहांआरा बेगम उर्फ खेतू बेगम था। ये दिल्ली के एक उच्च सामंती परिवार से थीं। खेतू बेगम से मिर्जा नसीरूद्दौला का विवाह 1798ई. में हुआ था। यहां उनको मलिका आफाक की उपाधि मिली। बेगम एक धार्मिक महिला थीं और कुरान शरीफ का नियमित पाठ करतीं थीं। मलिका आफाक के इकलौते बेटे अमजद अली शाह बाद में अवध के बादशाह बने। मलिका आफाक हुस्न बाग स्थित अपनी महलसरा में रहतीं थीं। मुहम्मद शाह ने बेगम के लिए 6 लाख रूपये दीन मेहर करके मलिका के नाम करके उनकी आमदनी बांध दी थी। बेगम के पास स्वयं की भी संपत्ति सात लाख रूपया थी। अपने पति मुहम्मद शाह के समय में मलिका आफाक शासन में हस्तक्षेप नहीं करती थीं लेकिन उनके पुत्र बादशाह अमजद अली शाह और पौत्र वाजिद अली शाह उनकी सलाह को गंभीरता से लेते थे। लखनऊ के मक्कागंज में मलिका आफाक ने एक कर्बला और एक छोटा इमामबाड़ा बनवाया था। 20 अक्टूबर 1850 को हैजे से मलिका आफाक की मृत्यु हो गयी।[33]उन्हें मक्कागंज के इमामबाड़े में दफन किया गया और मृत्यु के बाद हजरत मरियम मकानी की उपाधि दी गयी थी। मुहम्मद अली शाह की दूसरी पत्नी गरीब सैयदानी थीं। बादशाह बेगम के ही हाथ का खाना खाते थे। मलिका जहां बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति की थी। उन्होने अपनी आमदनी का अधिकांश भाग धार्मिक इमारतों को बनवाने और तीर्थ यात्राओं में जाने में खर्च किया। अपनी आमदनी से बादशाह मुहम्मद शाह के मरने के बाद अधूरी पड़ी जामा मस्जिद का निर्माण कार्य पूरा करवाया। ऐशबाग में कर्बला का निर्माण भी बेगम ने करवाया था। 1842ई. में बादशाह की मृत्यु के बाद मलिका जहां 20 वर्ष तक लखनऊ में ही रहीं । 1861ई. में लखनऊ छोड़कर कर्बला मुअल्ली को चलीं गयीं। मलिका जहां को बसरा में 11 तोपों की सलामी दी गयी थी। कर्बला शरीफ में मलिका जहां ने रोजे के दरवाजों पर चांदी चढ़वायी और जानशीन पर सोने की सुराहियां चढ़वायीं। ईराक में ही 1888ई. में उनकी मृत्यु हो गयी । उन्हें कर्बला में ही दफन किया गया था।[34]

बादशाह अमजद अली शाह (1842–1847ई.) का व्यक्तित्व संयमी, सादगी जैसे सदगुणों से भरा हुआ था। उनके हरम में खास महल नवाब मलिका–ए–किश्वर, फख्र–उस–जमानी, नवाब ताजआरा बेगम थीं। मलिका किश्वर के पिता अवध की सेना में रिसालदार थे। ताजआरा बेगम की मां बिलायती बेगम नवाब सआदत अली खां की पुत्री थीं। अमजद अली का प्रथम विवाह ताजआरा बेगम से हुआ था। विवाह के बाद उन्हें नवाब मलिका किश्वर फख्र–उस–जमानी का खिताब मिला था। मलिका किश्वर धार्मिक, सच्चरित्र और स्वाभिमानी महिला थीं। वे खास महल होने साथ–साथ बादशाह की प्रिय बेगम थीं। बेगम को गहने, वस्त्र ओर महंगे जवाहरात रखने का शौक था। वाजिद अली शाह इन्हीं के बेटे थे। वाजिद अली शाह जब अवध के बादशाह बने तो उन्हें मरियम मकानी की उपाधि दी गयी थी। जब अंग्रेज कंपनी ने अबध का हस्तांतरण किया तो मलिका किश्वर ने इसका बहुत विरोध किया । वे पानी के जहाज से अपने काफिले के साथ कलकत्ता से इंग्लैण्ड गयीं और 4 जुलाई, 1857 को इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया से मुलाकात की। विक्टोरिया मलिका किश्वर की इच्छा के अनुसार कुछ निर्णय कर पातीं उसके पहले ही बेगम हजरत महल ने अपने बेटे बिरजीस कद्र की ताजपोशी कर दी और 1857 का गदर भी शुरू हो गया।[35]

कश्मीरी मोहल्ले में बनी मस्जिद उन्हीं के द्वारा बनवायी गयी थी।

वाजिद अली शाह (1847–1856ई.) किशोरावस्था तक आते–आते लड़कियों, औरतों और तवायफों के शौकीन हो गये थे।[36] वाजिद अली शाह की कुल पैंसठ बेगमों की जानकारी विभिन्न लेखक देते हैं। उनकी प्रमुख बेगमें इस प्रकार थीं– खास महल आलम आरा बेगम आजम बहू साहिबा, रौनक आरा बेगम, अख्तर महल साहिबा, माशूक महल, सिकन्दर महल, हजरत महल, सरफराज महल, मुमताज महल, कैसर महल आदि। इन बेगमों से उत्पन्न संतानों की संख्या तकरीबन 80 थी, जिनमें 45 पुत्र और 35 पुत्रियां थीं।[37]

हरमसरा की निर्माण शैली अलग तरीके की नहीं होती थी, बल्कि नवाबों और महलों या भवनों के समान ही थी। एक वर्गाकार इमारत होती थी जिसके चारों ओर वर्गाकार दालान होती थी। इसके आगे पर्दे की दीवार और उसके सामने चबूतरा तथा चबूतरे के आगे सहन होता था। अधिकांशतः इन दालानों में दरवाजे प्रयोग नहीं किये जाते थे। इन्हीं इमारतों हरम की स्त्रियां तथा बेगमात रहतीं थीं। गर्मियों में दिन के समय तहखाने का प्रयोग किया जाता था। रात के समय में पूरे हरम की स्त्रियां तथा बेगमात बैठतीं थीं। सहन में एक शबनमी तान लगाकर फर्श बिछाया जाता था। प्रत्येक हरम की एक वरिष्ठ महिला तख्त या मसनद पर बैठती थी। उसके आसपास फर्श पर अन्य महिलायें बैठतीं जातीं थीं। शाही बेगमें और उनकी सेविकायें बहूमूल्य वस्त्र आभूषण पहनतीं थीं और श्रंगार के साथ रहतीं थीं। जिसका वर्णन मीर हसन की मसनवी 'सहरूल बियां' में किया गया है।[38] किसी समारोह के अवसर पर कीमती वस्त्र–आभूषण पहना करतीं थीं। मीर हसन ने शाही हरमसरा का मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है। मीर हसन के अतिरिक्त अन्य लेखकों ने भी शाही हरम का वर्णन अपनी रचनाओं में किया है।

18वीं सदी के अवध में पर्दा प्रथा का प्रचलन था। उच्च वर्ग की स्त्रियां सवारी बंद पालकियों में एक महल से दूसरे महल जातीं थीं। जिस पर छिटका पड़ा होता था। पालकियों और चौपहलों में भी स्त्रियां नकाब पहनकर बाहर निकलतीं थीं। आमजनमानस की स्त्रियां भी पर्दानशीं रहतीं थीं। बेगमों के साथ–साथ उनकी कनीजें भी गाना बजाने में पारंगत होती थीं। शेरो–शायरी की शौकीन भी बेगमें होती थीं। चिकन के कपड़े पर बारीक कढ़ाई का कार्य भी बेगमें अपना समय व्यतीत करने के लिए कर लिया करतीं थीं। हरमसरा की बेगमें पति के लिए भोजन तैयार करने की व्यवस्था करतीं थीं। उमरा और शुरफा वर्ग के यहां सभी लोग एक ही दस्तरख्वान पर भोजन करते थे। जब तक नवाब अपने शयनकक्ष में सोने न चला जाए या उसके महल से कहीं और आराम करने की सूचना ना मिल जाए तब तक बेगमें आराम करने अपने शयन कक्ष में नहीं जातीं थीं। शासक वर्ग के हरम में स्त्री कर्मचारियों की संख्या अधिक होती थी। जिनके अलग–अलग कार्य विभाजित थे। लेकिन विभिन्न अवसरों पर हरम की देखभाल बेगमात स्वयं करतीं थीं। बच्चों के कमरे और तोशाखाने अलग होते थे। बच्चों की देखभाल अन्ना करतीं थीं। लेकिन बच्चे के प्रति मां के जो कर्तव्य होते थे, उन्हें बेगमें जरूर पूरा करतीं थीं। नवाब वजीर से लेकर उमरा, शुरफा तथा जनसाधारण में मां को आदर सम्मान मिलता था। नवाब आसफ–उद्–दौला अपनी दादी का बहुत सम्मान करते थे। कई गंभीर विषयों पर हरम की बेगमों में मध्यस्थता भी करतीं थीं। मुगलकाल से ही हरम की सुरक्षा के लिए पवित्र स्त्रियों को दरोगा के रूप में नियुक्त किया जाता था। उमरा और शुरफा वर्ग में तलाक देने और स्त्रियों का पुनर्विवाह करने का प्रचलन नहीं था।[39] नवाब सफदरजंग की बेगम आलिया सदरजहां बेगम और नवाब वजीर शुजाउद्दौला की पत्नी बहूबेगम ने विधवा होने के बाद पुनर्विवाह नहीं किया था और अपना शेष जीवन फैजाबाद में रहकर बिता दिया।[40]

अवध के नवाबों और बादशाहों ने अपने हरम को मुगल बादशाहों की तर्ज पर सजाया था। पूरे देश के साथ–साथ विदेशों से भी सुंदर स्त्रियों को हरम में रखा गया था। हरम की मुख्य बेगमों को जागीरें प्रदान की जातीं थी। हजारों दासियों और शानों–शौकत को स्थायी रखने के लिए राजकोष को बहुत बढा भाग हरम में ही खर्च हो जाता था। इन शासकों ने बहु विवाह को प्रचलन में रखा। इनकी देखा–देखी शुरफा वर्ग और आमजन में भी बहू विवाह की लोलुपता बढ़ गयी। जिससे चलते स्त्रियों की सामाजिक स्थिति भोग्या की बन गयी थी। इस्लाम में मान्यता होने के बावजूद शासक और शुरफा वर्ग में विधवा विवाह नहीं होता था। जिससे विधवा होने पर इन स्त्रियों का जीवन कठिनाईयों में बीतता था।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ किशोरी प्रसाद साहू : मध्यकालीन उत्तर भारतीय सामाजिक जीवन के कुछ पक्ष (पटना, 1981), पृ. 224
2. वही
3. मलिक मोहम्मद जायसी का पदमावत, (साहित्य सदन, चिरगांव, झांसी), सर्ग 1, दोहा 49, पृ. 57
5. कमालुद्दीन हैदर : स्वानेहात-ए-सलातीन-ए-अवध, भाग-1, (लखनऊ,1879), पृ. 35
6. वही, पृ. 32
7. योगेश प्रवीन : ताजदारे अवध (लखनऊ,2003), पृ. 35
8. वही
9. गुलाम अलीः इमाद-उस-सआदत (लखनऊ,1897), पृ. 36
10. वही, पृ. 36, 118
11. श्री अवधवासीलाल सीताराम : अयोध्या का इतिहास, द्वितीय संस्करण, (इलाहाबाद, 2018), पृ.158 12, कमालुद्दीन हैदर : पूर्वोद्धृत, पृ. 90
13. ए0एल0 श्रीवास्तव : शुजाउद्दौला ऑफ अवध, भाग-1, (आगरा,1961,1974), पृ. 299
14. अब्दुल हलीम 'शरर' : पुराना लखनऊ (गुजिश्ता लखनऊ, हिंदी अनु. नूरनवी अब्बासी, नई दिल्ली, 1971) , पृ0 167
15. विलियम हुई : मिमायर्स ऑफ देहली एण्ड फैजाबाद, (इलाहाबाद,1888-89) पृ. 30
16. वही, पृ. 5
17. कमालुद्दीन हैदर : पूर्वोद्धृत, भाग-1, पृ. 81
18. वही, पृ. 5
19. योगेश प्रवीन : पूर्वोद्धृत, पृ. 69
20. वही, पृ. 70
21. नजमुल गनी : तारीखे अवध, भाग-3 (लखनऊ, 1976), पृ. 114-115
22. योगेश प्रवीन : पूर्वोद्धृत, पृ0 101
23. वही, पृ. 116
24. वही, पृ. 102
25. वही
26. वही,
27. वही, पृ. 107
28. वही, पृ. 107-108
29. वही, पृ. 119-121
30. वही, पृ. 122
31. वही, पृ. 124
32. वही, पृ. 144
33. वही, पृ. 145
34. वही, पृ. 146
35. वही, पृ. 150
36. अब्दुल हलीम 'शरर' : पूर्वोद्धृत, पृ. 48, 51
37. योगेश प्रवीन : पूर्वोद्धृत, पृ. 164-165
38. अब्दुल बारी आसी : मजमुआ मसनवियात-ए-मीर हसन, (लखनऊ,1945) पृ. 20-31, 55-58, 61-64, 72-75
39. मिर्जा मुहम्मद हसन 'कतील' : हिफ्त-ए-तमाशा (लखनऊ,1920) पृ. 38
40. नजमुल गनी : पूर्वोद्धृत, भाग-2, पृ. 221, 241, 246-47, 335-344

अर्न्तराज्यीय असंगठित श्रमिक प्रवसन सामाजिक विवेचना

डॉ. दिनेश गुप्ता
सहायक आचार्य, राजकीय महारानी सुदर्शन कन्या महाविद्यालय, बीकानेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में वर्तमान परिदृश्य में वैश्विक महामारी कोविड–19 के कारण भारत में आ रही उस सामाजिक समस्या को विवेचित किया गया है जिसने अंसगठित क्षैत्र के अन्तराजीय श्रमिक प्रवसन को समाज के सामने रखा। एक राज्य से दूसरे राज्य में श्रमिक का प्रवसन क्यों होता है जब कुछ अपवादों को छोड़कर यह देखा गया कि प्रत्येक राज्य से श्रमिकों का प्रवसन लगभग समान ही आता है क्या राज्य श्रमिकों को उनके मूल स्थान पर रोजगार उपलब्ध नहीं करवा सकता या श्रमिक कल्याण राज्य सरकारों का विषय नहीं है, जबकि श्रमिक प्रवसन के लिए राजनीतिक कारक भी प्रभावी है जिनकी अवहेलना की जाती रही है क्योंकि भारत में राजनीतिक क्षेत्र को पुण्य का क्षेत्र मनवाया जाता रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के अर्न्तराजीय प्रवसन के कारकों की ऐतिहासिक सामाजिक विवेचना की गई है।

संकेताक्षर : *उपनिवेशवाद, उत्तर उपनिवेशवाद (वैश्वीकरण), श्रमिक, प्रवासी श्रमिक, असंगठित क्षेत्र।*

चीन से विश्व में फैला कोविड उन्नीस, इक्कीसवीं शताब्दी की सबसे विनाशकारी घटना है जिसे आज तक के मानव सभ्यता के इतिहास की भी सबसे विनाशकारी घटना माने जाने लगा है, इस वैश्विक महामारी ने समस्त सामाजिक परिवेश को परिवर्तित करने की आवश्यकता उत्पन्न कर दी है। भारत में भी इस विनाशकारी वायरस का प्रभाव फरवरी, 2020 से शुरू होता है। इस विनाशकारी वायरस से अनेक सामाजिक–सास्कृंतिक समस्याऐं उत्पन्न होती है जिनमें से एक नयी सामाजिक समस्या है अर्न्तराजीय श्रमिक प्रवसन की है। अपने दूरी के पैमाने पर यह एक अल्प कालिक सामाजिक समस्या दिखती है परन्तु ऐसा है नहीं। सामाजिक दूरी एवं अपने ही घरों पर रहने की आवश्यकता ने श्रमिकों के लिऐ कार्य स्थल पर एक नये पर्यावरण की आवश्यकता को बल दिया है। औद्योगिक समाजशास्त्र के लिए यह विषय वर्तमान परिदृश्य में विशेष प्रासंगिकता का हो जाता है। मानव सभ्यता के इतिहास से ही उत्पादन एक महत्वपूर्ण सामाजिक आर्थिक प्रक्रिया रही है और जिस मानव के साथ यह प्रक्रिया मुख्यतः जुड़ती है उसे श्रमिक की संज्ञा दी जाती है।

यह एक सामान्य सिद्धान्त है कि परिवहन के साधनों के विकसित होने से पूर्व विश्व की सभी सभ्यताऐं नदियों के किनारों पर ही विकसित हुई है जिसका मूल कारण नदियों में बहने वाला जल रहा है जो कि मानव जीवन का आधार है परन्तु आधुनिक परिवहन के साधनों के विकसित हो जाने के कारण मानव ने अन्य भौगोलिक प्रदेशों में भी जीवन यापन करना सीख लिया अर्थात अपने निवास स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर जीवन व्यतीत करना। इससे पूर्व जीवन जीने की विपरित परिस्थिति होने पर ही मानव प्रवसन करता था। वर्तमान परिदृश्य में मानव ने व्यापार अर्थात आर्थिक लाभ को प्रवसन का आधार बनाया है सोहलवीं शताब्दी में ब्रिटेन के द्वारा सम्पूर्ण विश्व में आर्थिक लाभ के लिए प्रवसन किया गया जिसे उपनिवेशवाद की अवधारणा उत्पन्न हुई । यह उपनिवेशवाद आगे चलकर भूमण्डलीकरण से जाना गया इसलिए इसे उत्तर उपनिवेशवाद भी कहते है। यह सब कारक राष्ट्रीय प्रवसन के अन्तर्गत आते है लेकिन भारत में अन्तरार्जीय प्रवसन को भी जन्म देते है। एम.एन.श्रीनिवास की पश्चिमीकरण की अवधारणा भी अर्न्तराजीय प्रवसन का उदाहरण प्रस्तुत करती है श्रीनिवास का मानना था कि ब्रिटिश शासन का भारत में यह परिणाम रहा कि आधुनिक परिवहन के साधन एवं उद्योग भारत में विकसित हुए जिसने अर्न्तराजीय प्रवसन

को जन्म दिया।

औद्योगीकरण के साथ-साथ श्रमिकों के प्रवास की अवधारणा भी सामने आने लगी क्योंकि उद्योग एवं अन्य तन्त्रों में श्रमिकों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी थी जब अन्य राज्यों से श्रमिक उद्योगों के काम के लिए आने लगे तो इसे अर्न्तराजीय प्रवसन कहा गया तथा श्रमिकों को प्रवासी श्रमिक। जिस किसी भी राज्य में औद्योगिक प्रतिष्ठान स्थापित होते है वहां श्रमिकों की आवश्यकता एका-एक बढ़ जाती थी जिसकी पूर्ति स्थानीय स्तर पर नहीं होने पर अन्य राज्यों से की जाती थी इस प्रकार एक ऐतिहासिक चरण में श्रमिकों का प्रवसन भारत में शुरू होता है। उद्योगो के विकास के साथ ही नगरीकरण की प्रक्रिया भी निरन्तर चलती जिसका परिणाम यह होता है कि संगठित क्षेत्र के साथ ही असंगठित क्षेत्र में भी जन्म लेता है जिसमें लघु एवं मध्यम उद्योग साथ ही मौसम के अनुरूप संचालित होने वाले लघु एवं मध्यम उद्योग विकसित होते है जिसमें भी श्रमिकों की आवश्यकता होने लगती है इस आवश्यकता ने अर्न्तराजीय श्रमिक प्रवसन को तेजी से बढ़ाया है।

इस सन्दर्भ में यहां यह उल्लेखित करना आवश्यक समझता हूँ कि भारत में एक राज्य से दूसरे राज्य में श्रमिक प्रवसन करते है तथा जिस राज्य में श्रम की आवश्यकता होती है वहा श्रम का भुगतान अधिक होता है और श्रमिक उस राज्य में प्रवसन करता है। लेकिन मार्च एवं अप्रैल माह में जब सम्पूर्ण भारत में लॉक डाउन (अर्थात अतिआवश्यक सेवाओं के अतिरिक्त सभी सेवाओं को पूरी तरह से बन्द) लगाया गया तो श्रमिकों के अपने मूल स्थान पर लौटने की समस्या सामने आती है ये वे श्रमिक है जो अपने राज्य से दूसरे राज्य में असंगठित क्षेत्र के कार्य हेतु आये थे। संगठित क्षेत्र में श्रमिक को पुनः अपने राज्य मे जाने की समस्या नहीं आती है क्योकि संगठित क्षेत्र का अपना एक आधारभूत ढांचा होता है जो उन्हें अनायास ही बेरोजगारी की तरफ नहीं जाने देता है। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के साथ जीवन यापन की समस्याऐं आने लगती है।

महानगरों में तो सभी राज्यों से श्रमिक आते है क्योंकि उन्हे श्रम का भुगतान अधिक मिलता है परन्तु इन महानगरों की जगह जब राज्यों के आधार पर विशेषकर राजस्थान राज्य में श्रमिकों को प्रवसन आंकड़ों का विश्लेषण किया गया तो यह संख्या लगभग समान आती है

दिनांक 12.05.2020 को राजस्थान पत्रिका के एक लेख में राजस्थान राज्य से जाने वाले एवं राजस्थान राज्य में आने वाले पंजीकृत श्रमिकों की संख्या का विवरण प्रकाशित हुआ जिसमें राजस्थान आने वाले कुल रजिस्टर्ड श्रमिकों की संख्या 1002826 थी तथा राजस्थान से अन्य राज्यों में जाने वाले श्रमिकों की संख्या 853411 थी

प्रदेश	आने वाले	जाने वाले	प्रदेश	आने वाले	जाने वाले
अंडमान निकोबार	154	96	केरल	14734	3003
आन्ध्रप्रदेश	41537	7496	लक्षद्वीप	2	23
अरूणाचल प्रदेश	358	104	मध्यप्रदेश	23220	67825
असम	4049	3501	महाराष्ट्र	377922	47617
बिहार	6433	257692	मणिपुर	123	283
चंडीगढ़	1075	626	मेघालय	475	206
छत्तीसगढ़	5429	8381	नागालैण्ड	475	403
दादर	3100	723	उड़ीसा	4012	4306
दमन	1515	306	पुण्डीचेरी	586	135
दिल्ली	29582	12377	पंजाब	10194	9294
गुजरात	231062	42460	सिक्किम	103	94
हरियाणा	19072	13536	तमिलनाडु	75834	11987
हिमाचल प्रदेश	1715	1805	त्रिपुरा	209	172
जम्मू-कश्मीर	2464	3278	उत्तरप्रदेश	20722	230556
झारखंड	1744	26301	उत्तराखंड	2861	9046
कर्नाटक	109398	14557	पश्चिम बंगाल	12667	75222

इन श्रमिको के राजस्थान राज्य में आने व जाने की सारणी का विश्लेषण करने से यह ज्ञात हुआ कि किस राज्य मे श्रमिक अधिक गये तथा किस राज्य से श्रमिक अधिक आये उदाहरण के लिए महाराष्ट्र राज्य से राजस्थान आने वाले श्रमिको की संख्या 377922 थी तथा राजस्थान राज्य से महाराष्ट्र जाने वाले श्रमिको की संख्या 47617 थी संख्या में लगभग तीन लाख तीस हजार का अन्तर है तो यह अन्तर महाराष्ट्र राज्य में अत्यधिक श्रम की आवश्यकता को सामने रखता है इसी तरह गुजरात राज्य से राजस्थान आने वाले श्रमिको की संख्या 231062 है और राजस्थान से गुजरात जाने वाले श्रमिकों की संख्या मात्र 42460 है महाराष्ट्र की तरह ही गुजरात की भी परिस्थितियां भी एक समान है।

राजस्थान से अन्य राज्यों में जाने वाले श्रमिक तथा राजस्थान में अन्य राज्यों से आने वाले श्रमिकों की संख्या कुछ अपवादों को छोड़कर लगभग समान है। ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब संख्या समान है तो श्रमिकों का प्रवसन क्यों होता है श्रमिक अपने राज्य में ही श्रम क्यों नहीं करता है, श्रमिकों के प्रवसन के पीछे कौनसे ऐसे कारक है जो उन्हें एक राज्य से दूसरे राज्य में प्रवसन करने के लिए मजबूर करते है श्रमिकों का प्रवसन कई सामाजिक समस्याओं को भी जन्म देता है जिनमे व्याभिचार, अपराध, वेश्यावृत्ति, झुग्गी बस्तियाँ कुपोषण आदि। ऐसे में यह विषय सामाजिक विज्ञानों की लिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

शोधकर्त्ता जब इस तथ्य को लेकर बीकानेर जिले से राजस्थान के बाहर जाकर कार्य वाले श्रमिकों से तथा बीकानेर जिले में अन्य राज्यों से आकर कार्य करने वाले श्रमिकों से सामाजिक विवेचना के लिए तथ्य संकलन के आधार पर अपना शोध करता है। शोध के लिए बीकानेर जिले का चुनाव करता है जिसका आधार यह रहा कि बीकानेर जिलें की कुल जनसंख्या कम है तथा यहां कोई विशेष औद्योगिक ईकाई संचालित नहीं है जिससे प्रवसन के कारकों पर विशेष प्रभाव हों।

बीकानेर जिला राजस्थान में भौगोलिक दृष्टि से रेगिस्तानी एवं गर्म जलवायु वाला जिला है जिसे इन्दिरा गांधी नहर परियोजना से मिलने वाले जल के सहारे जीवित रखा गया है । 2001 में इस जिले का जनघनत्व 59 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. था तथा 2011 में इस जिले का जनघनत्व 78 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है बीकानेर जिले की कुल जनसंख्या राजस्थान की कुल जनसंख्या का 3.45 प्रतिशत है बीकानेर जिले में मुख्य श्रमिक ईकाईयाँ भुजिया, पापड़ एवं रसगुल्ले की लघु एवं मध्यम औद्योगिक ईकाइयों से सम्बधित है बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठान यहां अधिक संख्या में स्थापित नहीं है। इसके अलावा सुथार समुदाय के लोग लकड़ी एवं लोहे के कार्य में विशेष कुशलता रखते है जिसकी लिऐ यह समुदाय विशेषकर महाराष्ट्र में प्रवसन करता है वहां लकड़ी की सुगमता बीकानेर जिले की अपेक्षा अधिक है साथ ही श्रम का उचित मूल्य भी प्राप्त होता है।

बीकानेर जिले से प्रतिदिन संचालित होने वाली रेल सेवा में हावड़ा, मुम्बई, नई दिल्ली एवं हिमाचल प्रदेश राज्यों को जोड़ती है इसके अतिरिक्त साप्ताहिक रेल सेवा में चेन्नई, कोलकात्ता, पुरी एवं बिलासपुर है कम जनघनत्व होते हुए भी अन्य राज्यों से बीकानेर का यह रेल सम्पर्क श्रमिक प्रवसन के महत्व को भी रखता है, यहाँ यह भी उल्लेखित करना आवश्यक है कि न केवल इन राज्यों में बीकानेर से श्रमिक जाते है अपितु राजस्थान राज्य के अन्य जिलों से भी श्रमिक अन्य राज्यों में जाते है साथी अन्य राज्यों की श्रमिक भी राजस्थान में आकर श्रम कार्य में लगते है।

श्रमिक का उद्भव कृषक वर्ग से ही होता है। समाजशास्त्री अक्षय रमण देसाई ने कृषक एवं श्रमिक को एक दूसरे का पूरक माना है, कृषि जोतों का सिकुंड़ना एवं मानसून की कृषि पर निर्भरता ने कृषक को श्रमिक बनाया है पहले ये कृषक अपने नजदीक के नगर में कोई न कोई श्रम कार्य में लगते है तथा धीरे–धीरे अपने श्रम की उपयोगिता एवं अन्य सामाजिक एवं आर्थिक कारकों के कारण इन्हें दूसरे राज्यों में जाना पड़ता है जिससे ये श्रमिक से प्रवासी श्रमिक की श्रेणी में आ जाते है अधिकतर दूसरे राज्यों में जाने वाले श्रमिकों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती है। सम्पन्न आर्थिक स्थिति के श्रमिक कुशल श्रमिक बनते है जो संगठित क्षेत्र से जुड़ते है अतः अंसगठित श्रमिक के सन्दर्भ में प्रवसन कारकों की विवेचना की गई है।

1. असंगठित क्षेत्र से जुड़े श्रमिकों के परिवारों पर ऋण का बोझ था तथा जिस व्यक्ति से ऋण लिया गया थे वे श्रमिकों का सामाजिक स्तर पर कमजोर करते थे ऐसे में ये श्रमिक राज्य के बाहर श्रम के लिए प्रवसन कर जाते है। श्रमिक यदि अपने मूल स्थान पर कोई लघु

व्यापार करना चाहता है तो यह ऋणग्रस्तता उसे व्यापार भी नहीं करने देती है उदाहरण के लिए यदि वह कोई दुकान या हस्तकला का कोई कार्य करता है तो सामाजिक सम्बन्धों में उसे वस्तु का उचित विक्रय मूल्य नहीं मिल पाता है साथ ही लोग वस्तु तो ले जाते है तथा मूल्य नहीं देते है ऐसे में श्रमिक का व्यापार लाभ नहीं दे पाता तथा वह और ऋणग्रस्त हो जाता है।

2. एक सामाजिक कारक यह भी उभर कर सामने आया कि श्रमिक अपने मूल स्थान में श्रम के कार्य में परिवार के उत्तरदायित्वों के कारण पूर्ण समय नहीं दे पाता है जिससे उसे अपने कार्यस्थल से अवकाश लेना पड़ता है तथा यह अवकाश उसके मानदेय को कम करता है, ऐसे में ऋण का केवल ब्याज चुकाया जा सकता है मूल धन को कम नहीं किया जा सकता था।

3. परिवार के अतिरिक्त भी श्रमिक की अन्य सामाजिक भूमिकाऐं भी उसे अपने श्रम से दूरी बनाने के लिए भी उत्तरदायी है कारण यह है कि गांव या नगर में रहकर अपने सामजिक सरोकार से दूरी नहीं बना पाता यदि बनाने के प्रत्यन करता है तो उसे सामाजिक उपेक्षा का पात्र बनना होगा ऐसे में यदि वह दूसरे राज्य में श्रम के लिए जाता है तो न केवल समाज की उपेक्षा से बचता है अपितु अपने श्रम मानदेय को भी मजबूत रखता है।

4. अधिकतर श्रमिकों से उनके दूसरे राज्यों में श्रम की स्थिति एवं सामाजिक पर्यावरण के बारे में जाना गया तो यह तथ्य सामने आया कि श्रमिक दूसरे राज्यों में अपनी सामाजिक भूमिकाओं के प्रति उदासीन होते है और अपने श्रम पर ही सम्पूर्ण ध्यान केद्रित करते है इससे उनके मालिक भी उनके प्रति सहयोगी भावनाऐं रखते है । श्रमिक की मनोवृत्ति केवल अधिक से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त करना है जिससे अपने ऋण को उतारा जा सके तथा परिवार का भरण पोषण उचित रूप से किया जा सके।

5. श्रमिक के जब दूसरे राज्य में श्रम के लिए जाने पर उनके परिवार की देखभाल से सम्बधित तथ्य का अध्ययन किया गया तो यह तथ्य निकल कर सामने आया कि जब श्रमिक अन्य राज्य में प्रवसित हो जाता है तो अपने परिवार को गांव में रखता है तथा ग्रामीण परिवेश में उनका परिवार लघु कार्य (सिलाई, पशुपालन, कृषि मजदूरी एवं हस्तकला के कार्य) में संलग्न हो जाता है जिससे परिवार का आर्थिक भार कम हो जाता है । लगभग 35 प्रतिशत श्रमिकों ने अपने परिवार को बीकानेर शहर में रखा बीकानेर शहर में उनका परिवार अधिकतर पापड़ बटाई के कार्य में लगा हुआ था ये वे श्रमिक थे जिनकी गांव में भूमि नहीं थी तथा उनकी दो या तीन पीढ़ीयाँ शहर में ही निवासरत थी।

6. परिवार में मुखिया की परिस्थिति के सन्दर्भ में अध्ययन किया गया तो यह तथ्य सामने आया कि श्रमिक अपने परिवार के बुजुर्ग सदस्यों को अपने परिवार का संरक्षक अपनी अनुपस्थिति में मानकर प्रवसन करता है।

7. एक महत्तवपूर्ण सामाजिक कारक श्रमिक प्रवसन का यह भी सामने आया कि जब श्रमिक से जब प्रवसन के लिए अपने ही जिले या राज्य में कार्य के विकल्प के बारे में प्रश्न किया गया तो उन्होनें दबे स्वर में सामाजिक प्रतिष्ठा को भी एक कारक माना है श्रमिक परिवारों का कहना है कि अपने मूलस्थान में हमें अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के अनुरूप श्रम कार्य चुनना पड़ता है जबकि अन्य राज्यों में सामाजिक प्रतिष्ठा जैसे कोई कारक हमारे सामने नहीं होता है हमें केवल श्रम से होने वाली आय से सरोकार रखना होता है।

8. श्रमिकों के लघु एवं मध्यम औद्योगिक प्रतिष्ठानों के प्रबन्धकों से जब श्रमिक प्रवसन के सम्बन्ध में जानकारी चाही गई तो उनका कहना था कि अन्य राज्यों से आने वाले श्रमिक स्थानीय श्रमिकों की तुलना में राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न नहीं होते है जिससे औद्योगिक प्रतिष्ठान के संचालन में समस्याऐं नहीं आती है स्थानीय श्रमिक किसी न किसी कारण से राजनीतिक प्रभावों में होते है तथा राजनीतिक प्रभावों के कारण वह औद्योगिक प्रतिष्ठान में विवादों का जन्म देने लग जाते है साथ ही अपने कार्य को भी पूरा नहीं करते है जिससे उत्पादन पर विपरित प्रभाव पड़ता है। औद्योगिक प्रतिष्ठानों के प्रबंधको का यह कहना है कि औद्योगिक लोकतन्त्र के कारण आज किसी श्रमिक का शोषण किया जाना संभव नहीं है श्रमिक अपने अधिकारों के प्रति सजग होते है लेकिन राजनीतिक पर्यावरण की प्रतिष्ठान में उपस्थिति प्रतिष्ठान को नुकसान पहुँचाती है।

9. युवा वर्ग (इस वर्ग के अन्तर्गत 18 से 25 आयु वर्ग के श्रमिकों को सम्मिलित किया गया है) के असंगठित श्रमिकों के सम्बन्ध में प्रबन्धकों से यह जाना गया कि उन पर न तो कोई पारिवारिक ऋण है

और न ही कोई जिम्मेदारी है तो युवा वर्ग के श्रमिकों का प्रवसन के पीछे क्या कारण बनते है । प्रबन्धकों द्वारा अवगत कराया गया कि अर्न्तराजीय श्रमिक इन्हें अपने साथ लेकर आते है क्योंकि उन्हें इनकी आवश्यकता रहती है वे इन्हें मादक द्वव्य व्यसन के प्रति अग्रसर करते है क्योंकि मूल स्थान पर परिवार में इन्हें इनके उपयोग की मनाही होती है साथ ही इन पर खर्च होने वाली राशि की व्यवस्था करना भी अपने आप में एक समस्या रहती है दूसरे राज्य में इन दोनों कारकों से ही बचा जा सकता है, इस आयुवर्ग के श्रमिकों से जब इस सम्बन्ध में सूचनाऐं चाही गई तो इस युवा वर्ग के श्रमिकों ने सीधे-सीधे इसे स्वीकार नहीं किया परन्तु इन कारकों को प्रभावी माना। इस आयु वर्ग का श्रमिक अपने प्रति विचारवान नहीं होता है और न हीं वह इतना सोच पाता है कि सामाजिक जीवन के किस आधार को वह अचेतन मन से अपना रहा है तथा यह आधार धीरे-धीरे उसे अपने मूल स्थान से दूर कर देता है जिसकी आवश्यकता उसे कभी थी हीं नहीं।

इस आयु वर्ग के साथ यही कारक इन्हें प्रवासी श्रमिक बनाते है कम आयु में इनकी परिवार से दूरी जीवन भर इन्हें परिवार से दूर कर देती है तथा श्रमिक का प्रवसन निरंतर चलता रहता है जिसकी समाज में आवश्यकता कम होती है लेकिन बड़े पैमाने पर श्रमिकों का असंगठित क्षैत्र में प्रवास सामने आता है जिसे कई सामाजिक-सास्ंकृतिक समस्याओं का जन्म होता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *नौरोजी, दादाभाई : ''पावर्टी एण्ड अनब्रिटिश रूल्स ऑफ इंडिया'', लंदन (1876)*
2. *मूर, विल्वर्ट ई. : ''इम्पैक्ट ऑफ इंडस्ट्री'' न्यू देहली, प्रिंटिंग हाल (1968)*
3. *अमीश, माइकल जे, : ''मार्डनाइजेशन एण्ड सौश्यल स्ट्रक्चर फैमिली, कास्ट एण्ड क्लास इन जमशेदपुर'' ई. पी.डब्ल्यू 4, 1217-1224, (1969)*
4. *खरे पी.सी. एवं सिन्हा वी.सी. : ''औद्योगिक समाजविज्ञान'' नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, (1986)*
5. *कुमार, कृष्ण : ''फ्रोम पोस्ट इन्डस्ट्रीयल टू पोस्ट मार्डन'' सोसायटी जयपुर, रावत पब्लिशिंग (2005)*
6. *सिंह, योगेन्द्र : ''कल्चर चेन्ज इन इंडिया'' जयपुर, रावत पब्लिशिंग (2005)*
7. *बेतई, आन्द्रे : एसे इन कम्परेटिव सोश्योलोजी, दिल्ली आक्सफोर्ड यूनिर्वसिटी प्रेस, (1987)*
8. *शर्मा, रामविलास : मानव सभ्यता का विकास, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर, (1956)*
9. *श्रीनिवास, एम.एन. : ''आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन'' दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, (1998)*

मारवाड़ की बहियों में रंगाई – छपाई के संदर्भ

डॉ. अल्का रानी
पी.जी.टी, डी. एम स्कूल, रीजनल इंस्टिट्यूट ऑफ एजुकेशन,
एन.सी.ई.आर.टी., मैसूर (कर्नाटक)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

मानव का रंगों से गहरा नाता आदिकाल से रहा है। रंग उसके जीव की सभी परिस्थितियों से जुड़े हुये हैं चाहे सुख हो या दुख, बस उनका स्वरूप बदला है। भारत में प्राचीन काल से ही रंगाई एवं छपाई की कला का कार्य होता रहा है। सुंदर एवं उपयोगी वस्त्रों का निर्माण हमारे यहां की राष्ट्रीय कला रही है। राजस्थान का नवकोटी मारवाड़ भी इस अनूठी कला से अपरिचित नहीं रहा। 18 वीं सदी के उतरार्द्ध में महाराजा अजीतसिंह जी के समय से लेकर महाराज मानसिंह जी के समय तक रंगाई–छपाई, रंगों के प्रकार, उनके निर्माण की कला, विभिन्न प्रकार की डिजाईन का प्रचलन एवं रंगरेजों के रोजगार के संदर्भ कपड़ों के कोठार की बहियों, रोजनामा री बही एवं मौजुदायत की बहियों से प्राप्त होते हैं। इस शोध पत्र में वस्त्र परंपरा संबंधी एवं उनकी कला, विभिन्न प्रकार की प्राचीन भांत, कच्चे–पक्के रंग व मिश्रित रंगों संबंधी पुरालेखीय एवं बहियों पर आधारित तथ्यों को उजागर करने का प्रयास किया है।

संकेताक्षर : *नवकोटी, कोठार कीबही, रंगाई, छपाई, पिंजाई, धुनाई, रंग–संयोजन, कताई, बुनाई, टुकड़ी के थान, भांत।*

मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं में आरंभ से ही भोजन, वस्त्र और आवास का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पाषाण युग से लेकर वर्तमान समय तक वस्त्रों को वस्त्र परिधानों का स्वरूप धारण करने हेतु कई कालखंडों से गुजरना पड़ा। वस्त्रों का निर्माण अनेक प्रक्रियाओं यथा पिंजाई, धुनाई, पौनी बनाना, कताई, बुनाई, रंगाई, छपाई के माध्यम से सम्पन्न होता है। ''रंगों का महत्व प्राचीन काल से ही रहा है, परंतु आधुनिक युग में इनके विषय में इतना अध्ययन हुआ है कि इनका प्रयोग सार्वजनिक जीवन में दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है। मनोवैज्ञानिकों ने रंगों को, मनोभावों को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला तत्व माना है।''[1]

मारवाड़ राज्य के परिधान–संयोजन में रंगाई और छपाई का अपना विशिष्ट एवं अनोखा स्थान रहा है। राज्य के अनेक सुअवसरों, तीज त्यौहारों एवं मांगलिक आयोजनों में भांति भांति के रंगों व डिजाईन युक्त परिधानों का प्रचलन रहा है। नवकोटी मारवाड़ की पुरालेखीय सामग्री व महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश में उपलब्ध महाराज अजीत सिंह से लेकर महाराजा मानसिंह तक की अनेक बहियों एवं ग्रंथों में वस्त्रों की रंगाई, उनके रंग–संयोजन, छपाई विभिन्न डिजाईन एवं भांत आदि के साक्ष्य मिलते हैं।

राजस्थानी शोध संस्थान में उपलब्ध ग्रंथ ''विविध राजवंशों का तर्जुमा'' ग्रंथ से राजस्थान की विभिन्न रियासतों की जानकारी के साथ–साथ फुटकर रूप में अन्य विषयों संबंधी जानकारी भी प्राप्त होती है। सरसरी दृष्टिकोण से देखने पर विभिन्न प्रकार के कच्चे–पक्के रंग और कपड़ों पर भांति–भांति की डिजाईन का वर्णन मिलता है।

काचा पाका रंग री याददाश्त

''कसुमल, नारंगी, गुलअनार, गैहरोंगुलाबी, सपतालू, फुलगुलाबी, किरमचीगुलाबी, कंवलपत्री, सिंदूरीया, हबासी, केसरीया, जाफरानी, अमरस्या, तौरूयौफूली, चंपई, चंदण, संदली, बसंत्या, अगरई, बिदांमी, बलोटी, पिसताखी,

सुवापंखी, मूगैरी, अंबुबा, सोनेरी, जगांली, सीलूको, जूमरदी, नाफरमांनी, सोसनी, बैगण्यां, आसमानी, कासनी, पतंगीया काजल्यां, ककरेजी, तेलीया, सुरमई, पनाकोरंग, थामोरंग, बोररंग, चणोटीयां, भगवां, जरद, पीलो, उदी, हरो कंवारीपाणको, घूसरो।''[2] महाराजा मानसिंह के समय तक भी ये विभिन्न प्रकार के कच्चे पक्के रंग प्रचलन में थे। उपर्युक्त रंगों का विस्तृत विवरण इस प्रकार है –

- **केसरिया** – इस रंग का निर्माण केशु (पलाश) के फूलों से या हरसिंगार के फूलों से होता था।
- **बसंत्या/बसंती रंग** – आंवल के फूलों से कपूरी या बसंती रंग निर्मित होता था।
- **मूगैरी रंग/मूंगिया रंग** – हल्दी व नील से मूंगिया रंग बनता था।
- **गुलाबी रंग** – केशु के फूल डालकर सिंगरफी रंग या गुलाबी रंग बनता था।
- **पीलो रंग** – अनार के छिलकों को उबालकर उसमें हल्दी, उस (तालाब के तट पर पानी की खार), बाद में सोडा, कास्टिक व फिटकरी डालकर पीला रंग बनाते थे।
- **तोरीफूला** – तोरी (एक प्रकार की सब्जी) के फूल जैसा रंग।
- **बादलाई –** बादल के समान रंग। [3]
- **गुलनार** – अनार के फूल के समान गहरा लाल रंग।[4]
- **कसुमल**– लाल रंग का कपड़ा, जिसका रंग अनार के फूलों के समान हो।[5]
- **पीसताखी–** पिस्ता, सूखा मेवा का रंग, हल्का हरे रंग के समान
- **सोसनी** – आसमानी रंग [6]
- **किरमची–** मटमैला रूप लिए करांदिया रंग के समान[7]
- **संदली–** हल्का पीला रंग अर्थात् चंदण की लकड़ी के समान रंग
- **अंबुबां –** आम के रंग जैसा रंग
- **चपई** – चंपा की बेल के जैसा रंग, पीला रंग
- **बादामी** – बादाम जैसा रंग हल्का भूरा
- **सुवापंखी** – तोते के समान रंग हरा [8]
- **हबासी** – एक प्रकार का रंग जो कथई से गहरा व काला से कम होता है।
- **नाफरमांनी** – एक प्रकार का पौधा जिसके फूल उदे या बैंगनी रंग के होते हैं। अर्थात् बैंगनी रंग।[9]
- **घूसरो** – मटमैले रंग का, धूल के रंग के समान।[10]
- **ककरेजा** – बैंगनी रंग
- **कासनी** – एक प्रकार का नीला रंग जो कासनी के फूल के रंग के समान होता है।[11]
- **कंवलपत्री** – कमल पत्र के समान रंग/एक रंग विशेष [12]
- **जंगाली** – गहरा लाल रंग[13]
- **जरद** – पीला रंग [14]
- **जाफरानी** – केसर के समान रंग वाला अर्थात् केसरिया[15]
- **तेलीया** – तेल के रंग के समान, मटमैला[16]

इन सभी विभिन्न प्रकार के रंगों के अलावा ''विविध राजवंशों का तुर्जमा'' ग्रंथ में भांति–भांति की डिजाईन (भांत) के नामों का भी वर्णन प्राप्त होता है। ''लहरिया की विभिन्न प्रकार की डिजाईन मध्यकालीन मारवाड़ में प्रचलित थी। जिनमें राजासाई, पचरंगो, अमरसाई, परतापसाई, जगतसाई, सीकपटांकों, मोठड़ादार, पंचलडिको, धनकभांति, करूडाभांति, पीली लीक को, गंभादार''[17] ये सभी भांत विभिन्न शासकों एवं समकालीन जागीरदारों के नाम एवं समय से प्रचलित हुयी। जैसे अमरसाई राजा अमरसिंह के समय, परतापसाई महाराजा प्रतापसिंह के समय में प्रचलित हुयी। इनमें से कुछ भांत न सिर्फ ओरणें व साड़ियां बनाने के काम आती थी बल्कि इनसे साफे एवं पगड़ीयां भी बांधी जाती थी। ये पगडीयां भी शासकों के नाम से प्रचलित थी।

इसी प्रकार इस ग्रंथ में विभिन्न प्रकार के भांत की चूंदडी बांधने का उल्लेख मिलता है। ''ईकदाणाकी, तीनदाणांकी, झाडबूटांकी, चोकड़ीदार, जालभांति, कारेलादाणां''[18] इन सभी भांत से ओरणें एवं साफे बनाये जाते थे, जो मारवाड़ राज्य में प्रचलित थे।

विभिन्न रंगों की सारणी का प्रारूप
(विभिन्न राजवंशों का तर्जुमा ग्रंथांक, 13670)

18 वीं शताब्दी में महाराजा विजयसिंह के शासनकाल वि सं 1840 में रंगरेजों को रंगने के लिए थान दिये गये थे। कपड़ा के कोठार की बही में इन रंगरेजों के नाम एवं उनको दिए गए मेहनताने के संदर्भ मिलते हैं। आसाढ सुद 5 को रंगरेज चांद को 1.25 रू प्रति थान की दर से 52 टुकड़ी के थान लहरीयादार रंगने के बाबत दिये गये। इसी प्रकार वि. सं. 1839 में सावण सुद 15 को छीपा चांद को 50 महमूदी का थान रंगने हेतु दिया गया जिसकी लागत 1.20 रू प्रति ओरणा थी।[19]

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि नवकोटी मारवाड़ में वस्त्र व्यापार उन्नत अवस्था में था जिसके संदर्भ पुरालेखीय सामग्री एवं बहियों से प्राप्त होते हैं। आम जन को रोजगार भी राज्य द्वारा समय-समय पर उपलब्ध करवाया गया था। विभिन्न प्रकार की रंगाई-छपाई एवं रंगों की किस्म मारवाड के वस्त्रों के वस्त्र उद्योग, कारीगरी एवं कौशल को सुस्पष्ट करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ प्रमिला वर्मा, वस्त्र विज्ञान एवं परिधान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2000, पृ. 275*
2. *विविध राजवंशों का तर्जुमा ग्रंथांक 13670 राजस्थानी चौपासनी शोध संस्थान, जोधपुर*
3. *डॉ कल्पना शर्मा, राजस्थान में परिधानों की संस्कृति, पश्चिम क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, उदयपुर, पृ. 104-105*
4. *सीताराम लालस, राजस्थानी सबदकोश, खंड-4, पृ. 255*
5. *सुखसिंह भाटी, राजस्थान के परंपरागत वस्त्र-परिधान, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, जोधपुर, पृ. 48*
6. *वही, पृ. 56*
7. *राजस्थानी शब्द कोष, खंड-1, पृ. 817*
8. *राजस्थान के परंपरागत वस्त्र-परिधान, पृ. 22-23*
9. *राजस्थानी शब्द कोष, भाग-3, पृ. 2061*
10. *वही, भाग-3, पृ. 1646*
11. *वही, भाग-1, पृ. 641*
12. *वही, भाग-1, पृ. 563*
13. *वही, भाग-2, पृ. 1025*
14. *वही, भाग-2, पृ. 1071*
15. *वही पृ. 1106*
16. *वही, पृ. 1556*
17. *विविध राजवंशों का तर्जुमा, ग्रंथांक 13670*
18. *वही, ग्रंथांक 13670*
19. *महाराजा विजयसिंह जी रे वगत कपड़ा रे कोठार री मौजुदायत री बही, वि. स 1840, बही नं 191*

अर्नोल्ड जे. टॉयन्बी : एक इतिहास दार्शनिक

अमित कुमार रैंकवार
शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

अर्नोल्ड जे. टॉयन्बी एक ब्रिटिश स्पेक्यूलेटिव इतिहास-दार्शनिक थे, जिन्होंने अपने इतिहास-दर्शन का प्रतिपादन अपने बारह खण्डों के अति विशाल ग्रन्थ 'अ स्टडी ऑव हिस्टरी' में किया है। प्रथम 6 खण्ड़ों में ही टॉयन्बी के इतिहास – दर्शन, सभ्यताओं के उत्थान व पतन विषयक विचारों का प्रतिपादन हुआ है। बाद के खण्ड़ों में टॉयन्बी के ध्यान का केन्द्र विश्वजनीन धर्म बन गये, जिनकी उत्पत्ति उसके अनुसार सभ्यताओं के पतन के काल में होती है।

टॉयन्बी के अनुसार सभ्यताओं की उत्पत्ति आदिम समाजों में उत्प्रेरण (Mutation) के परिणाम स्वरूप होती है। प्रजाति और वातावरण इनकी उत्पत्ति के कारक नहीं हैं। टॉयन्बी सभ्यता की उत्पत्ति दो विशिष्ट तत्वों के संयोग के परिणाम को मानते हैं, प्रथम –समाज में सृजनात्मक अल्पसंख्यक वर्ग तथा द्वितीय-ऐसा वातावरण जो न अधिक कठोर हो और न ही अधिक अनुकूल। टॉयन्बी के अनुसार इतिहास, सभ्यतायें कहलाने वाले समाजों की दृष्टि से स्वयं को समरूप, समकालीन और एक नवीन उद्यम में अर्वाचीन प्रयासों के रूप में उद्घाटित करता है। टॉयन्बी के अनुसार इतिहास के अध्ययन की इकाई मानव जाति का वह समूह है जिसे हम समाज कहते हैं । टॉयन्बी कुल मिलाकर ऐसे 26 समाजों की संख्या निर्धारित करते हैं । ये समाज आदिम समाजों से भिन्न सभ्यता सम्पन्न समाज हैं । इन समाजों का अध्ययन प्रस्तुत करना टॉयन्बी का उद्देश्य था। टॉयन्बी के सभ्यता विषयक दर्शन के प्रस्तुतीकरण का प्रयास प्रस्तुत शोध पत्र में किया गया है।

संकेताक्षर : *स्पेक्यूलेटिव, विश्वजनीन, उत्प्रेरण, सृजनात्मक अल्पसंख्यक वर्ग, आदिम समाज, सभ्यता।*

टॉयन्बी ने अपने इतिहास दर्शन का प्रतिपादन अपने बारह खण्डों के अति विशाल ग्रन्थ अ स्टडी ऑव हिस्टरी में किया है। उनके इस 'मैग्नम ऑपस' के प्रथम छः खण्ड द्वितीय विश्व युद्ध से ठीक पहले 1934 से 193 ई. के बीच प्रकाशित हो गये थे। उनकी इस मुख्य रचना से सम्बन्धित कुछ निबन्धों की श्रृंखला सिविलाइज़ेशन ऑन ट्रायल नाम से 1948 में प्रकाशित हुई। स्टडी ऑव हिस्टरी के शेष छः खण्डों का प्रकाशन 1952-53 ई. में जाकर पूरा हुआ।

सिविलाइज़ेशन ऑन ट्रायल के पहले निबन्ध, 'माय व्यू ऑव हिस्टरी' में टॉयन्बी लिखते हैं कि 1914 में बल्लिऑल में थ्यूसिडिडीज़ पढ़ाते समय उन्हें प्रथम विश्व युद्ध, जो उस समय आरम्भ हो चुका था, के अनुभव ने जकड़ लिया और तब अचानक मेरे मन में प्रकाश कौंधा। जिस अनुभव से हम आज गुजर रहे हैं उसी अनुभव से थ्यूसिडिडीज़ पहले ही गुजर चुका है। अब मैं उसे एक नये दृष्टिकोण से देख रहा था...वह और उसकी पीढ़ी मुझसे और मेरी पीढ़ी से ऐतिहासिक अनुभव के दृष्टि से आगे थी, उसका वर्त्तमान मेरा भविष्य था। इससे कालक्रम निर्धारण की वह पद्धति जो मेरे विश्व को 'आधुनिक' और थ्यूसिडिडीज़ के विश्व को प्राचीन बनाती है अर्थहीन हो जाती है। कालक्रम जो भी हो थ्यूसिडिडीज और मेरा विश्व तात्त्विक रूप से समकालीन हैं।

''वह ऐसा क्या था, (मनुष्य, मनुष्य हो जाने के बाद) एक लम्बे विराम के बाद, जिसने उन कुछ समाजों को ही ऐसे अनजाने सामाजिक व आध्यात्मिक लक्ष्य की ओर प्रवृत्त किया जिन्होंने दुःसाध्य उद्यम, जो सभ्यता कहलाता है, का मार्ग पकड़ लिया था ? उन्हें गहन जड़ता की स्थिति से, जिसे अधिकांश मानव समाज नहीं तोड़ पाये, किसने खींचकर

जगाया ? जब यह प्रश्न मेरे दिमाग़ में हलचल मचा रहा था, तब 1920 में प्रोफेसर नेमियर.... ने ऑस्वाल्ड स्पेंगलर की *Unitergang des Abendlandes* मुझे दी।...(उसे पढ़ने पर) मैं हैरत में पड़ गया कि मेरा समस्त अन्वेषण स्पेंगलर ने पहले ही से पूर्ण कर दिया है, जबकि उत्तरों की बात दूर, अभी तो प्रश्न भी पूरी तरह से (दिमाग में) आकार नहीं ले पाये हैं।... किन्तु जब मैंने सभ्यताओं की उत्पत्ति विषयक अपने प्रश्न के उत्तर के लिये स्पेंगलर को देखा तो लगा अभी मेरे लिये कुछ करने की गुंजाइश है।.... जहाँ जर्मन प्रागानुभविक विधि असफल रही है, देखें अंग्रेजी अनुभववाद क्या कर सकता है।[1]

टॉयन्बी के समक्ष पहली समस्या इतिहास अध्ययन के आरम्भ बिन्दु की है। वे इतिहास का एक ऐसा 'सुबोधगम्य क्षेत्र' खोजना चाहते हैं, जो स्वयं में एक पूर्ण इकाई हो तथा जिसके अध्ययन से ही उसका इतिहास स्पष्ट हो जाय।[2] उनके अनुसार यह इकाई राष्ट्र-राज्य अथवा मानव जाति नहीं हो सकती, मानव जाति का वह समूह हो सकता है[3] जिसे हम समाज कहते हैं, जिसके अन्तर्गत ग्रेट ब्रिटेन जैसे अनेक समुदाय – फ्रांस, पोर्च्यूगल, नीदरलेण्ड्स्, स्केण्डिनेविया के देश इत्यादि – सम्मिलित हों।... हमें अंशों अथवा खण्डों की नहीं, अपितु समग्र समष्टि की दृष्टि से विचार करना चाहिये, किसी एक सदस्य विशेष के नहीं अपितु घटनाओं को समस्त समाज के जीवन की कथा के अध्यायों के रूप में देखने के लिये; तथा (समाज के) सदस्यों की तकदीर का, अलग-अलग नहीं, बल्कि एक साथ, एक ही विषयवस्तु के रूप-भेदों की तरह अथवा एक आर्केस्ट्रा के अंगों के रूप में, जो एक स्वरसंगति (Harmony) में तो सार्थक हैं किन्तु स्वरों की पृथक लहरियों के रूप में नहीं, अनुसरण करने के लिये।[4]

इस प्रकार ग्रेट ब्रिटेन व अन्य उपर्युक्त राष्ट्र एक उस समाज का अंग हैं, जिसे टॉयन्बी 'पश्चिमी इसाई-जगत्' कहते हैं। इसकी उत्पत्ति लगभग 775 ई. में हुई थी तथा इसमें पश्चिमी-यूरोपीय महाद्वीप में शार्लमान के राज्य का क्षेत्र तथा ब्रिटेन में रोमन साम्राज्य के जो हिस्से थे, सम्मिलित थे।[5]

यह कहना अनावश्यक है कि 'पश्चिमी इसाई-जगत्' विश्वव्यापी समाज नहीं था। इस प्रकार के अन्य अनेक समाज भी अस्तित्त्वमान थे। टॉयन्बी के अनुसार, आज ऐसे पाँच समाजों का पता है और कुछ ऐसे समाजों का भी जो निर्जीव हो समाप्त हो गये हैं। इन में से एक समाज का यानि अपने (पश्चिम यूरोप) समाज के मूल की खोज में हमे ऐसे महत्त्वपूर्ण समाज की मृत्यु का भी पता चला है जिसका हमारा समाज संतान स्वरूप है।[6]

टॉयन्बी, कुल मिलाकर इस प्रकार के 21 समाजों की पहचान करते है।[7] (बाद में इन समाजों की संख्या बढ़कर 26 हो जाती है) ये समाज आदिम समाजों से भिन्न सभ्यता सम्पन्न समाज हैं। इन समाजों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना टॉयन्बी का उद्देश्य है।

सभ्यताओं की उत्पत्ति

सभ्यताओं की उत्पत्ति, टॉयन्बी के अनुसार आदिम समाजों में उत्प्रेरण (mutation) के परिणामस्वरूप होती है। किन्तु यहाँ प्रश्न यह उठता है कि आदिम और विकसित अथवा सभ्य समाजों में क्या अन्तर है ? टॉयन्बी के अनुसार, यह अन्तर इस बात में नहीं है कि उनमें संस्थायें हैं अथवा उनका अभाव है.... न ही यह अन्तर इस बात का है कि सभ्यताओं में श्रम का विभाजन पाया जाता है।[8] अन्तर इस बात का है कि अनुकरण की शक्ति क्या दिशा लेती है। हालाँकि अनुकरण सामाजिक जीवन का सामान्य गुण है सभी सामाजिक कार्यों में आदिम समाजों में भी यह क्रिया हमें देखने को मिलती है।[9] किन्तु दोनों समाजों में इनकी दिशायें भिन्न हैं। आदिम समाजों में अनुकरण की दिशा पिछली पीढ़ी की ओर तथा मृत पूर्वजों की ओर होती है, जो जीवित बुजुर्गों की शक्ति को और मजबूत करते हैं और प्रतिष्ठा को बढ़ाते हैं। ऐसे समाजों में जहाँ अनुकरण अतीतोन्मुखी हो, रूढ़ि में बन्धा रहता है, अतिहीन रहता है। इसके विपरीत सभ्यता की ओर गतिशील समाजों में अनुकरण सृजनशील व्यक्तियों की ओर रहता है। ऐसे समाज में, 'रूढ़ियों का केक' तोड़ दिया जाता है और समाज परिवर्तन की, विकास की दिशा में अग्रसर रहता है।[10]

किन्तु क्या गतिशीलता किसी जाति या प्रजाति विशेष का गुण है ? टॉयन्बी सभ्यता की उत्पत्ति को प्रजाति से जोड़कर नहीं देखते। जैसाकि स्पष्ट है, किसी एक प्रजाति ने सभ्यता उत्पन्न नहीं की।[11] वे ऐसे अनेक और उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जिनसे यह स्पष्ट है कि वातावरण सभ्यता उत्पन्न नहीं करता।[12]

चुनौती और प्रतिक्रिया

टॉयन्बी के अनुसार, सभ्यता की उत्पत्ति दो विशिष्ट शर्तों, तत्त्वों के संयोग के परिणामस्वरूप होती हैः समाज में सृजनात्मक अल्प-संख्यक वर्ग और ऐसा

वातावरण जो न अधिक कठोर हो और न ही अधिक अनुकूल। ऐसे मानव समुदाय, जिन्हें ये दोनों तत्त्व उपलब्ध थे सभ्यता उत्पन्न कर पाये, शेष सभ्यता–पूर्व की स्थिति में ही रह गये। वे विविध सभ्यताओं के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। मिस्री सभ्यता की उत्पत्ति का उदाहरण देते हुए वे कहते हैंः 'ऐतिहासिक' काल से पहले एफ्रेशियन स्टेप (घास के मैदान) आज की तरह नहीं थे। यहां हरे–भरे घास के मैदान थे। हिम–युग की समाप्ति के साथ ही इस क्षेत्र में परिवर्तन को सिलसिला आरम्भ हुआ। घास के मैदान सूखने लगे। वातावरण ने चुनौती उपस्थित कर दी। यहाँ बसने वालों ने इस चुनौती का उत्तर विविध प्रकार से दिया। जिन समुदायों ने अपनी आदतें, अपना रहन–सहन बदला और शिकारी से गडरिये हो गये किन्तु वहीं रहे, ऐफ्रेशियन स्टेप के यायावर बनकर रह गये; कुछ समुदाय दक्षिण के उष्ण–कटिबन्धीय मानसूनी प्रदेश की ओर चले गये सदा एक समान रहने वाले वातावरण के स्वापक प्रभाव के शिकार हो गये और आदिमावस्था में ही रह गयें। किन्तु यहाँ के कुछ समुदाय ऐसे भी थे जिन्होंने अपना रहन–सहन बदला, स्थान बदला, उन्होंने मिस्र की सभ्यता को जन्म दिया। सुमेर की सभ्यता, चीनी, माया, मिनोई आदि अन्य सभ्यताओं की उत्पत्ति के उदाहरण देते हुए टॉयन्बी उत्पत्ति विषयक 'चुनौती–प्रत्युत्तर' सिद्धान्त की स्थापना करते हैं।[13]

सभ्यताओं के विकास की प्रकृति

टॉयन्बी के अनुसार सभ्यताओं का विकास ऐसी सजीवता (elan) द्वारा होता है जो चुनौती से संघर्ष और संघर्ष से पुनः चुनौती की और ले जाती है और विभेदीकरण (differentiation) से एकीकरण और एकीकरण से पुनः विभेदीकरण की ओर।[14] इस प्रकार की 'विकासात्मक गति' 'दिशात्मक' (directional) नहीं होती। विकास संचयी वृद्धि होती है। यह संचयी वृद्धि विकास के बाह्य व आन्तरिक दोनों पक्षों में देखी जा सकती है। बृहत्तर विश्व (Macrocosm) में वृद्धि की अभिव्यक्ति बाह्य वातावरण पर क्रमिक तथा संचयी प्रभुत्व स्थापना की प्रक्रिया में होती है, लघु विश्व में यह आत्म–निर्धारण तथा आत्माभिव्यंजन में अभिव्यक्त होती है।[15] विकास को बाह्य वातावरण पर प्रभुत्व के रूप में देखने का अर्थ है दो प्रकार के –भौतिक और मानवीय – वातावरण पर प्रभुत्व। मानवीय वातावरण की दृष्टि से सभ्यता की प्रगति को, व्यावहारिक रूप से भौगोलिक विस्तार से नापा जा सकता है।[16]

टॉयन्बी अपने आनुभविक सर्वेक्षण (empirical survey) के आधार पर कहते हैं कि हालाँकि मानवीय वातावरण पर विजय भौगोलिक प्रसार के आधार पर नापा जा सकता है, किन्तु भौगोलिक प्रसार की यह कसौटी विकास का सही माप–दण्ड नहीं है। वास्तव में 'नियम' (सूं) ठीक इसके विपरीत है। जो सम्बन्ध इस 'नियम' के अनुसार बनता है यह भौगोलिक विस्तार और सामाजिक विकास के बीच नहीं अपितु भौगोलिक विस्तार और सामाजिक अवनति के बीच बनता है।[17] भौगोलिक प्रसार सम्बन्ध... सामाजिक विघटन के साथ है।[18]

टॉयन्बी के अनुसार माया समाज ने मेक्सिको तथा युकेटेक सभ्यताओं, जो इससे (माया सभ्यता से) सम्बद्ध थीं, की तुलना में सभ्यता के उच्चतर स्तर को प्राप्त किया था, प्रविधि की दृष्टि से माया प्रस्तर–युगीन तकनीक के स्तर पर होने के बावजूद पुनः, जब डोरियन जाति ने लोहे के तावे के स्थान पर लोहे के हथियारों का निर्माण आरम्भ कर दिया था तब भी वे आदिमावस्था में ही थे। टॉयन्बी के अनुसार लोहे की तलवार संस्कृति का जन्तर हुए बिना विजय का जन्तर हो सकता है।[19]

अतः टॉयन्बी के अनुसार सभ्यता के विकास को इस प्रकार व्याख्यायित किया जा सकता हैः वे कहते हैं, "... जब चुनौतियों की श्रृंखला उपस्थित होती है और एक चुनौती के परिणामस्वरूप दूसरी चुनौती आती है जो उन्नति की ओर प्रेरित करती है, इस प्रकार ज्यों–ज्यों यह श्रृंखला आगे बढ़ती है, कर्म का क्षेत्र 'बाह्य वातावरण' के स्थान पर, चाहे वह भौतिक हो अथवा मानवीय, व्यक्तित्व के अथवा सभ्यता के अन्तर में स्थानान्तरित होता जाता है। जितना यह सभ्यता उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ती जाती है उतना ही उसे बाह्य चुनौतियों का कम और स्वयं से मिलने वाली आन्तरिक चुनौतियों का ज्यादा सामना करना पड़ता है। विकास का अर्थ है कि वृद्धिमान व्यक्तित्व अथवा सभ्यता स्वयं ही अपना वातावरण बन जाती है, स्वयं ही अपने को चुनौती देने वाला और स्वयं ही कर्म का क्षेत्र। दूसरे शब्दों में विकास का मापदण्ड आत्म–निर्णय की दृष्टि से, आत्म–निर्णय की ओर प्रगति; और आत्म–निर्णय की ओर प्रगति उस चमत्कार को व्यक्त करने का एक नीरस तरीका है जिसके द्वारा जीवन अपने ही जगत् में (स्व–रचित–जगत्) में प्रवेश करती है।"[20]

निष्क्रिय बहुसंख्यक क्रियाशील अल्पसंख्यकों का नेतृत्त्व स्वीकार करें इसके लिये दो उपाय हैं, "एक

व्यावहारिक और दूसरा आदर्श"।[21] पहला है कठोर अनुशासन द्वारा (by way of drill) लोगों में सुधार लाना.... दूसरा है रहस्यवाद द्वारा... पहले तरीके से अवैयक्तिक नैतिकता को मन में बिठाया जाता है ताकि व्यक्ति स्वार्थ रहित हो सके, दूसरा तरीका अनुकरण की प्रकृत्ति जागृत करता है, ताकि दूसरे (नायक, नेता) के साथ आध्यात्मिक एकता, न्यूनाधिक पूर्ण तादात्म्य, स्थापित हो जाय।[22]

दूसरा तरीका, सीधे आत्मा से आत्मा में सृजनात्मक ऊर्जा प्रदीप्त करने का, आदर्श तरीका है। किन्तु केवल इसी विधि को पूर्णतया अपनाना संभव नहीं। अनुकरण की प्रबृत्ति के बिना समस्या का समाधान नहीं हो सकता। किन्तु अनुकरण की प्रबृत्ति एक शार्ट–कट किन्तु एक अपरिहार्य विधि है। किन्तु वे प्रबृत्तियाँ और विचार, जिन्हें जनता के मन में बिठाया जाता है तात्त्विक रूप से जनता की नहीं होतीं, (इस कारण) अनुकरण की प्रबृत्ति आवश्यक रूप से सभ्यता के समाज में विभाजन (schism) उम्पन्न करती है, और इस कारण सभ्यता के टूटने का खतरा उत्पन्न हो जाता है।[23]

सभ्यताओं का पतन

टॉयन्बी कहते है कि, सभ्यताओं के पतन की समस्या उनके विकास की समस्या से अधिक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। यह वास्तव में उतनी ही सुस्पष्ट है जितनी उनकी उत्पत्ति की। 'सभ्यता' की अट्ठाईस प्रतिनिधि सभ्यताओं में से अठारह का अवसान हो चुका है। दस जीवित सभ्यतायें जो जीवित हैं वे हैंः पश्चिमी समाज, निकट–पूर्व का परम्परावादी इसाई जगत् का मुख्य भाग, रूस में इसकी शाखा, इस्लामी समाज, हिन्दू समाज, चीन में सुदूर पूर्वी समाज का मुख्य भाग, जापान में इसकी शाखा तथा पॉलिनीशियनों, एस्किमों और यायावरों की ये तीन अवरूद्ध सभ्यतायें।

पश्चिमी समाज के अपवाद को छोड़कर शेष सभी नौ सभ्यताओं का विघटन हो चुका है, अर्थात् वे सभ्यता के विकास के 'सार्वभौम राज्य' के चरण से आगे बढ़ गये हैं, जो पतन की अन्तिम अवस्था से पहली अवस्था है, जब विघटित होती हुई सभ्यता जबरन अस्थायी राजनैतिक एकता स्थापित करके मृत्यु को टालने का प्रयास करती है।

पश्चिमी सभ्यता अभी सार्वभौम राज्य की स्थिति में नहीं पहुँची है। सार्वभौम राज्य विघटन की न तो पहली अवस्था है और न अन्तिम। इसके बाद संकट का काल आता है, जिसे टॉयन्बी 'अराजकता की मध्यावधि' कहते हैं, यह सदियों चलता रहता है। वे कहते हैं कि पश्चिमी सभ्यता में वह समय आ चुका है।[24]

इस प्रकार टॉयन्बी का मत है कि विश्व– इतिहास का ढाँचा सभ्यताओं और समाजों के सम्पर्कों से निर्मित हुआ है। वर्तमान स्थिति का अध्ययन करते हुए वे मानते हैं कि समस्त विश्व का एकीकरण, धर्मों का समन्वय और आर्थिक विषमताओं का निराकरण इतिहास की मुख्य प्रवृत्तियाँ हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *टॉयन्बी आर्नल्ड, सिविलाइजेशन ऑन ट्रायल, पृ 8–10*
2. *टॉयन्बी आर्नल्ड, अ स्टडी ऑव हिस्टरी, प्रथम खण्ड, पृ 17 (आगे यह सन्दर्भ उ स्टडी... नाम से दिया जायेगा)*
3. *देखें, अ स्टडी... प्रथम खण्ड का प्रथम अध्याय*
4. *वही, 22–23*
5. *वही, पृ 32*
6. *अ स्टडी... संक्षेपण द्वारा डी सी सोमरवेल, पृ 11 (आगे यह सन्दर्भ सोमरवेल... नाम से दिया जायेगा)*
7. *वही, पृ 133*
8. *वही, पृ 189*
9. *वही, पृ 191*
10. *वही, पृ 191–192*
11. *सोमरवेल... पृ 42–45*
12. *अ स्टडी... प्रथम खण्ड, पृ 271*
13. *वही, पृ 271–336*
14. *अ स्टडी... तृतीय खण्ड, पृ 120*
15. *वही, पृ 128*
16. *वही*
17. *वही, पृ 134*
18. *वही, पृ 139*
19. *वही, पृ 160*
20. *सोमरवेल...पृ 208*
21. *अ स्टडी... तृतीय खण्ड, पृ 245*
22. *बर्गसाँ... पूर्वोद्धृत पृ 98–99, अ स्टडी... तृतीय खण्ड, पृ 245 से उद्धृत*
23. *सोमरवेल... पृ 181–182*
24. *अ स्टडी... चतुर्थ खण्ड, पृ 5*

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में गृहस्थाश्रम की उपादेयता

डॉ. रंजिता सिंह
सहायक आचार्य, एस. एस. जैन सुबोध पी.जी. (ऑटोनॉमस) महाविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्राचीन समाज को व्यवस्थित करने के लिए हमारे प्राचीन ऋषियों ने आश्रम-चतुष्टय के सिद्धान्त की कल्पना की। इस सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य की आयु सौ वर्ष की मानी जाती थी और इस आयु के चार विभाग किए गए। प्रत्येक विभाग की अवधि पच्चीस वर्ष की मानी गई। ये चार विभाग ही 'आश्रम' के नाम से प्रसिद्ध हुए। किन्तु यहाँ पर 'आश्रम' शब्द का अर्थ है- मनुष्य जीवन के चार पड़ाव। प्राचीन भारत का प्रायः प्रत्येक व्यक्ति इन चारों आश्रमों में रूकते हुए अपनी लोकयात्रा को पूरी करता था। यह आश्रम व्यवस्था ही मनुष्य को सम्पूर्ण बनाकर उसे चरमलक्ष्य तक पहुँचाती थी।आश्रमव्यवस्था का उद्देश्य है- मनुष्य का सामाजिक नियमों में आबद्ध होकर अपनी आयु के अनुसार व्यक्तिगत उन्नति से सम्बद्ध कर्त्तव्यों का पालन करना। आश्रम शब्द की धातु 'श्रम्' का अर्थ है-उद्योग। यदि चारों आश्रमों के प्रमुख कर्त्तव्यों पर दृष्टिपात किया जाए, तो सहज ही समझ में आ सकता है कि ब्रह्मचर्य आश्रम में अध्ययनात्मक श्रम की अपेक्षा रहती है; गृहस्थाश्रम में रचनात्मक श्रम आवश्यक है; वानप्रस्थाश्रम में तपस्यात्मक श्रम किया जाता है; और संन्यासाश्रम में योगसाधनारूप श्रम किया जाता है। गृहस्थाश्रम व्यक्ति के जीवन का वह भाग है। जिस पर उसकी, उसके परिवार की, समाज की और राष्ट्र की उन्नति निर्भर करती है। यह मानव-जीवन का वह स्वर्णिमकाल है, जिसमें वह धर्म, अर्थ और काम - इन तीन पुरूषार्थों का यथोचित सेवन कर सकता है। महर्षि वेदव्यास ने मानव जीवन के चार भागों में से दूसरा भाग इसी आश्रम के लिए निर्धारित करके इसकी अनिवार्यता को अभिव्यक्त किया है।

संकेताक्षर : *वेद, महाभारत, कर्त्तव्य, सामाजिक मूल्य, पितृऋण, पंच महायज्ञ, परिवार, अतिथि सत्कार, संयम, भारतीय संस्कृति।*

भारतीय विचारकों एवं मनीषियों ने व्यक्ति एवं समाज के उदात्त स्वरूप के लिए चार पुरूषार्थों का विधान किया था। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इस चतुर्वर्ग की प्राप्ति ही मनुष्य के जीवन का प्राप्तव्य लक्ष्य था। इस चतुर्वर्ग में से भी मोक्ष प्राप्ति तो स्थूल देहान्त के उपरान्त ही होती थी, अतः जीवन में धर्म, अर्थ और काम का परस्पर समन्वित पालन ही मनुष्य का उद्देश्य कहा गया है। मरणोपरान्त मोक्ष-प्राप्ति के लिए मनुष्य को धर्म का आचरण आवश्यक था और ऋषियों ने धर्मपालन के लिए स्त्री और पुरूष-पत्नी और पति-दोनों को समान और संयुक्त रूप से उतरदायी माना, अतः गृहस्थाश्रम का स्थान संस्कृत साहित्य में बहुत श्रेष्ठ हो गया। चतुर्वर्ग पुरूषार्थ की साधना के लिए एवं जीवन के सतत सौख्य के लिए चार आश्रमों की स्थापना की गई थी। धर्म को सर्वोत्तम पुरूषार्थ मानने के फलस्वरूप भारतीय ऋषियों द्वारा स्थापित चार आश्रमों में से तीन आश्रम ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ एवं संन्यास-धर्म की साधना के ही साधन रूप बन गए। केवल गृहस्थाश्रम ही एक ऐसा आश्रम था जिसमें मनुष्य अपनी स्वाभाविक काम प्रवृत्ति की सन्तुष्टि और अर्थोपार्जन के कार्यो को पूर्ण कर सकता था।

गौतम तथा बौधायन जैसे प्राचीन धर्मसूत्रकारों ने बन्ध या बाध नामक तृतीयवाद का समर्थन करते हुए केवल गृहस्थाश्रम को ही एकमात्र सेवन योग्य आश्रम माना है।[1] ब्रह्मचर्य तो गृहस्थाश्रम की तैयारी मात्र है। गौतम धर्मसूत्र के व्याख्याकार हरदत्त ने मिताक्षरा टीका में स्पष्ट लिखा कि 'जो गृहस्थाश्रम का पालन करने में अशक्त है, उन्हीं के

लिए अन्य आश्रमों का विधान है।'[2] महाभारत के अनुशासनपर्व एवं शान्ति पर्व में स्थल-स्थल पर गृहस्थाश्रम की बहुमुखी प्रशंसा है जिसमें गृहस्थः प्रवरस्तेषां की ध्वनि ही गूंजती है। गृहस्थधर्म का उचित पालन कर लेने वाले लोग प्रजापति, बृहस्पति अथवा इन्द्र के लोक की उत्तम गति को प्राप्त होते बताए गए हैं।[3]

गृहस्थाश्रम व्यक्ति के जीवन का वह भाग है। जिस पर उसकी, उसके परिवार की, समाज की और राष्ट्र की उन्नति निर्भर करती है। यह मानव जीवन का वह स्वर्णिमकाल है, जिसमें वह धर्म, अर्थ और काम इन तीन पुरुषार्थों का यथोचित सेवन कर सकता है। महर्षि वेदव्यास ने मानव जीवन के चार भागों में से दूसरा भाग इसी आश्रम के लिए निर्धारित करके इसकी अनिवार्यता को अभिव्यक्त किया है।

गृहस्थाश्रम के लिए आयु का दूसरा भाग इसलिए निर्धारित किया गय है कि ब्रह्मचर्य आश्रम में व्यक्ति को बौद्धिक विकास होता है, इसके पश्चात् ही वह आत्मिक विकास करने में समर्थ होता है। ज्ञानसम्पन्न और बुद्धिसम्पन्न व्यक्ति ही गृहस्थाश्रम के कर्त्तव्यों का पालन कर सकता है और व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकता है। हमारे ग्रंथों में यज्ञ, श्राद्ध, तर्पण, वेदशास्त्र श्रवण, सन्तानोत्पादन, त्रिवर्गसेवन आदि बहुत से कर्त्तव्य गृहस्थाश्रम से सम्बन्धित बताए गए है।

संस्कृत साहित्य में ऋग्वेद के ही समय से गृहस्थाश्रम अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है। इन्द्र की स्तुति करते हुए ऋषि कहता है 'हे इन्द्र, सोम पान कर लेने के पश्चात् अब तुम अपने घर जाओ जहां तुम्हारी सुन्दर और कल्याणकारी पत्नी है।'[4] इन शब्दों में ऋग्वेदकालीन गृहस्थ सुख का सुन्दर वर्णन है। पति की आज्ञाकारिणी एवं पति सेवा में संलग्न रहने वाली पत्नि,[5] बच्चों से अगाध प्रेम रखने वाली तथा उनका पालन पोषण करने वाली गृहिणी[6], घर की गाय एवं अन्य पशुओं की देखभाल करने वाली पत्नी[7] पति के साथ-साथ बैठ कर गार्हपत्याग्नि में आहुतियाँ देने वाली सहधर्मिणी[8]- ये सार चित्र ऋग्वेद में गृहस्थाश्रम के पालन की पूर्ण साक्षी देते हैं। ऋग्वेद के दशम मण्डल का पचासींवाँ सूक्त सूर्या और सोम के विवाह की सम्पूर्ण विधि को आज तक सुरक्षित रखे हुए है।

संस्कृत साहित्य में वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, सूत्र स्मृतियाँ महाकाव्य, नाटक आदि सभी ग्रन्थ गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करते नहीं अघाते। इस आश्रम का उचित परिपालन करने वाले को घर में ही समस्त तीर्थो की प्राप्ति कही गई है- 'समस्त आश्रमों में गृहाश्रम ही श्रेष्ठ है। उचित प्रकार से इस आश्रम का पालन करने वाले को सब तीर्थों का फल प्राप्त होता है। जितेन्द्रिय होकर, गृहस्थधर्म पालन करने से मनुष्य को घर में ही कुरूक्षेत्र नैमिषारण्य, पुष्कर, हरिद्वार, केदारनाथ आदि तीर्थों की प्राप्ति हो जाती है।'[9] ऋषियों द्वारा विधान किये गए चारों आश्रमों को यदि पारस्परिक भारवत्ता की दृष्टि से तौला जाए तो एक पलड़े में गृहस्थाश्रम एवं दूसरे पलड़े में अन्य तीनों आश्रम-ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ एवं संन्यास आते है।[10] वाल्मीकि रामायण तो आदर्श गृहस्थ परिवार का सुन्दर महाकाव्य है, अतः उसका गृहस्थ आश्रम को सर्वश्रेष्ठ बताना उचित ही है।'[11]

गृहस्थाश्रम की सर्वश्रेष्ठता उसके सामाजिक मूल्य एवं महत्त्व पर आधारित थी। इसकी महत्ता का सर्वप्रमुख कारण यह था कि गृहस्थ व्यक्ति ही अन्य तीनों आश्रमों का पालन करने वाले मनुष्यों को भोजन, वस्त्रादि द्वारा व्यवस्था किया करता था। गृहस्थाश्रमी अपने परिवार के लिए तो विभिन्न व्यवस्थाएँ करता ही था, किन्तु ब्राह्मण को उपहारादि देना, छात्र को विद्याध्ययनार्थ शुल्क देना, अतिथि-शिशु-गर्भिणी नारी आदि की परिचर्या करना-ये सारे कार्य गृहस्थ को अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा श्रेष्ठ बना देते हैं। अन्य तीनों ही आश्रम इसी एक आश्रम के सहारे अपनी स्थिति बनाए रखते हैं। ब्रह्मचारी, भिक्षु और वैखानस-तीनों को ही उत्पन्न करने वाला गृहस्थ आश्रम हैं।[12] 'यावज्जीवं जुहुयात्' आदि वैदिक वचनों ने गृहस्थाश्रम का पालन यावज्जीवन करने का आदेश दिया था, इसी कारण कई धर्मसूत्रों ने वानप्रस्थ और संन्यास को वैदिक वचनों का विरोध करने का कारण अमान्य तक ठहराया।[13] केवल गृहस्थाश्रम का ही सम्यक् प्रतिपालन करने से स्वर्ग अथवा मोक्ष की प्राप्ति सम्भव बताई गई। महाभारत के शान्तिपर्व में राजा जनक और संन्यासिनी सुलभा का संवाद यह स्पष्ट करता है कि वानप्रस्थ अथवा संन्यास ग्रहण मोक्ष की प्राप्ति के लिए आवश्यक नहीं है।'[14] स्वयं राजा जनक गृहस्थाश्रम का पालन करते हुए भी योगियों में अग्रगण्य और जीवनमुक्त माने गए। वशिष्ठ ने गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करते हुए लिखा कि 'गृहस्थ यथाशक्ति अन्नदान देता हुआ सब जीवों को प्राणधारण कराता है - यही गृहस्थ की तपस्या है और यही गृहस्थ का यज्ञ हैं। जिस प्रकार माता का आश्रय लेकर सब

जन्तु जीवित रहते है, ऐसे ही भिक्षा के सहारे जीवनचर्या करने वाले सब व्यक्ति गृहस्थ के सहारे रहते हैं।'[15] माता अपने स्तनपान द्वारा नवजात शिशु को पुष्ट करती है, बालक के रोगी होने पर सावधानीपूर्वक उसकी परिचर्या करती है बच्चे के वस्त्र एवं भोजन तथा धन सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण किया करती है। बिल्कुल इसी प्रकार माता के समान ही गृहस्थाश्रमी व्यक्ति ब्रह्मचर्य वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम की सब समस्याओं एवं कठिनाइयों को यथाशक्ति दूर करता है और अन्नदान, धन–दान आदि द्वारा इन आश्रमों को पुष्ट करता है।

गृहस्थाश्रम के महत्त्व के कारण–सन्तति लाभ

संस्कृत साहित्य में आदि से ही मनुष्य के लिऐ धर्मपालन सर्वाधिक काम्य पुरुषार्थ माना गया था। धर्मपालन करने के लिए पुत्र प्राप्ति आवश्यक थी। अतः सन्तति लाभ के कारण इस गृहस्थाश्रम को अन्य आश्रमों की अपेक्षा अधिक महत्त्व प्राप्त हो गया। स्नातक बने शिष्य को आचार्य स्पष्ट आदेश देते थे– 'प्रजारूपी तन्तु को कभी विच्छिन्न मत करना।[17] पितरों को पिण्डदान देने के लिए, अपने कार्यों में सहायता के लिए और वृद्धावस्था में परिचर्या के लिए सन्तति उत्पन्न करना अनिवार्य था और सन्तति प्राप्त करने के लिए गृहस्थाश्रम आवश्यक था, क्योंकि अन्य तीनों आश्रमों में से किसी भी आश्रम में सन्तानोत्पति सम्भव नहीं थी।[18] तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि उत्पन्न हुए मनुष्य पर जन्म से ही तीन ऋण होते है।[19] पितृ ऋण से उऋण होने के लिए मनुष्य को गृहस्थाश्रमी होकर सन्तति उत्पन्न करनी होती है। पुत्र प्राप्त होने पर ही मनुष्य पितृऋण से मुक्त हो पाता है। जिस व्यक्ति के पुत्र न हो वह धर्मपुत्र गोद लेता था जिससे पितृ ऋण से मुक्त हो सके। पितृ ऋण से मुक्त करने के कारण सर्वत्र ही पुत्र पिता को नरक से बचाने वाला माना गया है[20]

गृहस्थाश्रम के महत्व का संवर्धन करने वाला पुत्र प्राप्ति रूप कारण भी महाभारत में अनेक कथाओं द्वारा वर्णित है। महाभारत के आदि पर्व के तेरहवें अध्याय में जरत्कारू नामक मुनि का आख्यान है जिन्होंने पितृ ऋण से मुक्त होने के लिए विवाह करके गृहस्थधर्म का पालन किया। महाभारत में ही वनपर्व में अगस्त्य मुनि का आख्यान है।[21]किसी दूसरे स्थल को जाते हुए अगस्त्य मुनि ने एक गढ्ढे में नीचा मुँह किए लटकते हुए अपने पितरों को देखा। इसका कारण पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया 'सन्तान परम्परा लोप की सम्भावना के कारण हमारी यह दुर्दशा है। यदि तुम उत्तम सन्तान उत्पन्न करो, तो हमारा भी इस नरक से छुटकारा हो जाएगा और तुम्हारी भी सद्गति होगी।[22] अगस्त्य ने यह सुनकर अपने अनुरूप भार्या का अनुसन्धान किया किन्तु वैसी स्त्री नहीं मिली। तब अगस्त्य ने हर सत्व के उत्तमोतम अंगों को अपनी भावना से संग्रहीत करके, एक परम सुन्दरी स्त्री का निर्माण करके, वह कन्या विदर्भराज को दे दी। समय आने पर अगस्त्य ने उस कन्या–लोपामुद्रा– से विवाह करके उससे एक विद्धान् पुत्र उत्पन्न किया ओर वंशपरम्परा की रक्षा करके पितरों को चिन्ता मुक्त किया।

पंच यज्ञ

त्रिऋणों में भी प्रमुखतः पितृऋण से मुक्त होने के अतिरिक्त गृहस्थाश्रम के सार्वत्रिक महत्व का एक कारण यह भी थी कि मनुष्य पंच यज्ञःमहायज्ञों को गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट हुए बिना नहीं कर सकता। प्रत्येक गृहस्थ को पंच यज्ञोंके अनुष्ठान का आदेश दिया गया।[23] वैदिक समय में भी इन पंच यज्ञों का अस्तित्व था किन्तु इनका व्यवस्थित रूप गृह्यसूत्रों एवं स्मृतियों में ही प्राप्त होता है। मनु स्मृति ने विशेष रूप से इन पंच यज्ञों को करणीय बताया है और इनका विशद विवेचन किया है।

'वैवाहिकेऽग्नौ कुर्वीत गृह्य' कर्म यथाविधिः ।
पंचयज्ञविधानं च पंक्ति चान्याहिकीं गृही ।। मनु. 3.67
अध्यापनं ब्रह्मयज्ञ; पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो वलिभौतो मृयज्ञोऽतिथिपूजनम्।। मनु. 3.70.

अर्थात् 'विवाह समय की अग्नि में विधिपूर्वक गृह्यकर्म, पचंमहायज्ञ और पाकादि करे। (वेद का अध्ययन और) अध्यापन करना ब्रह्मयज्ञ है, तर्पण करना (माता पिता को सेवा से संतुष्ट करना) पितृयज्ञ है, हवन करना देवयज्ञ है, (प्राणियों को) बलि देना भूतयज्ञ है, एवं अतिथियों का भोजन आदि से सत्कार करना नृयज्ञ है।' वेदपाठ से ऋषियों की विधिपूर्वक हवन से देवताओं की श्राद्धों से पितरों की, अन्न से मनुष्यों (अतिथियों) की और बलिकर्म से भूतों की पूजा (तृप्ति–सन्तुष्टि) करनी चाहिए–

'स्वाध्यायेनार्चयेतर्षीन्होमैर्देवान्यथाविधिः।
पितृन्श्राद्धैश्च नृनन्नं भूतानि बलिकर्मण।।
मनु 381.

ब्रह्म यज्ञ

इसका प्राचीनतम उल्लेख इस रूप में सम्भवतः शतपथ ब्राह्मण में पाया जाता है।[24] इसमें प्रतिदिन का वेद का स्वाध्याय ही ब्रह्मयज्ञ बताया गया है।[25] इसका उद्देश्य सबको वेदाध्ययन आदि में प्रवृत्त कराना था। इससे वैदिक ज्ञान की प्राचीन परम्परा सुरक्षित रह कर निरन्तर सहस्त्रों वर्ष तक आगे बढ़ती रही। दयानन्द सरस्वती ने सन्ध्या (ईश्वर-चिन्तन) को भी ब्रह्मयज्ञ माना है।

देव यज्ञ

तैत्तिरीय आरण्यक ने लिखा कि जो समिधा से अग्नि में हवन करता है वह देवयज्ञ करता है।[26] अतः अग्नि में विभिन्न देवताओं- सूर्य, अग्नि, प्रजापति आदि के प्रति स्वाहा पूर्वक आहुतियाँ देना देवयज्ञ हैं। गृहस्थ द्वारा अग्नि में डाली गई आहुति सम्यक् रूप से सूर्य तक पहुँचती है, इसका रस सूर्य के प्रभाव से वर्षा बन कर बरसता है, वृष्टि से अन्न उत्पन्न होता है और अन्न से प्रजाएँ जीवन धारण करती हैं। अतः देवयज्ञ सम्पन्न करने वाला गृहस्थ चराचर जगत् का धारण और पोषण करता है।[27] गृहाश्रमी व्यक्ति का यज्ञ व्यक्तिगत स्वार्थ में सीमित न होकर सामाजिक श्रय के लिए होता है।

भूत यज्ञ

घर में प्रतिदिन बनाऐ जाने वाले अन्न में से भूतों के लिए जो बलि निकाली जाती है वह भूतयज्ञ कहलाता है। भारतीय विचारधारा के अनुसार सम्पूर्ण चराचर सृष्टि में एक ही परब्रह्म अपनी शक्ति से ओतप्रोत है, अतः भूतयज्ञ सबके प्रति उदारता और सहिष्णुता का प्रतीक है। ऋग्वेद के समय से ही यह धारणा प्रचलित थी कि अकेले खाना पाप है। ऋग्वेद ने स्पष्ट कहा 'अविवेकी विफल अन्न को कमाता है। वह (अन्नप्राप्ति) उसके नाश-अकल्याण की सूचक है। जो मित्र और देवता को न देता हुआ स्वयं ही भोजन करता है वह मूर्ख पापमात्र का भक्षण करता है।'[28] गीता में भी यहीं ध्वनि है-

'भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्'
(गीता 3.13.)

यह भूतयज्ञ सारे जीवों के लिए बलि निकाल कर त्याग पूर्वक भोग का प्रतीक है।

पितृ यज्ञ

इस यज्ञ में प्रतिदिन पितरों का सम्मान किया जाता है। मनु स्मृति ने प्रतिदिन तीन प्रकार से पितरों का सम्मान करके पितृयज्ञ सम्पन्न करने का विधान किया।

अ. प्रतिदिन (जलदान करके अथवा) तर्पण करके पितृयज्ञ सम्पन्न करना चाहिए।[29]

ब. अन्नादि, दूध, मूल, फलों से प्रतिदिन पितरों को सन्तुष्ट करे और यदि अधिक सम्भव न हो तो भी पितरों के निमित एक ब्राह्मण को भोजन अवश्य कराए।[30]

स. सर्वात्मक जीव को बलि देने के बाद बचे हुए सब अन्न से दक्षिण दिशा में पितरों के लिए स्वधा बलि देनी चाहिए।[31]

नृ यज्ञ अथवा मनुष्य यज्ञ

इस नृ यज्ञ की सामाजिक महत्ता पंच महायज्ञों में सर्वाधिक है। अतिथि सेवा ही नृ यज्ञ है। सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य आतिथ्य की महिमा से भरा हुआ है। वैदिक युग से ही अतिथि को देवरूप माना जाता रहा है- 'अतिथि देवो भव' - अथर्ववेद में कहा गया कि 'अतिथि गृहस्थ का अन्न नहीं खाता है वरन् उसके पापों का भक्षण कर लेता है।'[32] घर पर आए हुए अतिथि को आसन, पादोदक, स्वादिष्ट अन्न आदि देकर उसका सत्कार करना चाहिए। भोजनादि से अतिथि की सेवा धन, आयु, यश और स्वर्ग का कारण बनती है।'[33] महाभारत के शान्ति पर्व में कबूतरो को पकड़ लेने वाले शाकुनिक का भी सत्कार करते हुए कबूतर ने कहा है- 'घर पर आए हुए अतिथि का यत्नपूर्वक सत्कार सभी को करना चाहिए किन्तु पंच यज्ञ में प्रवृत्त गृहस्थ का तो यह प्रधान धर्म है। जो गृहाश्रम में रहता हुआ भी पंच यज्ञ सम्पन्न नहीं करता, उसे धर्मतः न तो यह लोक प्राप्त होता है और न ही परलोक।'[34]

अतिथिसत्कार के मूल में प्राणिमात्र के प्रति दया और अनुकम्पा की सहज प्रवृत्ति है। अतिथि प्रायः यात्री होता है।[35] आज की यात्रा एक सीमा तक निरापद हो गई, किन्तु पहले यात्रा इतनी सुगम और निरापद नहीं होती थी। अपरिचित स्थान में व्यक्ति क्षुधा-पिपासा एवं श्रम से आर्त एवं असहाय होता हैं। अतः ऐसे अतिथि के प्रति गृहस्थ व्यक्ति सहज दया के वशीभूत होकर उसकी सेवा करता है। ऋषियों ने इस अतिथि सेवा को कर्तव्य में परिगणित कर दिया और 'महान धर्म' की संज्ञा दी।[36]

गृहस्थ जीवन से सम्बन्धित उपर्युक्त तथ्यों से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि गृहस्थ व्यक्ति संयम और

सदाचारपूर्वक सत्कर्मों का पालन करें। वह अपनी किसी भी उपलब्धि के प्रति आसक्त न हो और परिवार, समाज तथा राष्ट्र के प्रति अपने दायित्व का निष्ठापूर्वक पालन करे। पंच महायज्ञ एवं पंचऋणों की कल्पना भी सोद्देश्य है, जिनको अनिवार्य कर्त्तव्य मानकर गृहस्थ क्षुद्रप्राणी से लेकर समस्त विश्व का कल्याण करने में लग सकता है। आधुनिक गृहस्थ भी प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनुसार बताए गए गार्हस्थ जीवन के अनिवार्य कर्त्तव्यों का पालन करते हुए अपना, अपने परिवार का, अपने राष्ट्र का और समस्त विश्व का हित कर सकते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। गृहस्थाश्रम मनुष्य जीवन का बहुत ही महत्त्वपूर्ण भाग हैं, जिसे समुचित रूप से यापन करना कल्याणकारी है और यापन न करना विनाशकारी। क्योंकि हमारे विद्वान् पूर्वजों ने गृहस्थ आश्रम को ही अन्य आश्रमों का मूल बताया है। आचार्य मनु का मत है कि जैसे वायु सब प्राणियों के जीवन का आधार है, उसी तरह यह गृहस्थाश्रम भी सभी आश्रमों का आधार है। ब्रह्मचर्याश्रम, वानप्रस्थाश्रम और संन्यासाश्रम–ये तीनों ही गृहस्थ से ही न केवल अन्न अपितु ज्ञान भी प्राप्त करते हैं, इसलिए, यही आश्रम सर्वश्रेष्ठ है। चूंकि गृहस्थ वेद और स्मृति में बताए गए नियमों के आधार पर ही यज्ञादि अनुष्ठान करता है, और अन्य तीन आश्रमों का भरण–पोषण करता है,

महापुरूषों और महाकवियों के उपर्युक्त वचनों का प्रमाण मानते हुए कहा जा सकता है कि वास्तव में गृहस्थाश्रम सर्वश्रेष्ठ आश्रम है और अन्य आश्रमों का आधारस्तभ है। हमारी आश्रम–व्यवस्था की सफलता इसी पर निर्भर है। क्योंकि गृहस्थ व्यक्ति वे सभी कार्य करता है, जो ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी नहीं करते। गृहस्थ व्यक्ति का प्रमुख कर्त्तव्य है धनार्जन। इस धन को वह अध्यापन, कृषि, वाणिज्य, युद्ध में विजय, शिल्प आदि से प्राप्त कर सकता हैं और उपभोग के सभी साधनों को जुटा सकता है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी धनार्जन नहीं करते, उनका कार्य क्रमशः विद्यार्जन, मुनिवृत्ति और योग हैं। ऐसी स्थिति में इन तीनों को दैनिक उपयोग की वस्तुएँ जुटाना गृहस्थ का ही उत्तरदायित्व हो जाता है। इसके साथ ही विवाह करके सन्तानोत्पादन करना भी गृहस्थ का पारिवारिक तथा सामाजिक ऐसा कर्त्तव्य है, जो ब्रह्मचारी आदि नहीं कर सकते। इतना ही नहीं, अक्षमव्यक्तियों तथा पशु–पक्षियों के पालन–पोषण का भार भी गृहस्थ पर ही होता है। इन सब कर्त्तव्यों का पालन वह सत्यनिष्ठा, सदाचारपालन तथा संयमपूर्वक करता है, और पारिवारिक सदस्यों के प्रति भी उदासीन नहीं रहता है। अतएवं कहा जा सकता है कि गृस्थाश्रम का समय मनुष्य का उपासना काल है, साधना की अवधि है, जिसमें वह आत्महित साधना के साथ–साथ परहितसाधना भी करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *गौ. ध. 1.3.1तस्याऽऽश्रमविकल्पमेके ब्र वन्ते।*

   बौ. ध. 2.6.21 ऐकाश्रम्यं त्वाचार्या अप्रजननत्वादितरेषाम

2. *गौ. ध. 1.3.35. पर हरदत्त की मिताक्षरा– 'ततः सर्व एवाऽचार्या गार्हस्थ्यस्यैकाश्रम्यं प्राधन्यं मन्यन्ते। तत्राशक्तानामितराश्रमधर्मा विधीयन्ते।*

3. *महाभारत 12.301.60 प्रजापतेः सलोकतां बृहस्पतेः शतक्ताः व्रजन्ति ते परां गति गृहस्थधर्मसेतुभिः*

4. *ऋ. वे. 3.53.7. अपाः सोममस्तमिन्द्र प्रयाहि कल्याणीर्जाया सुरण गृहे ते।*

5. *ऋ. वे. 1.122.2.*

6. *ऋ. वे. 7.81.4.*

7. *ऋ. वे. 10.85.44.*

8. *ऋ. वे. 8.43.15.; 8.13.13.;*

9. *व्या. स्मृ. 4. 2. गृहाश्रमात्परो धर्मो नास्ति नास्ति पुनः पुनः। सर्वतीर्थफलं तस्य यथोक्तं यस्तु पालयेत्।।*

   वही 4. 4. स्वदारे यस्य सन्तोषः परदारनिवर्तनम् । अपवादं न कुर्तीत तस्य तीर्थफलं गृहे।।

   वही 4. 13., 4–14.;

10. *महाभारत 12. 12. 11. आश्रमांस्तुलया सर्वान् धृतानाहुर्मनीषिणः।*

    एकतस्ते त्रयो राजन् ! गृहस्थाश्रम एकतः।।

11. *वा. रा. 2. 106.22. चतुरर्णामाश्रमाणां हि गार्हस्थ्यं श्रेष्ठमुत्तमम्।।*

12. *गौ. ध. 3. 2.3 ब्रह्मचारी गृहस्थो भिक्षुर्वेखानसः।*

    तेषां गृहस्थो योनिरप्रजनत्वादितरेषाम्।

13. *गौ. ध. 3.35 पर हरदत्त की मिताक्षरा वृत्ति वौ. ध. 2.6.21, पर गोविन्दस्वामी की विवरण टीका यदुक्त' चतुर्धाभेदमेक आहुः इति तन्न, ऐकाश्रम्यं एकश्चाऽसावाश्रमश्च तदभा ऐकाश्रम्यम्। तच गार्हस्थ्ये। प्रजननमत्र पुत्रोत्पत्तिः। सा चेतरेषां नाऽस्ति।*

14. महाभारत 12.308.....

15. व. ध. 8.13.14.16. यथाशक्ति चान्नेन सर्वभूतानि। गृहस्थ एव यजते गृहस्थस्तप्यते तपः। चतुर्णामाश्रमाणां तु गृहस्थस्तु विशिष्यते।। यथा मातरमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति जन्तवः। एवं गृहस्थमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति भिक्षवः।।

16. महाभारत1.52. 3.....23

17. तै. उप. –प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः।

18. बौ. ध. 2. 6. 21.

19. तै. स. 6.3.10.5 जायमानो ह वै ब्राह्मणस्त्रिभि ऋणवान् जायते। ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो, यज्ञेन देवेभ्य, प्रजया पितृभ्यः एष वा अनृणो यः पुत्रो यज्वा ब्रह्मचारिवासी। –यहाँ ब्राह्मण सब वर्णों का बोधक है। शत. ब्रा. 1.7.3.11. ऋणं ह वै जायत योऽस्ति। स जायमान एव देवेभ्यः ऋषिभ्यः पितृभ्यः मनुष्येभ्यः।

20. वा. रा. 2.107.12 पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मात् पितरं त्रायते सुतः। तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः पितृन्यः पाति सर्वतः।।

21. महाभारत 3.1.4.11.

22. महाभारत 3.14.14.
यदि नो जनयेथास्त्वमगस्त्यापत्यमुत्तमम्।
स्यान्नोऽसमान्निरयान्मोक्षस्त्वं च पुत्राप्नुया गतिम्।।

23. आप. ध. 1.4 12.15.; 1.4.13.1.; बौ. ध. 2.6.1 अथेमे पंच महायज्ञास्तान्येव महासत्राणि– देवयज्ञः, पितृयज्ञो, भूतयज्ञो, मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति।

24. शत. ब्रा. 11.5.6.3.....8.

25. तै. आ. 2.10. यत्स्वाध्यायमधीयते कामप्यृचं यजुः साम वा तद् ब्रह्मयज्ञः संतिष्ठते।

26. तै. आ. 2.10. यदग्नौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते।

27. म. स्मृ. 3.75.76. दैवकर्मणि युक्तो हि बिभर्तीदं चराचरम्।। अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यागादित्यमुपतिष्ठते। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजा।।

28. ऋ. वे. 10.11,7.6. मोघमन्नं विन्दते अप्रचेता सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य। नार्यमणां पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी।।

29. म.स्मृ. 3.70. पितृयज्ञसतु तर्पणाम्।।

30. म.स्मृ. 3–82.93. कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्य नोदकेन वा। पयोमूलफलैर्वाऽपि पितृभ्यः प्रीतिमावहन्।। एकमप्याशयेद्विप्रं प्रित्रर्थे पाश्चयज्ञिके।

31. म. स्मृ. 3. 11. सम्प्राप्ताय स्वतिथये प्रदद्यादासनोदके। अन्नं चैव यथाशक्ति सत्कृत्य विधिपूर्वकम्।। 3. 106. धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं वाऽतिथिपूजनम्।

32. म. स्मृ. 3. 12. पितृभ्यो बलिशेषं तु सर्वं दक्षिणतो

33. अ. वे. 1.6.5

34. महाभारत 12, 142, 25.26. शरणागतस्य कर्तव्यमातिथ्यं हि प्रयत्नतः पंजयज्ञप्रवृत्तेन गृहस्थेन विशेषतः।। पचयंज्ञांस्तु यो मोहान्न करोति गृहाश्रमे। तस्य नायं न च परो लोको भवात धर्मतः।। वि. ध. 67 33. अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्तते। तस्मात्सुकृतमादाय दुष्कृतं तु प्रयच्छति।

35. निरुक्त 4. 5.

36. महाभारत 12. 142. 31. ऋषीणां देवतानाश्च पितृणां च महात्मनाम्। श्रुतः पूर्व मया धर्मो महानतिथिपूजने।।

भारत के दृष्टिकोण से हिन्दमहासागर का महत्व (अमेरिका, रूस व चीन के हस्तक्षेप का प्रभाव)

सुरेश भाटी
शोद्यार्थी, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

हिन्द महासागर दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा समुद्र है और पृथ्वी की सतह पर उपस्थित पानी का लगभग 20% भाग इसमें समाहित है। उत्तर में यह भारतीय उपमहाद्वीप से पश्चिम में पूर्वी अफ्रीका, पूर्व में हिन्द चीन, सुंदा द्वीप समूह और आस्ट्रेलिया, तथा दक्षिण में दक्षिण ध्रुवीय महासागर से घिरा है। विश्व में केवल यही एक महासागर है जिसका नाम किसी एक देश के नाम यानी हिन्दुस्तान (भारत) के नाम पर है। हिन्द महासागर में स्थित प्रमुख द्वीप है; मेडागास्कर विश्व का सबसे बड़ा चौथा द्वीप है, रीयूनियम द्वीप, कोमोरस, सेशेल्स, मालदीव, मॉरिशस, श्रीलंका और इंडोनेशिया का द्वीप समूह है। बींसवी शताब्दी तक हिन्द महासागर अज्ञात महासागर के नाम से जाना जाता था लेकिन 1960 से 1965 के बीच अन्तर्राष्ट्रीय हिन्द महासागरीय अभियान के फलस्वरूप इस महासागर की तली के संदर्भ में अनेक विलक्षण तथ्य सामने आए है। इस क्षेत्र में महाशक्तियों की उपस्थिति से भारत, व अन्य प्रायद्विपीय देशों के लिए संकट उत्पन्न हो जायेगा। इस क्षेत्र में कच्चे माल के भण्डार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। विश्व का 37% तेल, 90% रबड़, 70% टिन, 79% सोना, 28% मैंगजीन, 27% क्रोमियम, 16% लोहा, 11.5% टंगस्टन, 11% निकल, 10% जिंक, 98% हीरे और 60%यूरेनियम इस क्षेत्र में पाये जाते है। हिन्दमहासागर में अमेरिका सोवियत, रूस व चीन की उपस्थिति व बढ़ती सैनिक गतिविधियों ने भारत सहित इस समुद्री क्षेत्र के तटीय देशों की चिन्ता में बढ़ोत्तरी कर दी है। अमेरिका व चीन इस क्षेत्र पर नियन्त्रण स्थापित कर न केवल अपनी आर्थिक शक्ति को मजबूत करने का प्रयास कर रहे है बल्कि यहाँ अपनी नौसेनिक शक्ति स्थापित कर विश्व पर नियन्त्रण स्थापित करना चाहते है। चीन भारत को घेरने की नीति के अन्तर्गत नेपाल, भूटान, म्यांमार, बांग्लादेश व श्रीलंका से पूर्वी रास्ते से सम्बन्ध मजबूत कर रहा है वहीं पश्चिम से पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध मजबूत कर हिन्द महासागर में अपनी सैनिक गतिविधियों को बढ़ा रहा है जिसके परिणामस्वरूप दोनों देशों के मध्य समय-समय पर तनाव उत्पन्न हुआ है। भारत व हिमतक्षेस राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्द महासागर में बढ़ती रणनीतिक गतिविधियों को कम करने व इस क्षेत्र को शान्तिप्रिय क्षेत्र बनाने की मांग की है। इन देशों ने UNO के माध्यम से विश्व का ध्यान इस और खींचा कि इस क्षेत्र में बढ़ती व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा व रणनीतिक गतिविधियां पर्यावरण प्रदुषण को भी बढ़ावा दे रही है।

संकेताक्षर : *उपमहाद्वीप, द्वीपसमूह तली, पारस्परिक, प्रतिद्वन्द्वता, प्रचुर, गतिविधियां, हिमतक्षेस, रणनीतिक, नाभिकीय, जनसंहार।*

हिन्द महासागर दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा समुद्र है और पृथ्वी की सतह पर उपस्थित पानी का लगभग 20% भाग इसमें समाहित है। उत्तर में यह भारतीय उपमहाद्वीप से पश्चिम में पूर्वी अफ्रिका, पूर्व में हिन्द चीन, सुंदा द्वीप समूह और आस्ट्रेलिया, तथा दक्षिण में दक्षिण ध्रुवीय महासागर से घिरा है। विश्व में केवल यही एक महासागर है जिसका नाम किसी एक देश के नाम यानी हिन्दुस्तान (भारत) के नाम पर है। हिन्द महासागर में स्थित प्रमुख द्वीप है; मेडागास्कर विश्व का सबसे बड़ा चौथा द्वीप है, रीयूनियम द्वीप, कोमोरस, सेशेल्स, मालदीव, मॉरिशस, श्रीलंका और इंडोनेशिया का द्वीप समूह है।

बीसवी शताब्दी तक हिन्द महासागर अज्ञात महासागर के नाम से जाना जाता था लेकिन 1960 से 1965 के बीच अन्तर्राष्ट्रीय हिन्द महासागरीय अभियान के फलस्वरूप इस महासागर की तली के संदर्भ में अनेक विलक्षण तथ्य सामने आए है।

हिन्द महासागर का भौगोलिक महत्व

19वीं शताब्दी के आरम्भ में अमेरिकी नौसेना के विशेषज्ञ अल्फ्रेड माहन ने कहा था कि ''जो देश हिन्द महासागर पर नियन्त्रण करेगा व ही एशिया में अपना वर्चस्व स्थापित करेगा। यह महासागर सात समुन्द्रों की कुंजी है, 21वीं शताब्दी में विश्व का भाग्य निर्धारण इसकी समुद्री सतह पर होगा।'' वर्तमान समय में हिन्द महासागर सर्वाधिक अशान्त क्षेत्र है तथा महाशक्तियों की प्रतिस्पर्द्धा का केन्द्र है इस क्षेत्र में महाशक्तियों की पारस्परिक प्रतिद्वन्द्वता के प्रमुख कारण निम्नलिखित है।

1. द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति (1945) के पश्चात् विश्व की महाशक्तियों को जब इसके महत्व का ज्ञान हुआ तो विश्व की महाशक्तियाँ विशेषकर अमेरिका और रूस ने इस क्षेत्र में अपनी उपस्थिति बढ़ानी प्रारम्भ कर दी।

2. हिन्द महासागर का महत्व इसके जल मार्गों व इस क्षेत्र में पाया जाने वाला कच्चा माल है। इस क्षेत्र में महाशक्तियों की उपस्थिति से भारत, व अन्य प्रायद्विपीय देशों के लिए संकट उत्पन्न हो जायेगा। इस क्षेत्र में कच्चे माल के भण्डार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। विश्व का 37% तेल, 90% रबड़, 70% टिन, 79% सोना, 28% मैंगजीन, 27% क्रोमियम, 16% लोहा, 11.5% टंगस्टन, 11% निकल, 10% जिंक, 98% हीरे और 60% युरेनियम इस क्षेत्र में पाये जाते है।

सोवियत लेखक येवगेनी रुम्यांत्सेव ने अपनी पुस्तक 'हिन्द महासागर : शान्ति और सुरक्षा की समस्याएं' में लिखा है ''संयुक्त राज्य अमेरिका यहां से 40 प्रकार का कच्चा माल ले जाता है। जापान अपनी तेल की प्रायः शत प्रतिशत मांग फारस की खाड़ी के तेल से पूरी करता है। हिन्द महासागर के देशों से ही वह 75% लौह अयस्क, 35% कोक कोयला, 90% बॉक्साइट, जिंक, प्राकृतिक रबड़ का आयात करता है।''

हिन्द महासागर विश्व का तीसरा बड़ा महासागर है। यह 10,400 किलोमीटर लम्बा, 9,600 किलोमीटर चौड़ा है। यह विश्व के 20.3% समुद्री क्षेत्र में फैला हुआ है और 47 राज्य उसके तटों को छूते हैं। पूरब से पश्चिम की दिशा में यह आस्ट्रेलिया से अफ्रीका तक और उत्तर से दक्षिण में यह केप कोमोरिन से अटलांटिक महाद्वीप तक फैला हुआ है।

इसका जल आस्ट्रेलिया, एशिया और अफ्रीका के तीन महाद्वीपों को छूता है। मलक्का जलडमरूमध्य तथा स्वेज नहर के बीच से यह क्रमशः प्रशान्त महासागर के तीन महाद्वीपों को छूता है। तीसरे विश्व के अधिकांश राष्ट्र इसके तट पर स्थित हैं या इसके भीतरी प्रदेश में हैं। इसके 36 तटवर्ती और 11 भीतरी देश हैं। इस विशाल जल क्षेत्र में सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण द्वीप और प्रवालद्वीप हैं। आस्ट्रेलिया द्वीप तो पूरा महाद्वीप ही है।

एक परिवहन मार्ग के नाते हिन्द महासागर का महत्व अपार है। यूरोप, पूर्वी अफ्रीका, पश्चिमी, दक्षिणी और दक्षिण–पूर्वी एशिया, सुदूरपूर्व, आस्ट्रेलिया तथा ओशियाना को जोड़ने वाले जल एवं वायु मार्ग यहां से गुजरते हैं।

हिन्द महासागर अटलांटिक और प्रशान्त महासागरों को जोड़ता है। जल मार्गों का जाल यहां सबसे घना है। उदाहरणार्थ, संसार में टैंकरों द्वारा ढोये जाने वाले खनिज तेल का 57 प्रतिशत ओर्मुज जलमडरूमध्य से होकर जाता है।

हर ग्यारह मिनट में एक जहाज यहां से गुजरता है। कुछ समय पहले इस मार्ग से माल से लदे ईस्ट इण्डिया कम्पनी के जहाजों का ही आना–जाना होता था, परन्तु आज अमरीका व रूस की पनडुब्बियां यहां से आती–जाती हैं एवं तेल से भरे सैकड़ों जहाज प्रत्येक माह जापान, यूरोप एवं उत्तरी व दक्षिणी अमरीका जाने के लिए हिन्द महासागर से होकर ही गुजरते हैं, क्योंकि इनके लिए यही मुख्य मार्ग बन गया है।

हिन्द महासागर के ऊपर से जाने वाले वायुमार्गों का महत्व भी इधर बहुत बढ़ गया है। इनकी कुल लम्बाई दस लाख किलोमीटर से अधिक है। अन्तर–महाद्वीप वायुमार्गों की सेवाएं प्रदान करने वाले विश्व के 240 हवाई–अडों में से लगभग एक–तिहाई हिन्द महासागर क्षेत्र के देशों में हैं। हाल के वर्षों में अण्टार्कटिका के महत्व में भारी वृद्धि हुई है। अण्टार्कटिका के आर्थिक दोहन के दौर में निश्चय ही हिन्द महासागर के महत्व में भारी वृद्धि होगी।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस क्षेत्र

में शान्ति और सहयोग का वातावरण बनाना तथा ऐसी परिस्थितियां पैदा करना कितना आवश्यक है जिनमें सभी अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अनुरूप हिन्द महासागर का निर्बाध उपयोग कर सकें।

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व हिन्द महासागर के अधिकांश तटवर्ती क्षेत्रों पर ब्रिटेन का नियन्त्रण था तथा हिन्द महासागर को ब्रिटेन की झील के नाम से पुकारा जाता था। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के साथ हिन्द महासागर के तटवर्ती क्षेत्रों से ब्रिटेन का प्रभुत्व समाप्त होने लगा; 1966 में ब्रिटेन ने स्वेज से पूर्व में स्थित अपने नौ–सैनिक अड्डों को धीरे–धीरे समाप्त करने की घोषणा कर दी। इससे यह क्षेत्र महाशक्तियों की राजनीति का एक प्रधान अखाड़ा बन गया।

इस सम्बन्ध में तीन दृष्टिकोण प्रचलित हैं

1. यह कहा जाता है कि हिन्द महासागर में अमरीकी हित उसकी साम्राज्यवादी महत्वकांक्षाओं से प्रेरित है तथा वह जानबूझकर सोवियत प्रसारवाद का भूत खड़ा कर रहा है।

2. शीत युद्ध से उत्पन्न भय ने कतिपय विद्वानों का मत है कि हिन्द महासागर में रूचि शीत–युद्ध का हिन्द महासागर को आकर्षण के केन्द्र बना दिया है।

3. कतिपय चीनी और अमरीकी कूटनीतिज्ञ किसिंगर आदि यह मानते हैं कि सोवियत संघ इस क्षेत्र में अपना आधिपत्य स्थापित करने को लालायित रहा है।

भारत और आस्ट्रेलिया को छोड़कर किसी तटवर्ती देश के पास बड़ी नौसेना नहीं है और भारत और आस्ट्रेलिया की नौ–सेनाएं भी बाहरी शक्तियों की नौसेनाओं की तुलना में बहुत साधारण हैं। बाहरी शक्तियों के हस्तक्षेप की स्थिति में महासागरीय क्षेत्र कमजोर और असुरक्षित होता है।

1960 के दशक के अन्तिम वर्षों में ब्रिटिश नौसेना ने इस क्षेत्र से हटना प्रारम्भ कर दिया। इससे इस महासागर में अन्य शक्तियों की गतिविधियां प्रारम्भ हो गयीं। इन शक्तियों के इस क्षेत्र में रूचि के कारण व्यापारिक, राजनीतिक, सामरिक महत्व है।

इस समय इस महासागर में भारतीय नौसेनिक बेड़ा है अमरीका का सातवां नौसैनिक बेड़ा है रूस की पनडुब्बियां और लड़ाकू जहाज हैं ब्रिटेन और फ्रांस के घटते हुए पर महत्वपूर्ण नौसैनिक हित हैं तथा चीन और जापान की उभरती हुई नौसैनिक उपस्थिति है। इस समय कुल मिलाकर हिन्द महासागर में 181 विदेशी युद्धपोत तैनात हैं। इनमें से अमरीका के 77, रूस के 40, ब्रिटेन के 18 ओर फ्रांस के 33 युद्धपोत शामिल हैं।

हिन्द महासागर में अमरीकी उपस्थिति

हिन्द महासागर में अमरीका की उपस्थिति सन् 1949 के बाद से ही देखी जा सकती है जब उसने साम्यवाद के प्रतिरोध की नीति अपना ली थी। अमरीका ने हिन्द महासागर क्षेत्र से अपनी उपस्थिति का विस्तार उस समय करना प्रारम्भ किया जब ब्रिटेन ने यह संकेत दिया था कि वह हिन्द महासागर क्षेत्र से हटने की मजबूरी में है।

अमरीकी विचारकों का मत था कि हिन्द महासागर क्षेत्र से ब्रिटिश वापसी से वहां एक शक्ति–शून्य क्षेत्र उत्पन्न हो जायेगा जिसका भरा जाना आवश्यक है। अगस्त 1964 में आंग्ल–अमरीकी संयुक्त दल ने सैनिक अड्डों के लिए द्वीपों के चुनाव के निमित्त हिन्द महासागर का संयुक्त सर्वेक्षण किया।

सन् 1965 में BIOT (British Indian Ocean Territory) के निर्माण के पश्चात ब्रिटेन ने दिसम्बर, 1966 में अमरीका के साथ पचास वर्षीय द्विपक्षीय समझौता (2016 तक) करके ब्रिटेन ने चागोस द्वीप समूह स्थित डियागोगार्सिया अड्डे का रक्षा उद्देश्यों हेतु विकसित करने का अधिकार दे दिया।

13 मील लम्बे व 6 मील चौड़े इस अड्डे को नौसैनिक सुविधाओं से सुसज्जित करने हेतु अमरीका ने लगभग 50 मिलीयन डॉलर व्यय करके विश्व के प्रमुख अड्डे के रूप में विकसित कर लिया है। अमरीका ने त्वरित प्रविस्तार टुकड़ी (आर.डी.एफ.) व सेण्ट्रल कमाण्डर के मुख्य आधार के रूप में अत्याधुनिकतम रक्षा व संचार सुविधाओं से सुसज्जित डियागोगार्सिया की सामरिक उपादेयता यमन संघर्ष (1979–81), ईरान–ईराक संघर्ष (1979–81), डिजर्ट स्टार्म (1990–91) व ऑपरेशन इराकी फ्रीडम में पुष्टी हो चुकी है।

यह अडड़ा न केवल अमरीका के पेसिफिक कमाण्ड का हिस्सा है अपितु उसके बी–52 बमवर्षकों व अमरीकी लड़ाकू कमाण्ड का आधार भी है। हिन्द महासागरीय क्षेत्र में अमरीका के न्यस्त आर्थिक हित बड़े महत्वपूर्ण हैं। अर्थशास्त्रियों की गणनाओं के अनुसार हिन्द महासागर क्षेत्र के देशों की अर्थव्यवस्थाओं में अमरीका का सीधा पूंजी–निवेश दस अरब डॉलर से अधिक का

है। विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था में लगाये गये हर डॉलर से अमरीका 4.25 डॉलर का लाभ पाता है। जिन देशों से यह लाभ पाया जाता है, उनमें अधिसंख्य हिन्द महासागर क्षेत्र में ही स्थित हैं। हिन्द महासागर में अमरीका की उपस्थिति का अन्दाजा इस बात से लगाया जा सकता है, कि इसमें उसके ने केवल स्थायी सैनिक अडड़े उसे अनेक देशों की हवाई पट्टियों और बन्दरगाहों के प्रयोग की सुविधाएं भी उपलब्ध हैं। उसके परमाणु अस्त्रों से लैस युद्धपोत इसमें निरन्तर गश्त लगाते हैं।

अमरीका का 'निमित्ज' नामक विमान वाहक जहाज भी यहां विद्यमान है। डियागो गार्शिया उसका एकमात्र बन्दरगाह बन गया है। जिन देशों में अमरीका को हवाई पट्टियों या बन्दरगाहों की सुविधाएं उपलब्ध हैं, उनमें प्रमुख हैं- मिश्र में एट्ज्योन का हवाई सैनिक अडा शर्म-अल-शेख का नौसैनिक अड्डे तथा रस बानस का अड्डे सोमालिया में बरबेरा, पाकिस्तान में कराची के पश्चिम में ग्वादर का बन्दरगाह कीनिया में मोम्बासा ओमान में मसीरा हवाई अड्डे और मैराह आस्ट्रेलिया में डार्विन हवाई अड्डे आदि। इसके अतिरिक्त, बहरीन, जिबूती और सऊदी अरब में अमरीका के पास स्थायी अड्डे है।

अमरीका के हिन्द महासागरीय अड्डें में डियागों गार्शिया सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इस अड्डे का संचार नेटवर्क आणविक पनडुब्बियों से प्रक्षेपित सामरिक प्रक्षेपास्त्रों की दिशा निर्धारित करने की क्षमता रखता है। इस अड्डे को नये-नये शस्त्रास्त्रों से सुजज्जित किया जा रहा है। यहां नाभिकीय और रासायनिक अस्त्र रखे गये हैं। भण्डार पोतों को यहां स्थायी लंगर डालकर खड़ा किया गया है। 'डियागो गार्शिया' अमरीका का न केवल नौसैनिक अड्डे ही है, वरन् यहां पर वायुसैनिक अड्डों का भी निर्माण किया गया है। डियागों गार्शिया पर अपनी सैनिक शक्ति को सुदृढ़ करके अमरीका एशिया और अफ्रीका के महाद्वीपों पर अपने प्रभाव का विस्तार करना चाहता है और सोवियत संघ के नौसैनिक रास्तों पर नजर रखने लगा है।

हिन्द महासागर में सोवियत उपस्थिति

सोवियत संघ भी अपनी सुरक्षा के नाम पर हिन्द महासागर क्षेत्र में सक्रिय रहा है। 1967 में ब्रिटेन द्वारा स्वेजपूर्व के नौसैनिक अड्डों को छोड़ देने की घोषणा के बाद हिन्द महासागर में प्रथम बार सोवियत नौसैनिक गतिविधियों की शुरूआत हुई।

मार्च, 1968 में पांच युद्धपोतों का एक सोवियत नौसैनिक स्कैड्रन दक्षिण एशिया अरब सागर फारस की खाड़ी लालसागर और पूर्वी अफ्रीका के बन्दरगाहों में पहुंचा। उसके बाद अनेक वर्षों तक सोवियत संघ का एक नौसैनिक स्कैड्रन हिन्द महासागर की यात्रा करता रहा। 1979 से सोवियत संघ से हिन्द महासागर में अधिक संख्या और अधिक बार युद्धापोत भेजना प्रारम्भ कर दिया।

लगभग 20 से 40 सोवियत जहाज इस क्षेत्र में लगातार उपस्थित रहने लगे। बाद में सोवियत संघ ने सोकोतरा द्वीप अदन, होदेदा, सिचेलेस और कम्पूचिया में कुछ सुविधाएं प्राप्त कीं, परन्तु अमरीका के समान कोई स्थायी सैनिक या असैनिक अड्डा प्राप्त नहीं किया। सोवियत संघ के अनुसार अपनी सुरक्षा के खातिर ही उसे हिन्द महासागर में अपने युद्धपोत रखने पड़ रहे हैं। सोवियत संघ के यहां कभी कोई अड्डे नहीं रहे और न ही वह कोई अड्डा बनाने का इरादा रखता था।

हिन्द महासागर में चीन की उपस्थिति

हाल ही में चीन भी हिन्द महासागर में रूचि लेने लगा है। सोवियत रिक्तता की पूर्ति एवं वैश्विक स्तर पर अपनी शक्ति की अभिवृद्धि हेतु व्यावसायिक व नौसैन्य में चीन की बढ़ रही गतिविधियां हिन्द महासागरीय क्षेत्र की सुरक्षा में अत्यधिक चिन्ता का विषय है।

'पीपुल लिबरेशन आर्मी नेवी' (PLAN) की त्रिस्तरीय विस्तारवादी नीतियां संघर्ष के नए सोपान की द्योतक हैं जिसके अन्तर्गत उसने 2000-2020 ई. तक हिन्द महासागरीय क्षेत्र में एअर-क्राफ्ट कॅरियर, नाभिकीय पनडुब्बियां, बैलिस्टिक व क्रूज मिसाइलों, सतही लड़ाकू पोतों व एअर क्राफ्ट की संख्या सामर्थ्य में वृद्धि करके वर्चस्व-रणनीति निर्धारित की है।

चीन जहां एक ओर होरमुज स्ट्रेट के निकट पाकिस्तान के 'ग्वादर' में बन्दरगाह सुविधाएं विकसित कर रहा है, वहीं पूर्व में 'कोको द्वीप' पर सामरिक सुविधाएं विकसित करके भारत की सामुद्रिक घेरेबन्दी करने हेतु गम्भीर कदम उठा रहा है।

इसके अतिरिक्त म्यांमार में सैन्य सुविधाएं विकसित कर, चीन क्षेत्रीय समुद्री मार्ग विकसित करने की दूरगामी कोशिश में है। म्यांमार का सामरिक दृष्टि से उभार भारत व दक्षिण पूर्व एशियाई सामरिक हितों के लिए भावी चुनौती का नवीन आयाम है। भारत द्वारा

म्यांमार को सामरिक सहयोग देने के बावजूद वह चीन के माध्यम से भारत के इन्सर्जेट्स को सहायता कर रहा है।

चीन–अमरीकी स्पर्धा के अतिरिक्त हिन्द महासागर से संलग्न क्षेत्र में अन्तर्राज्य–संघर्षों व आतंकवादी गतिविधियों के फलस्वरूप जहां एक ओर सामुद्रिक संचार सेवाओं (SLOCs) की सुरक्षा के समक्ष गम्भीर खतरे उत्पन्न हो गए हैं वहीं हिन्द महासागरीय क्षेत्र के कुछ देशों में इस्लामिक कट्टरपंथ के उद्‌य ने इसे 'जेहादी आतंकवादी की झील' (Lake of Jahadi Terrorism) में परिवर्तित कर दिया है।

होरमुज व दक्षिण पूर्वी स्ट्रेट में 'फ्री एसे मूवमेण्ट' (Free Aceh Movement) मोरे इस्लामिक लिबरेशन फ्रण्ट (More Islamic Liberation Front) व अबू सयाफ (Abu Sayyaf) जैसे सामुद्रिक आतंकवादी संगठनों का उदय तथा समाह इस्लामियाह (I-Jammah Islamiyah), अलकायदा (Al Qaida) आदि बेड़े आतंकवादी संगठनों से इनकी संलग्नता हिन्द महासागर के तटीय राष्ट्रों की सुरक्षा के लिए चिन्ताजनक है।

इस प्रकार इसे महाशक्तियों की सीनाजोरी ही कहा जायेगा कि वे तटवर्ती देशों की मांग की उपेक्षा करके हिन्द महासागर के शान्त जल को अशान्त बनाने पर तुली हुई है। महाशक्तियाँ हिन्द महासागर को अपने शक्ति प्रदर्शन का अखाड़ा बना सकती हैं, इस सम्भावना को ध्यान से रखते हुए ही भारत ने 1975 में हिन्द महासागर को 'शान्त क्षेत्र' घोषित किये जाने की मांग उठायी थी।

पर्यावरण प्रदूषण के खतरे

हिन्द महासागर पर पर्यावरण प्रदूषण का प्रकोप कुछ अधिक ही रहा है। वर्तमान समय में सैनिक खतरों से भी अधिक गम्भीर खतरा पर्यावरण प्रदूषण से है जिसके कारण इस महासागर के अस्तित्व का प्रश्न उठ खड़ा हुआ है।

हिन्द महासागर विश्व के दो प्रमुख जल मार्गों में से एक है। जिन देशों में जलमार्ग के माध्यम से तेल की आपूर्ति होती है, उनके जहाज प्रायः इसी महासागर से होकर जाते हैं, इस कारण इस मार्ग पर चलने वाले तेल के टैंकरों से रिसने वाला तेल हिन्द महासागर में गिरता है, एवं पानी को प्रदूषित करता है। इतना ही नहीं, इस महासागर में ही तेल के खाली टैंकरों को धोया भी जाता है। इस प्रकार तेल का कचरा भी अत्यधिक मात्रा में समुद्र के पानी में मिल जाता है।

समुद्र के बीच में जहाजों को धोना जहाजरानी व पर्यावरण कानून का खुल्लमखुल्ला उल्लंघन है। वैज्ञानिकों का मानना है, कि टैंकरों से गिरा कुछ तेल समुद्र के जल में मिल जाता है, बाकी तेल कचरे के साथ ठोस पिण्ड बनकर समुद्र के तल में बैठ जाता है।

कुछ तेल तेज लहरों के साथ समुद्र तट पर आ जाता है, परन्तु जो तेल कचरा रहित समुद्र के तल में बैठ जाता है उससे प्रति वर्ष हजारों टन के ठोस पिण्ड समुद्र में बन जाते हैं। ये पिण्ड लगातार पर्वताकार होते जा रहे हैं।

भारतीय दृष्टिकोण

इस महासागर की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियां सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही भारतीय उपमहाद्वीप से जुड़ी हैं। हिन्द महासागर की कुल तटरेखा का 12.5 प्रतिशत भाग भारतीय तट रेखा है।

हिन्द महासागर में भारत के लगभग 1,156 द्वीप हैं। इनकी सुरक्षा और विकास का उत्तरदायित्व भारत पर है। भारत का लगभग 98 प्रतिशत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हिन्द महासागर के मार्ग से होता है। उल्लेखनीय है कि भारत का समुद्री क्षेत्र करीब 24 लाख वर्ग किमी है।

इसका आर्थिक दोहन हिन्द महासागर की शान्ति पर निर्भर करता है। भारत का लगभग 63 प्रतिशत पेट्रोलियम और खनिज तेल समुद्री क्षेत्रों से ही प्राप्त होता है। हिन्द महासागर में अनेक छोटे देश हैं जिनके हितों की सुरक्षा में भारत की रूचि है।

भारत की विदेश नीति के क्रमिक विकास का सम्यक दृष्टिपात से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत ने वृहत् अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति तथा हिन्द महासागर की क्षेत्रीय राजनीति के मध्य एक सन्तुलन तलाशने की कोशिश की है। इसने सार्क, हिमतक्षेस का गठन करने के साथ ही साथ आसियान के साथ अपने सम्बन्धों को लगातार बढ़ाया है।

एशिया महाद्वीप में सामान्य स्थिति में उत्पन्न जटिलता को देखते हुए भारत अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा तभी सुनिश्चित कर सकता है, जबकि न केवल उसकी सीमाओं से लगे भागों में, बल्कि सारे एशिया में तनाव में शिथिलता आये, शान्ति और स्थिरता का वातावरण बने।

यही कारण है कि भारतीय नेता दक्षिणी एशिया में तनाव बढ़ाये जाने और हिन्द महासागर का सैन्यीकरण करने के विरोध को, दक्षिण–पूर्वी और दक्षिण पश्चिमी तथा सुदूरपूर्व में राजनीतिक नियमन लाने में सहयोग को देश की विदेश नीति के प्रमुख कार्यभारों में गिनते हैं।

भारत की प्रायद्वीपीय स्थिति ने हिन्द महासागर के भू–राजनीतिक व भू–सामरिक महत्ता को और भी बढ़ा दिया है। महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग होने के कारण ही विश्व की बड़ी शक्तियां इस क्षेत्र पर नियन्त्रण स्थापित कर न केवल अपने भू–आर्थिक व राजनीतिक हितों की पूर्ति चाह रही हैं अपितु शक्ति राजनीति के माध्यम से अपने वर्चस्व व प्रभाव–वृद्धि हेतु सतत तत्पर हैं।

अमरीकी नौसेना के भूतपूर्व कमाण्डर एच.जे. गिंपल का मत है कि –''चूंकि विश्व का ज्यादातर भाग पानी है समुद्र है इसलिए जाहिर है कि तूती उसी की बोलेगी जो महासागरों पर वर्चस्व रखेगा और महासागरों पर कब्जा करने की सबसे आसान तरकीब है कि महासागरों में छितरे हुए द्वीपों पर कब्जा करके वहां सैनिक अड्डे कायम कर लेना ताकि आवश्यकता पड़ने पर कहीं भी सैनिक मदद भेजी जा सके।''

हिन्द महासागर के बढ़ते सैन्यीकरण पर भारत में उचित ही चिन्ता व्याप्त हो रही है। इस सैन्यीकरण का भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के हितों पर सीधा प्रभाव पड़ता है। वस्तुतः भारत के व्यापक राष्ट्रीय सुरक्षात्मक और आर्थिक हित इसके शान्त बने रहने पर निर्भर करते हैं। निम्नलिखित कारकों से भारत के लिए हिन्द महासागर महत्वपूर्ण है।

- हिन्द महासागर का जल भारत को तीन दिशाओं से छूता है। इसके शान्त और स्थिर रहने से उसकी समुद्री सीमाएं सुरक्षित हैं।
- भारत की सीमाएं हिन्द महासागर में सैकड़ों मील दूर तक चली गयी हैं। उसमें स्थित सैकड़ों द्वीपों की सुरक्षा इसके शान्त बने रहने पर ही निर्भर करती है। उदाहरणार्थ केवल बंगाल की खाड़ी में उसके 667 द्वीप हैं और अरब सागर में 508 द्वीप हैं। अण्डमान और निकोबार द्वीपों की सुरक्षा, जो भारतीय तट से क्रमशः 500 अरि 700 मील दूर हैं इसके शान्त बने रहने पर ही निर्भर करती है।
- भारत को दूसरे क्षेत्रों और महाद्वीपों से जोड़ने वाले समुद्री और वायु मार्ग यहां से गुजरते हैं। इन मार्गों की सुरक्षा उसके लिए बुनियादी महत्व का प्रश्न है। यह बात देश की 6 हजार किलोमीटर से अधिक लम्बी समुद्री सीमा के लिए भी सही है और देश के प्रमुख औद्योगिक एवं सांस्कृतिक केन्द्रों के लिए भी, क्योंकि वे मुख्यतः सागर तट पर या उससे थोड़ी दूर ही स्थित हैं।
- हिन्द महासागर के अनेक द्वीपों में जैसा कि श्रीलंका, मालदीव, मॉरीशस, सेशेल्स आदि में भारतीय मूल के अनेक लोग निवास करते हैं उनके हितों और अधिकारों की रक्षा की भी आवश्यकता है।
- तेल और दूसरे खनिज भण्डारों के दोहन की, मत्स्य पालन के विकास की भारत की व्यापक योजनाएं भी सागर से ही जुड़ी हुई है। स्पष्ट ही है कि ये योजनाएं शान्तिपूर्ण हैं। इनका ध्येय देश की आर्थिक उन्नति करना जनता की खुशहाली बढ़ाना है। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट है कि अमरीका द्वारा हिन्द महासागर के सैन्यीकरण से भारत की सुरक्षा के लिए खतरा है।

भारतीय विद्वान जेड़ इमाम ने चिन्ता व्यक्त करते हुए पैट्रियट में लिखा है – ''डियागो गार्शिया अड्डे से छोड़े गये नाभिकीय अस्त्रयुक्त प्रक्षेपास्त्र कुछ मिनटों में ही नई दिल्ली पहुंच सकते हैं।'' अतः हिन्द महासागर के परिप्रेक्ष्य में भारत इस समूचे क्षेत्र को 'शान्ति क्षेत्र' घोषित करने तथा इस प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाने के समर्थन में अपनी आवाज बुलन्द करता आया है।

हिन्द महासागर में शान्ति क्षेत्र के प्रश्न का अपना इतिहास है। 1964 में यह विचार रखा गया था कि इस महासागर को 'शान्ति और चैन' का क्षेत्र घोषित करने सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय समझौता किया जाय। ऐसा प्रस्ताव काहिरा में हो रहे गुटनिरपेक्ष देशों के दूसरे सम्मेलन में श्रीलंका ने रखा था।

एशिया और अफ्रीका के गुटनिरपेक्ष देशों ने इस पहल का समर्थन किया। परिणामस्वरूप काहिरा सम्मेलन के प्रस्ताव में यह परामर्श प्रकट हुआ कि सर्वप्रथम उन महासागरों को परमाणु अस्त्र–रहित क्षेत्र घोषित किया जाये, जहां अभी ऐसे अस्त्र नहीं पहुंचे हैं। हिन्द महासागर में फौजी अड्डे बनाने के साम्राज्यवादी राज्यों के इरादे की सम्मेलन में भर्त्सना की गयी।

सातवें और आठवें दशक में हिन्द महासागर को

परमाणु अस्त्र–रहित घोषित करने का विचार अधिसंख्य तटवर्ती देशों के लिए अपर्याप्त हो गया था। वे अब अपना लक्ष्य यह मानते थे कि इस महासागर में न केवल नाभिकीय अस्त्रों को आने दिया जाये बल्कि यहां साम्राज्यवादी ताकतों की सैनिक उपस्थिति को ही रोका जाये। इस प्रकार उपर्युक्त विचार का आगे विकास हुआ है हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करने का प्रश्न अधिकाधिक सक्रिय रूप से उठाया जाने लगा।

संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्द महासागर का मुद्दा

1970 में लुसाका में हुए गुटनिरपेक्ष देशों के तीसरे शिखर सम्मेलन में श्रीलंका ने यह प्रस्ताव रखा कि संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र बनाने सम्बन्ध पेशकश की जाये। इस सम्मेलन में स्वीकृत 'संयुक्त राष्ट्र के बारे में प्रस्ताव' में सम्मेलन के सहभागियों ने एक ऐसा घोषणा–पत्र तैयार करने का समर्थन किया जिसमें सभी देशों से आह्वान किया जाये कि वे हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र मानें, वहां थलसेना, नौसेना, वायुसेना किसी का भी कोई विदेशी अड्डा न हो और साथ ही इस क्षेत्र में नाभिकीय अस्त्र न लगाये जायें।

संयुक्त राष्ट्र महासभा के 26वें अधिवेशन में 16 दिसम्बर, 1971 को हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करने सम्बन्धी घोषणा–पत्र स्वीकार किया गया। इसका मसौदा निम्न 13 देशों ने तैयार किया–इराक, ईरान, कीनिया, जाम्बिया, तंजानिया, बुरुण्डी, भारत, यमन, युगाण्डा, यूगोस्लाविया, श्रीलंका, सोमाली और स्वाजीलैण्ड।

इस घोषणा–पत्र में कहा गया था कि संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा यह विश्वास रखते हुए कि विशाल भौगोलिक क्षेत्र में शान्ति क्षेत्र की स्थापना समानता और न्याय के आधार पर सार्विक शान्ति लाने पर सुप्रभाव डाल सकती है, संयुक्त राष्ट्र संघ के ध्येयों और सिद्धान्तों के अनुरूप–''घोषणा करती है कि हिन्द महासागर को उन सीमाओं में जिन्हें अभी निर्धारित किया जाना है, इसके ऊपर फैले आकाशीय क्षेत्र तथा उसके समुद्र तल सहित इस प्रस्ताव द्वारा चिरकाल के लिए शान्ति क्षेत्र घोषित किया जाता है।''

घोषणा–पत्र में बड़े देशों से आह्वान किया गया कि वे हिन्द महासागर में सैनिक उपस्थिति का विस्तार रोकने, यहां से अपने सभी फौजी अड्डे, फौजी ठिकाने नाभिकीय संयन्त्र और जनसंहार के शस्त्रास्त्र हटाने तथा अपनी सैनिक उपस्थिति का प्रदर्शन समाप्त करने के उद्देश्य से तटवर्ती देशों इस क्षेत्र के निकटवर्ती देशों सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्य देशों का भी आह्वान किया गया कि वे इस बात को आवश्यक प्रत्याभूति दें कि हिन्द महासागर के क्षेत्र में जो युद्धपोत और वायुसैनिक टुकड़ियां हैं, वे बल प्रयोग का खतरा पैदा नहीं करेंगी, वे हिन्द महासागर के तटवर्ती या निकटवर्ती किसी देश की सम्प्रभुता क्षेत्रीय अखण्डता या स्वतन्त्रता को खतरे में ने डालें।

26वें अधिवेशन में इस प्रस्ताव के पक्ष में 61 देशों ने मत दिया और 55 ने मतदान में भाग नहीं लिया। इसके विरुद्ध किसी ने मत नहीं दिया। सन् 1993 में महासभा ने हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र बनाने का संकल्प पारित किया। इस संकल्प में हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करने की 1971 की घोषणा का अनुसरण किया गया। संक्षेप में, भारत हिन्द महासागर क्षेत्र में लगभग आधी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है अतः इस क्षेत्र में मुख्य भूमिका निभाने के लिए प्रत्यनशील है।

भारत इस बात का समर्थन करता है कि

- हिन्द महासागर शान्ति क्षेत्र घोषित किया जाय सभी विदेशी अड्डों का उन्मूलन हो;
- यहां नाभिकीय शस्त्रास्त्र तथा जनसंहार के दूसरे शस्त्रास्त्र न लगाये जायें;
- तटवर्ती और तटेतर देशों के विरुद्ध नाभिकीय अस्त्रों का उपयोग न हो और सभी नाभिकीय राष्ट्र तत्सम्बन्धी दायित्व ग्रहण कर लें;
- यहां ऐसी सशस्त्र सेनाएं और शास्त्रास्त्र न रखे जायें जो इस क्षेत्र के देशों की सम्प्रभुता, क्षेत्रीय, अखण्डता और स्वतन्त्रता के लिए खतरा पेश करें।

हिन्दमहासागर में अमेरिका सोवियत, रूस व चीन की उपस्थिति व बढ़ती सैनिक गतिविधियों ने भारत सहित इस समुद्री क्षेत्र के तटीय देशों की चिन्ता में बढ़ोत्तरी कर दी है। अमेरिका व चीन इस क्षेत्र पर नियन्त्रण स्थापित कर न केवल अपनी आर्थिक शक्ति को मजबूत करने का प्रयास कर रहे है बल्कि यहाँ अपनी नौसेनिक शक्ति स्थापित कर विश्व पर नियन्त्रण स्थापित करना चाहते है। चीन भारत को घेरने की नीति के अन्तर्गत नेपाल, भूटान, म्यांमार, बांग्लादेश व श्रीलंका से पूर्वी रास्ते से सम्बन्ध मजबूत कर रहा है वहीं पश्चिम से

पाकि्स्तान के साथ सम्बन्ध मजबूत कर हिन्द महासागर में अपनी सैनिक गतिविधियों को बढ़ा रहा है जिसके परिणामस्वरूप दोनों देशों के मध्य समय–समय पर तनाव उत्पन्न हुआ है। भारत व हिमतक्षेस राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्द महासागर में बढ़ती रणनीतिक गतिविधियों को कम करने व इस क्षेत्र को शान्तिप्रिय क्षेत्र बनाने की मांग की है। इन देशों ने UNO के माध्यम से विश्व का ध्यान इस और खींचा कि इस क्षेत्र में बढ़ती व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा व रणनीतिक गतिविधियां पर्यावरण प्रदूषण को भी बढ़ावा दे रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *शरण, हरि एवं सिन्हा, हर्ष कुमार, ''हिन्द महासागर : चुनौतियाँ एवं विकल्प'', प्रत्यूष प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2012, पृ.सं. 1*
2. *स्ट्रैटिजिक एनालिसिस, जनवरी 1999, पृ.सं. 1515.*
3. *(http://meaindia.nic.in/speegh/2006/05/26550.htm)*
4. *दि हिन्दू, नई दिल्ली, मई 27, 2006.*
5. *प्रसन्ना आर. ''पुलिसिंग दि ब्लू वाटर'', द वीक, 14 सितम्बर, 2003, पृ.सं. 16.*
6. *कासिम, एस.जेड., ''गिलिम्स ऑफ द इण्डियन ओशन'', यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद, 1998, पृ.सं. 168.*
7. *इण्डियन डिफेंस ईयर बुक, नई दिल्ली, 2003, पृ.सं. 144.*
8. *स्ट्रैटिजिक डाइजेस्ट, आई.डी.एस.ए. नई दिल्ली, नवम्बर 2002, पृ.सं. 1385*
9. *www.indiancostguard.nic.in*
10. *टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 12 फरवरी, 1998*
11. *हिन्दुस्तान टाइम्स, मुम्बई, अक्टूबर 10, 2010.*
12. http://www.baratralcshalc.com/navy/link.html.
13. *द हिन्दू, नई दिल्ली, 7 जून, 2009.*
14. *टाइम्स ऑफ इण्डिया, लखनऊ, 30 नवम्बर, 2003.*
15. *डिफेंस वीक, 22 सितम्बर, 2003.*
16. *व हिन्दू, नई दिल्ली, 10 सितम्बर, 2003.*
17. *डिफेंस न्यूज, 22 सितम्बर 2003*

सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह (बजाज ऑटो लिमिटेड के संदर्भ में)

संजय कुमार
सहायक आचार्य, स्व. राजेश पायलट राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बांदीकुई

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

सामाजिक उत्तरदायित्व निर्वहन की दिशा में निजी कम्पनियाँ अपना योगदान निरंतर देती रही है । इसी कड़ी में बजाज ऑटो लिमिटेड का योगदान भी उल्लेखनीय है जिसने अपनी 35 परियोजनाओं के माध्यम से सामुदायिक विकास के कार्यों में सहायता कर रही है। बजाज ऑटो लिमिटेड के द्वारा न केवल मानव विकास की योजनाओं पर कार्य किया जा रहा है बल्कि पशुओं के चारे और स्वास्थ्य की देखभाल के लिए योजनायें संचालित कर रखी हैं। बजाज ऑटो लिमिटेड द्वारा स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यावरण, खेल, पेयजल, आदिवासी कल्याण योजनाओं के साथ साथ सांस्कृतिक विरासत को भी संरक्षित करने के भी प्रयास किये जा रहे है । गाँधीवादी विचारो के प्रचार प्रसार में भी बजाज ऑटो लिमिटेड का सहयोग महत्त्वपूर्ण है।

संकेताक्षर : *निगमीय सामाजिक उत्तरदायित्व, सामाजिक कल्याण, प्रशिक्षण, पुरातत्व संरक्षण, जल संरक्षण परियोजना।*

बजाज ऑटो लिमिटेड निगमीय सामाजिक उत्तरदायित्व संबंधी क्रियाएँ भारतीय कम्पनी अधिनियम 2013 की अनुसूची VII अनुभाग 134 व 135 के अनुसार करती है। कम्पनी राष्ट्र निर्माण हेतु कई परोपकारी व सामाजिक कल्याण संबंधी कार्य करती है। इसमें सामुदायिक विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, बाल व महिला विकास, वरिष्ठ नागरिक सहायता, पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण, संस्कृति संरक्षण तथा खेलों का प्रोत्साहन संबंधी कार्य करती है। कम्पनी द्वारा शिक्षा तथा जीवनयापन के क्षेत्र में कम्पनी द्वारा 35 परियोजनाएँ संचालित है। भारतीय युवा शक्ति ट्रस्ट द्वारा युवा उद्यमिता विकास कार्यक्रम, IBTATA द्वारा महिला विकास व महिलाओं के लिये सखी मॉडल है। शिक्षा की गुणवत्ता तथा आधारभूत सुविधाएँ प्रदान करने के लिये राउण्ड टेबल इण्डिया संगठन बनाया गया, जिसमें 2588 विद्यालयों में निर्माण कार्य किया गया। BAIF संस्था उत्तराखण्ड द्वारा 50 कैटल डवलपमेंट सेंटर उधमसिंह नगर, नैनीताल, चम्पावत, अलमोरा, बांगेश्वर जिलों में बनाये गये। यह केन्द्र अपनी सेवाएँ 500 गाँवो में 27500 परिवारों को देती है। इन क्षेत्रो में मानव जागरूकता, स्वास्थ्य तथा पशुओं के लिये चारा की समस्या निवारण का कार्य करते है। स्वास्थ्य संबंधी 18 परियोजनाएँ संचालित है। जिसमें ₹14.23 करोड़ का व्यय किया गया है। स्वास्थ्य कार्य हेतु रूबी हॉल क्लीनीक द्वारा दूरस्थ क्षेत्रों में मेडिकल कैम्प, प्रवारा मेडिकल ट्रस्ट द्वारा दूरस्थ क्षेत्रों में प्राथमिक उपचार व रोगीवाहन सुविधाएँ प्रदान की जाती है। पर्यावरण संरक्षण संबंधी 9 परियोजनाओं पर ₹16 करोड़ का व्यय किया गया है। फाउण्डेशन फॉर इकोलॉजिकल सिक्योरिटी (गुजरात) के अन्तर्गत भूमि के पतन तथा जल की समस्या दूर की जाती है। राजस्थान के भीलवाड़ा, उदयपुर, राजसमंद, चितौड़गढ़ तथा प्रतापगढ़ जिलो में उक्त फाउण्डेशन ने कार्य किया है। श्रमजीवी जनता सहायता मण्डल (सतारा) द्वारा महाराष्ट्र के 4 गाँवो में कुल क्षेत्र 5224 हैक्टेयर में 1136 निवासियों की पेयजल समस्या को समाप्त करने ₹ हेतु 11.25 करोड़ का व्यय किया गया है।

मन देशी फाउण्डेशन सतारा महाराष्ट्र के 26 सूखे जिलो में कार्य करती है। ग्रामीण चारे की समस्या के कारण मवेशियों को बेच रहे है। ग्रामीण किसानों की इस समस्या के समाधान के लिये चारा छावनी/कैटल रिलीफ कैम्प आयोजित किये जाते है।

कम्पनी के कर्मचारी स्वयंसेवको के रूप में अर्पण के तहत जल संरक्षण, योग को बढ़ावा, आदिवासी समुदायों को सहयोग, विद्यालयों में कक्षाओं की मरम्मत व पुताई, विद्यालयों में शौचालयों का निर्माण, लेप, पुस्तकालय व्यवस्था तथा वृक्षारोपण का कार्य किया जाता है।

बजाज ग्रुप ट्रस्ट द्वारा विभिन्न पुण्यार्थ क्रियाएँ जिसमें एकीकृत ग्रामीण विकास, औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षा, आँगनबाड़ी, बालवाड़ी, शिक्षण संस्थान तकनीकी व प्रबंध संस्थान, विज्ञान केन्द्र, यौन शिक्षा को बढ़ावा दिया जाता है। अस्पतालों तथा मेडिकल रिसर्च संस्थानों द्वारा स्वास्थ्य देखभाल, एकीकृत कृषि विकास, व्यवसायिक प्रशिक्षण, किसान सहकारिता, महिला उत्थान तथा महिला सशक्तिकरण संबंधी कार्य किये जाते है। कला, संस्कृति, विरासतों का रखरखाव, खेलों का विकास, स्वच्छता बढ़ावा तथा सामुदायिक विकास में योगदान देने वाले व्यक्तियों को सम्मान तथा पुरस्कार दिये जाने संबंधी कार्य किये जाते है।

चिकित्सा के क्षेत्र में कम्पनी द्वारा नेत्र रोगों के समाधान व उपचार के संबंध में सराहनीय कार्य किये गये है।

- मेडिकल रिसर्च फाउण्डेशन (संकरा नेत्रालय चैन्नई)
- संकरा आई फाउण्डेशन कोयम्बटूर
- कमलनयन बजाज संकरा नेत्रालय
- कमलनयन बजाज आई केयर जयपुर
- साधु वासवानी हॉस्पीटल पुणे
- कमलनयन बजाज आई केयर हॉस्पीटल इंदौर
- लोकनायक जय प्रकाश आई हॉस्पीटल झारखण्ड़

उक्त संस्थाएँ उत्तम श्रेणी की आई सुविधाएँ प्रदान कर निर्धन व ग्रामीण निवासियों की सहायता करती है। इसके अतिरिक्त रिसोर्स सेन्टर ऑफ BYL नेयर हॉस्पीटल मुम्बई द्वारा प्लास्टिक शल्य चिकित्सकों को शिक्षित व प्रशिक्षित करना एवं SRCC चिल्ड्रन हॉस्पीटल द्वारा विश्वस्तरीय बाल चिकित्सा संबंधी सेवाएँ दी जाती है।

शिक्षा के क्षेत्र में कम्पनी द्वारा वनस्थली विद्यापीठ राजस्थान को सहयोग, छात्रावास को सहयोग, जमनालाल बजाज स्कूल ऑफ लीगल स्टडीज का विकास, इण्डस्ट्रीयल डिजाइन सेंटर, कम्प्यूटर साइंस तथा इंजीनियरिंग शिक्षा का विकास किया गया। राहुल बजाज टैक्नोलॉजी इन्नोवेशन सेंटर द्वारा सोसाइटी फॉर इनोवेशन एण्ड एन्टरप्रीनोयरशिप, इण्डस्ट्रीयल रिसर्च एण्ड कन्सलटिंग सेन्टर तथा इण्डस्ट्रीयल डिजाइन सेन्टर द्वारा शिक्षा का विकास किया गया। इसके अतिरिक्त साधु वासवाणी मिशन को सहयोग, विद्या प्रतिष्ठान को सहयोग, अशोका विश्वविद्यालय को सहयोग, SNDT को सहयोग, महिला विश्वविद्यालय को सहयोग तथा आपते वाचनं मंदिर को सहयोग दिया गया। पैतृक व पुरातत्व संरक्षण के संबंध में भाऊ डाजी लैड संग्रहालय की मरम्मत, पुर्नरोद्धार व संरक्षण हेतु सहयोग तथा फिल्म हैरिटेज फाउण्डेशन को सहयोग प्रदान किया गया। कला व संस्कृति के संबंध में जयरंगम जयपुर थियेटर फेस्टीवल को सहयोग, मोरल एवं कल्चर ट्रेनिंग फाउण्डेशन को सहयोग, नेशनल सेंटर फॉर परफोरमिंग आर्ट को सहयोग, न्यू एक्रोपोलिस इण्डिया को बढ़ावा, कर्मक्षेत्र एज्यूकेशन फाउण्डेशन, संगीतम चेरिटेबल ट्रस्ट को सहयोग प्रदान करती है।

श्री जमनालाल बजाज ने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा को ₹79000 का सन् 1918 में दान देकर इसकी शुरूआत करवाई। वर्तमान में यह डीम्ड विश्वविद्यालय है। जिसमें 1500000 विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे है।

कम्पनी द्वारा खिलाड़ियों व खेलों को प्रोत्साहन दिया जाता है। इसमें विशेष योगदान टेबल टेनिस लीग, ओलम्पिक गोल्ड क्वस्ट को दिया गया है।

कम्पनी द्वारा जल संरक्षण परियोजना के अन्तर्गत प्रथम चरण में औरंगाबाद जिले के पैथन व गंगापुर तालुका के 51 गाँवो तथा द्वितीय चरण में औरंगाबाद जिले के गंगापुर तालुका के 110 गाँवो को सम्मिलित किया गया। इसमें कुल विनियोग गत 5 वर्षो में ₹199 करोड़ का किया। जिसमें बजाज ऑटो लिमिटेड का ₹80 करोड़ था। इसमें कुल 240418 लोग लाभान्वित हुये है।

इस परियोजना में 94 ग्रामीण विकास समितियों का गठन, 431 स्वयं सहायता समूहों का गठन, 253 जल उपयोग समूहों का गठन, 22 न्यू सीमेंट नाला

फण्ड व 11 पुरानों की मरम्मत, 6 ईथरन नाला फण्ड, 33 छिद्रण टैंक, 18 कृषि तालाब, 55 कुओं का विकास किया गया।

समाज सेवा केन्द्र के माध्यम से कर्मचारियों व उनके परिवारों के जीवन स्तर में सुधार, स्थानीय समुदायों की शिक्षा, संस्कृति, स्वास्थ्य तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण देकर जीवन स्तर में सुधार किया जाता है। इस क्षेत्र में औरंगाबाद, वर्धा तथा पंतनगर सम्मिलित है।

शिक्षा मण्डल वर्धा द्वारा वर्धा क्षेत्र में 8 महाविद्यालयों में 10000 विद्यार्थियों को शिक्षा दी जाती है। न्यूनतम लागत पर उत्तम उच्च शिक्षा तथा प्रतिभाशाली बच्चों को पूर्ण छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त गाँधी ज्ञान मन्दिर तथा गाँधी विचार परिषद् वर्धा में गाँधीवादी साहित्य की शिक्षा प्रदान करती है।

Table 1
CSR Expenditure by Major Bajaj Group Companies Based in Pune and Bajaj Group Charitable Trusts During the Year Ended 31 March

(Rupees in Crore)

S. No.	Particular	As at 31 March	
		2019	2018
(A)	**Major Bajaj Group Companies Based in Pune**		
1.	Bajaj Auto Ltd.	112.32	100.51
2.	Bajaj Finance Ltd.	56.78	39.56
3.	Bajaj Allianz Life Insurance Company Ltd.	19.18	20.98
4.	Bajaj Allianz General Insurance Company Ltd.	21.41	17.53
5.	Bajaj Holding & Investment Ltd.	11.88	9.15
6.	Bajaj Finserv Ltd.	1.53	1.90
7.	Others	0.23	1.90
Sub Total		**223.33**	**189.63**
(B)	Bajaj Group Charitable Trusts	42.78	32.82
Total		**266.11**	**222.45**

CSR Expenditure by Bajaj Auto During the Year Ended 31st March

(Rupees in Crore)

S. No.	Sector	2018-19	2017-18
1.	Healthcare	19.27	8.73
2.	Education	28.14	19.46
3.	Welfare of woman, children, socially and economically backward groups etc.	16.09	24.28
4.	Environment, conservation of natural resources etc.	20.34	39.29
5.	Protection of national heritage, art, culture etc.	0.50	1.50
6.	Armed Forces veteran's welfare	1.16	2.19
7.	Promotion of sports	4.35	-
8.	Technology Incubator's	0.73	0.52
9.	Rural Development Projects	18.49	1.73
10.	Others (including overheads)	3.27	2.31
11.	Relief Fund	-	0.50
Total		**112.32**	**100.51**

उक्त तालिकाओं से स्पष्ट है कि बजाज ऑटो लिमिटेड का सी.एस.आर. संबंधी विभिन्न गतिविधियों में वर्ष 2017–18 की तुलना में वर्ष 2018–19 में व्यय ₹11.81 करोड़ रूपये से बढ़ गया है। कम्पनी ने प्रत्येक क्षेत्र में सामाजिक उत्तरदायित्व को प्रभावी रूप से पूर्ण किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *सी.एस.आर. रिपोर्ट – बजाज ऑटो लिमिटेड वर्ष 2018–19*
2. *सी.एस.आर. रिपोर्ट – बजाज ऑटो लिमिटेड वर्ष 2017–18*
3. *कम्पनी एक्ट संशोधित 2013*
4. *लेखाकंन के सिद्धांत एवं व्यवहार – जैन, खण्डेलवाल, पारीक*
5. *उच्चत्तर लेखाकंन – एम. सी. खण्डेलवाल*

19वीं शताब्दी में मारवाड़ की सामाजिक व्यवस्था में अंग्रेजी हस्तक्षेप

shodhshree@gmail.com

सीमा सिंह
शोद्यार्थी, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

शोध सारांश

मारवाड़ की सामाजिक व्यवस्था पूर्णतः परम्परागत एवं जाति व्यवस्था पर आधारित थी। सभी अपने–अपने सामाजिक रीति–रिवाजों एवं परम्पराओं के प्रति सजग थे और किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप के विरोधी थे। परन्तु अंग्रेजों ने राज्य में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के पश्चात् अपनी स्वार्थपूर्ति यथा– शिक्षित युवकों की आवश्यकताओं एवं पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति के प्रचार प्रसार, हेतु यहाँ की सामाजिक व्यवस्था में निरन्तर हस्तक्षेप किया जिसके परिणाम राज्य में ब्रिटिश विरोधी भावनाओं का विकास हुआ।

संकेताक्षर : *सामाजिक व्यवस्था, कुरीतियां, हस्तक्षेप, सती प्रथा।*

19वीं शताब्दी व पूर्व में, मारवाड़ के लोगों में कुछ सामाजिक रूढ़िवादी प्रथा प्रबल थी, खासकर राजपूतों में जो कि विध्वस्थ थी, जैसा कि जल्दी से मराठों का खतरा खत्म हुआ देश ब्रिटिश के सम्पर्क में आया तो समाज में व्याप्त सुरीतियों की ओर ब्रिटिश पदाधिकारियों का ध्यान आकर्षित हुआ और उन्होंने मारवाड़ की सामाजिक व्यवस्था में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। वैसे तो मारवाड़ की सामाजिक व्यवस्था में अंग्रेजी हस्तक्षेप एक अनोखा परिवर्तन लेकर आया, परन्तु मारवाड़ के निवासी सामान्यतः अन्धविश्वासी, रूढ़िवादी तथा पुरातनवादी थे। वे परम्परागत रूप से चली आ रही व्यवस्था में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप के पक्ष में नहीं थे। इन सब के बावजूद ब्रिटिश अधिकारियों ने राजपूताने के शासकों पर दबाव डालकर इन कुरीतियों को दूर करवाने का प्रयास किया फिर सामाजिक गति में सुधार होना शुरू हो गया और इससे मारवाड़ लाभन्वित हुआ। इन ब्रिटिश अधिकारियों में केप्टिन लुडलो, कर्नल सदरलैंड, केप्टिन बटन, कर्नल शेक्सपियर विल्किन्सन आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं तथा मारवाड़ में अंग्रेजी सत्ता की स्थापना के बाद सामाजिक गतिशीलता एवं परिवर्तन की प्रक्रिया तीव्र हुई है। यह प्रक्रिया तत्कालीन सामाजिक परिवर्तन, कुरीतियों के निवारण एवं समाज सुधार में सहायक बनी।

सामाजिक कुरीतियाँ एवं अंग्रेजी हस्तक्षेप

सती प्रथा

सती या हिन्दू महिलाओं की आत्मदाह की प्रथा भारत में प्राचीन समय से विद्यमान थी परन्तु यह बहुत सामान्य नहीं थी। इस परम्परा का उद्भव प्राचीन हिन्दू पौराणिक कथाओं में माना जा सकता है। जहाँ हम सती का उदाहरण प्राप्त करते हैं जिसने कि अपने पिता द्वारा किए गए अपने पति के अपमान का बदला लेने के लिए सभी देवताओं की उपस्थिति में स्वयं का बलिदान कर दिया। उसके पुनरूत्थान तथा पुनर्मिलन अपने पति के साथ पार्वती के रूप में हुआ। इस प्रकार के कृत्यों से प्रोत्साहन मिला। टॉड का मानना था कि 'महिला आत्मदाह' की प्रथा का उद्भव सूर्य–उपासक शैवों के साथ हुआ था। सती का वर्णन महाभारत में भी प्राप्त होता है। अधिकतर सामान्य हो गयी जो कि किलों के द्वारों, महलों, आम व्यक्तियों के घरों के द्वारों पर कई सती–टुकड़ों तथा सती–छापों के इस कथन से स्पष्ट प्रदर्शित हो गयी। अनेक वफादार या समर्पित पत्नियों के बलिदान में वृद्धि हुई जिनके पति या तो प्राकृतिक मृत्यु से मर गये या युद्ध क्षेत्र में मारे गये। यह प्रथा सदैव विधवाओं द्वारा ही नहीं होती थी अपितु रखैल स्त्रियाँ भी स्वयं का बलिदान देती थी तथा माताएँ अपने पुत्रों की मृत्यु पर जला दी जाती थी सती प्रथा का विस्तार मारवाड़ में

कैसे हुआ यह इस तथ्य से जाना जा सकता है कि 34 महिलाएँ महाराज अजीत सिंह के शव के साथ सती हो गयी थी वास्तविकता में, सती प्रथा पूर्ण रूप से विधवा के विकल्प पर छोड़ दी गयी (निर्धारित थी) दूसरें शब्दों में, यह एक पूर्णरूप से स्वैच्छिक मामला था। वे विभिन्न फाटाको द्वारा बाध्यकारी थे उदाहरण के लिएः– बिछड़ने की पीड़ा, अगले जन्म (दुनिया) में पति के साथ जाने की उत्सुकता, विरोधी तत्वों से अपने शुद्धता की रक्षा करने के लिए, दुख, दासता तथा अपमानजनक घरेलु जीवन से बचने के लिए। फिर भी अनेक समाजिक बुराइयों की तरह इस प्रथा का स्वैच्छिक पक्ष (पहलू) भी धीरे–धीरे ऊपर उठा और उच्च वर्गों में सती बनना (होना) प्रतिष्ठा का विषय बन गया विधवा को सम्मानजनक परम्परा को बनाए रखने हेतु आत्मदाह करने के लिए प्रेरित किया गया कि मृतक के परिवार के लिए यह गर्व का विषय बन गया कि ''कैसे सम्मानजन तथा वफादारीपूर्ण अंतिम संस्कार किया गया'' इसी समय प्रगतिशील लोगो द्वारा इस प्रथा के खिलाफ एक जनव्यापी संघर्ष प्रारंभ हुआ जिसका नेतृत्व राजा राममोहन राय कर रहे थे जिसका परिणाम जनजागृति के रूप में निकला लार्ड विलियम बैटिक की पहल पर सती प्रथा को 1829 में अवैध घोषित कर दिया गया था इसे एक अपराध भी माना गया जो अदालत में दण्डनीय था। 1829 में सती प्रथा को अवैध तथा अदालत में दण्डनीय अपराध घोषित कर दिया गया था। इस अधिनिमय जब मजबूर या दवाओं के प्रयोग द्वारा उसे सती होने पर मजबूर करें तो यह प्रयास हत्या के रूप में माना जाएगा तथा इसके लिए मृत्युदंड भी दिया जा सकता है फिर भी इस अधिनियम का राजपूत राज्यों में कोई प्रभाव नहीं था जहाँ सती प्रथा अनियंत्रित रूप में लगातार जारी थी जोधपुर में 1839 में प्रशासन में प्रत्यक्ष ब्रिटिश हस्तक्षेप के बाद भी इस प्रथा को निषिद्ध घोषित नहीं किया गया था मारवाड़ में सतीप्रथा को रोकने वाले ''नियमों की सहिंता (कोड) जिसमें एक खण्ड़ शामिल है की असफलता का वर्णन करते हुए सदरलैंड ने कहा कि'' सतीप्रथा के निषेध के लिए कानून आवश्यक मुद्दा था जो कप्तान लुडलो तथा उसके बीच आत्मिक रूप से जुड़ा था उसने लोगों से कहा कि सती प्रथा की परम्परा को यूरोप में अत्यंत भय के साथ देखा गया तथा वे सभी राष्ट्र जो भारत से जुड़े थे उन सभी में इसका उन्मूलन एक प्रमुख मुद्दा बन गया था जो कि गर्वनर जनरल ने आत्मिक (स्वयं) महसूस किया था लेकिन दुखी भाव से उन्होंने पाया कि मारवाड़ की जनता का मन अभी तक उस स्थिति से दूर है जहाँ पर सती प्रथा के उन्मूलन पर विचार किया जा सकता है। उन्हें दृढ़ विश्वास था कि सती होने की इच्छा सत्य दैवत्व की एक अनूठी प्रेरणा थी तथा वे दोनो बेकार (व्यर्थ) एवं अधार्मिक (अपवित्र) है कि जबरन प्रयास से व्यक्ति के (आवेगों) को नियंत्रित किया जा सकता है। मारवाड़ में लोगों को कभी नहीं लगता था कि सती होने के लिए किसी को भी थोड़ा सा भी मजबूर किया जाता था। गर्वनर जनरल ने सती के पक्ष में गहरा खेद व्यक्त किया। 1843 में मानसिंह के मृत्यु के समय सती प्रथा का आयोजन किया गया तथा लुड़लों वहाँ सबसे दुखी गवाह था लेकिन वह इसे रोकने के लिए कुछ नहीं कर सकता था लेकिन फिर भी जब वह जयपुर राजनीतिक एंजेसी स्थानांतरित किया गया तो वह सती प्रथा को दण्डनीय अपराध के रूप में कानून बनाने की घोषणा करवाने में सफल रहा। लेकिन जयपुर के उदाहरण का मारवाड़ पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं था जुलाई 1842 से जनवरी 1845 के बीच मारवाड़ में 22 सतीप्रथा के मामले सामने आये जिनमें 27 लोगों ने बलिदान दिया था।

महाराजा तख्तसिंह ने इसमें गहरी रूचि दिखायी और मारवाड़ में सती प्रथा पर रोक लगाने के लिए सकारात्मक तथा साप्त आदेश जारी किए उदाहरण के लिएः– सती प्रथा के दो मामले चारण परिवारों में नागौर से सूचित किए गये। सरकार के आदेशानुसारः चारणों ने स्वयं के अंग–भंग (अंग विच्छेद) की धमकी दी जिस स्थानीय अधिकारियों को सूचित किया गया था वह मामला महाराजा के पास भेजा गया था जिन्होंने अधिकारियों को इस मामले को किसी भी जोखिम पर इसे लागू करने के स्पष्ट निर्देश दिए (सती प्रथा निषेध)। महाराज का यह रवैया प्रदर्शित करता था कि वे इन आदेशों की पालना हेतु दृढ़निश्चयी थे जो कि उन्होंने इस विषय पर जारी किये थे फिर भी इस समय सम्माननीय प्रथा धीरे–धीरे टूट गयी थी और राजपूताना में गवर्नर जनरल के एंजेट ने 1865–66 की वार्षिक सरकारी रिपोर्ट में कहा कि ''हम विश्वास दिलाते है कि बहुत ही संक्षिप्त (कम) समय में सती प्रथा अतीत के अपराधों में गिने जाने योग्य होगी''

सती प्रथा के प्रति अंग्रेज सरकार की नीति

अनेक कारणों से यह प्रथा बंगाल में बहुत प्रचलित हो गई थी और 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 19 वीं के

पूर्वार्ध में तो प्रति वर्ष सैकड़ो स्त्रियां सती हो जाया करती थी। अंग्रेज सरकार के अंग्रेज अफसरों ने और कुछ हिन्दू अफसरों ने भी बंगाल सरकार से अनुरोध किया कि इन क्रूर प्रथा को बन्द किया जावे। परन्तु सरकार ने इस प्रकार हस्तक्षेप करना नीति के विरूद्ध समझा। मद्रास सरकार ने भी यही रूख अपनाया बम्बई सरकार ने तो पेशवा का राज्य अपने राज्य में मिला लेने के बाद यह नियम बना दिया कि सती क्रिया में सहायता देना से हत्या सहीं मानी जाए। तथापि अंग्रेज और यूरोपियन लोगों को यह प्रथा सहन थी और वे इसको अमानुषिक मानते थे। कलकता की सुप्रीम कोर्ट ने अपने अधिकार क्षेत्र में सती प्रथा बन्द कर दी थी। ऐसा ही आदेश चन्द्र नगर में फ्रांसिसी सरकार ने जारी किया था। लोरामपुर की डच सरकार ने भी ऐसा नियम बना दिया था परन्तु सतियां नगर के अधिकार क्षेत्र के बाहर हुआ करती थीं। अंग्रेज अधिकारियों ने विशेषकर जिलों में अधिकारियों ने सन् 1879 में सरकार को लिखा कि इस प्रथा को बन्द कर देने की अनुमति प्रदान की जाए। सरकार ने उत्तर दिया कि सती प्रथा बन्द करना तो प्रशंसनीय कार्य है परन्तु सरकार को इसमें केवल इतना ही हस्तक्षेप करना चाहिए कि सती होने वाली स्त्री को समझानें का यत्न करें कि वह सती न हो। इसमें कही कहीं सफलता हुई परन्तु फिर भी 1804 में कलकतें के आसपास 30 मील की परिधि में 6 मास में 300 सतियां हो गई थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ. निर्मला एम.उपाध्याय– दी एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ जोधपुर स्टेट (1800–1947 ए.डी.) पेज नं. 41, फस्ट एडिसन 1973, पब्लिस्ड बाए जयपुर*
2. *डॉ. रामप्रसाद व्यास– आधुनिक राजस्थान का वृहत् इतिहास, खण्ड़ 2 पृ.सं. 407, संस्करणः 1995, प्रकाशक, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर*
3. *वही पृ.सं. 407*
4. *डॉ. निर्मला एम.उपाध्याय– दी एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ जोधपुर स्टेट(1800–1947 ए.डी.) पेज नं. 41*
5. *डॉ. रामप्रसाद व्यास– आधुनिक राजस्थान का वृहत् इतिहास, खण्ड़ 2 पृ.सं. 407*
6. *प्रो.बी.एम. दिवाकर– राजस्थान का इतिहास पृ.सं. 373*
7. *डॉ. जी.एन. शर्मा– सोशियल लाइफ इन मिडिवल् राजस्थान (आगरा, 1968) पेज नं. 127*
8. *टेवनीयर : ट्रेवल्स इन इण्डिया, पेज नं. 169*
9. *डॉ. जबर सिंह– ईस्ट इण्डिया कम्पनी और मारवाड़ (1803–1851 ए.डी.) पृ.सं. 156 प्रकाशन (जयपुर, 1973)*
10. *टॉड– एनाल्स एण्ड एण्टिकिक्विटस ऑफ राजस्थान बाए कॉलोनल जेम्स टॉड इन वोल्यूम I., पृ. 503 (रूटलेज एण्ड केगस पॉल लिमिटेड, लंदन 1957)*
11. *आदिपर्व–95*
12. *डॉ. जी.एन.शर्मा– सोशियल लाइफ इन मिडिवल् राजस्थान (आगरा, 1968) पृ. 127, सती इम्प्रेशन केन बी सीन एट लोहापाल ऑफ जोधपुर फोर्ट*
13. *रिपोर्ट ऑफ दी पॉलिटिकल एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दी राजपूताना स्टेट्स, 1865–66 एण्ड 1866–67 एण्ड 1866–67, पार्ट फस्ट, पृ. 16*
14. *एनूयल रिपोर्ट फॉर दी ईयर 1848, दि. 4 सितम्बर 1849, मेजर डी.ए. मॉल्कम पॉलिटिकल एजेन्ट, जोधपुर टू कॉल, लोकल एजेन्ट ऑफ द गवर्नर जनरल इन राजपूताना*
15. *रिपोर्ट ऑन दी पॉलीटिकल एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ राजपूताना फॉर दी ईयर 1865–66, पार्ट फर्स्ट, पृ. 17*
16. *वाइड सेक्शन फर्स्ट ऑफ रेग्यूलेशन 17 ऑफ 1829*
17. *थोसोम एडवड : सूती 1929, Ch. VI.*
18. *सदरलैण्ड टू सेक्रेटरी गवर्नमेंट डेटेड फर्स्ट जून 1847, कन्सलटेशन 7 अगस्त 1847, नं. 845, पॉलिटिकल कन्सल्टेशन ऑफ फॉरन डिपार्टमेंट नेशनल आरचिवस ऑफ इण्डिया, न्यू देहली।*
19. *कन्स. 13 मार्च 1841, नं. 35–37 एफ एण्ड पी*
20. *वहीं*
21. *कन्स. 13 मार्च, 1841, नोस. 38–42 एफ एण्ड पी*
22. *लुडलो, टू सदरलैण्ड डेटेड 6 सितम्बर 1843, कन्स. 30 सितम्बर, 1843 नं., 62 एफ एण्ड पी*
23. *लुडलो, पॉलिटिकल ऐजेन्ट जयपुर टू सदरलैण्ड, कन्स. 30 नवम्बर, 1844, नं., 152 एफ एण्ड पी*
24. *पॉलिटिकल ऐजेन्ट जोधपुर्स रिपोर्ट डेटेड 7 अप्रेल 1847, सबमिटेड बाय ग्रेथड टू दी ऐजेंट टू दी गवर्रर जनरल इन राजपुताना*
25. *एनूअल रिपोर्ट ऑफ जोधपुर पॉलिटिकल एजेन्सी डेटेड सितम्बर 1849, सबमिटेड बाए मेजर डी.ए. मालकोल्म टू द ऐजेन्ट टू दी गवर्नर जनरल इन राजपूताना*
26. *रिपोर्ट ऑफ दी पॉलिटिकल एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दी राजपूताना स्टेट, 1865–66, पार्ट I,पृ. 19*

सामाजिक न्याय : जॉन रॉल्स और डॉ. भीमराव अम्बेडकर

डॉ. फूलसिंह गुर्जर
सह–आचार्य, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झालावाड़

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

राजनीतिक चिन्तन में सामाजिक न्याय एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। विभिन्न राजनीतिक विचारकों ने राज्य की उत्पत्ति कार्य क्षेत्र और उद्देश्य के साथ व्यक्ति और राज्य के सम्बन्धों का विस्तृत विवेचन किया है। समाज में व्यक्तियों के मध्य न केवल प्राकृतिक और सामाजिक भेदभाव होते है अपितु धार्मिक मान्यताओं और ऐतिहासिक निरन्तरताओं के कारण भी उत्पन्न होते है। ऐतिहासिक सामाजिक आर्थिक भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार के कारण समाज का कोई भी वर्ग या समुदाय अन्य वर्गों की तुलना में पीछे रह जाता है तो उसे समाज के अन्य वर्गों के समकक्ष लाना सामाजिक न्याय का ध्येय है। रॉल्स ने समाज के न्यूनतम सुविधा प्राप्त वर्ग को अधिकतम लाभ पहुँचाने के लिए एक ऐसी मूल स्थिति की कल्पना की है जहाँ सामाजिक और प्राकृतिक पदार्थों का वितरण इस प्रकार से हो, जिससे न्याय की स्थापना हो सके। अम्बेडकर ने भी हिन्दू समाज में व्याप्त सभी प्रकार के वर्ण भेद, जाति भेद, लिंग भेद को समाप्त कर एक ऐसी व्यवस्था की बात कही है जहाँ सभी लोग स्वतंत्रता समानता तथा बन्धुता के आधार पर जीवनयापन कर सके। दोनो विचारकों ने अपने अपने दृष्टिकोण सोच और माध्यम द्वारा सामाजिक न्याय की अवधारणा को स्थापित करने का प्रयास किया है।

संकेताक्षर : *सामाजिक न्याय, जॉन रॉल्स, भीमराव अम्बेडकर, छूआछूत, संवैधानिक प्रावधान।*

बीसवीं सदी के दो महान विचारक जॉन रॉल्स और डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय की अवधारणा को अपने–अपने अनुभव, प्रभाव, शैली, कला, साधन एवं मूल्यों द्वारा स्थापित किया है। राजनैतिक चिन्तन में सामाजिक न्याय एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। विभिनन राजनैतिक विचारकों ने राज्य की उत्पत्ति कार्य क्षेत्र और उसके उद्देश्य के साथ व्यक्ति और राज्य के महत्व सम्बन्धों की विस्तृत विवेचना की है। सामान्यतः राजनैतिक चिन्तन एक आदर्श राज्य और व्यक्ति के पूर्ण विकास के लिए आवश्यक शर्तों की खोज से सम्बन्धित रहा है। समाज में व्यक्तियों के मध्य मतभेद न केवल प्राकृतिक और सामाजिक होते है अपितु धार्मिक मान्यताओं और ऐतिहासिक निरन्तरताओं के कारण भी उत्पन्न होते है। अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय की अवधारणा को वंचित, दमित, दलित तथा अस्पृश्य वर्ग तक पहुँचाने के लिए तार्किक सामाजिक संरचना पर आधारित एक समतामूलक समाज की पृष्ठभूमि तैयार की, जिसमें सभी व्यक्ति स्वतंत्रता, समानता तथा बन्धुता के आधार पर एक समान जीवनयापन कर सके। रॉल्स ने न्याय को समाज के न्यूनतम सुविधा प्राप्त व्यक्ति तक पहुँचाने के लिए पूर्णतया तार्किक संरचना पर आधारित एक आदर्श समाज की परिकल्पना की, जिसका लक्ष्य, प्राथमिक वस्तुओं के न्यायोचित वितरण प्रक्रिया से है। जब तक वितरण प्रणाली ठीक प्रकार से संचालित नहीं होगी तब तक सामाजिक न्याय की स्थापना नहीं हो सकती है।

सामाजिक न्याय एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ मानव–मानव के मध्य किसी प्रकार का भेदभाव न हो, सब लोग बिना किसी भेदभाव के एक समान जीवनयापन करे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता क्षमता, स्थिति के अनुरूप प्राप्त हो। सामाजिक न्याय का मुख्य उद्देश्य मानव द्वारा मानव का शोषण समाप्त कर प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे अवसर उपलब्ध करवाना है जिनसे वह अपनी योग्यताओं, क्षमताओं का अधिकतम विकास कर सके। सामाजिक न्याय के विविध आयाम व चुनौतियों को जानने के साथ अम्बेडकर और रॉल्स के सामाजिक न्याय सम्बन्धी विचारों,

प्रक्रियाओं, मूलस्थिति को एक तुलनात्मक रूप से जानना है। दोनों विचारकों ने अपने अपने तरीके से सामाजिक न्याय को लागू करने की पद्धति दी है। इन अध्ययन पद्धतियों का स्वरूप व कार्ययोजना जानना आवश्यक है। रॉल्स का न्याय सिद्धान्त भारतीय सामाजिक परिस्थिति तथा डॉ. अम्बेडकर के विचारों से कितनी साम्यता रखता है। रॉल्सीय न्याय की धारणा भारतीय परिप्रेक्ष्य के लिए कितनी उपयोगी तथा महत्वपूर्ण है। इन सभी तथ्यों का अध्ययन करना इस शोध–पत्र को लिखने का मुख्य उद्देश्य रहा है।

राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में रॉल्स की सन् 1971 में प्रकाशित पुस्तक ए थियरी ऑफ जस्टिस[1] एक मील का पत्थर थी। इसके उपरान्त राजनीतिक सिद्धान्त में पद्धतिय प्रश्नों की अपेक्षा जीवन के सार–भूत मुद्दों पर जोर दिया जाने लगा। राजनीतिक सिद्धान्त में व्यक्ति एवं समाज तथा समाज एवं राज्य के स्वरूप संरचना पर जोर दिया जाने लगा। रॉल्स के अनुसार 'न्याय' सामाजिक संस्थाओं का प्रथम सद्गुण है जैसे 'सत्य' चिन्तन का प्रथम सद्गुण है।[2] सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लक्ष्य तथा प्रक्रिया को मजबूत करना होगा। रॉल्स ने न्याय के अमूर्त और दार्शनिक सिद्धान्त को ऐसे रूप में उभारा जिसमें अधिकारों, आय, और सम्पदा के वितरण के लिए नीति निर्माण हो सके। रॉल्स ने 'न्याय' की परिभाषा में समाजवादी गुण अर्थातः अवसरों की समानता, पद और पदानुशंग को प्राप्त करने का समान अधिकार तथा विशेष परिस्थितियों में सामाजिक, आर्थिक असमानता को बनाए रखना जिससे सबसे कम लाभान्वित व्यक्तियों को अधिक लाभ हो सके, ऐसी व्यवस्था है।[3]

जिस तरह यूरोप में रॉल्स ने राजनीतिक चिन्तन के क्षेत्र में न्याय के माध्यम से सबसे कम लाभान्वित व्यक्ति को अधिकतम लाभ पहुँचाने का सिद्धान्त दिया है उसी तरह भारत में डॉ. अम्बेडकर ने असमानता, जाति भेद, छुआछूत पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को अव्यावहारिक, अवैज्ञानिक बताया। उनका दर्शन पूर्णतः मानववादी था। उनकी भावना लोह–जंजीरों से जकड़ी हुई मानवता को देख न सकी। अन्याय एवं अत्याचार के विरूद्ध संघर्षरत जीवन से उनके समाज दर्शन की आधारशिलाएँ दृढ़ हुई। उनका दर्शन व्यक्ति के सम्मान, स्वतंत्रता, समता, न्याय, एकता, बन्धुता और प्रजातंत्र के सिद्धान्तों पर आधारित है तथा अन्याय घृणा, जातिवाद, छुआछूत, हिंसा अशान्ति और भ्रष्टाचार भेदभावों को खत्म कर, वे एक ऐसी समता स्वतंत्रता तथा बन्धुता पर आधारित व्यवस्था की बात करते है जहाँ समाज के सबसे कमजोर वर्ग दलित को सभी मानवीय अधिकार प्राप्त हो। अम्बेडकर का मानना था कि समस्त रूढ़ियों और असमानताओं की जड़ जाति प्रथा है। जाति प्रथा हिन्दुओं में, ही नहीं बल्कि सिखों, इसाईयों और मुसलमानों के मध्य भी पाई जाती है। इस प्रथा की वजह से समाज में भेदभाव, ऊँच–नीच छुआछूत तथा स्रोतों का असमान वितरण जैसी विषमताओं का जन्म हुआ। जिसके चलते दलितों को भू–स्वामित्व, मंदिर, कुआँ बावड़ी से पानी भरने से रोका गया, परन्तु छोटे दर्जे के सारे कार्य जैसे गाँव–शहर की सफाई, पानी, गोबर उठाना, मरे हुए जानवरों को फेंकना तथा उनकी खाल निकालना, जूतियाँ गाँठना, झूठे पत्तलों में बचा हुआ अन्न खाना इत्यादि कार्य शूद्रों से करवाये जाते थे। यदि जाति व्यवस्था समाप्त हो जाए तो स्वतंत्रता, समानता पर आधारित हिन्दू समाज का पुनर्निर्माण संभव हो सकता है। हालांकि जाति कोई मूर्त दीवार या वस्तु नहीं है जिसे तोड़कर तत्काल नई दीवार का स्थानापन्न कर दिया जाय। ईटों की इमारत या काँटेदार तारों की लाइन जैसी वस्तु भी नहीं जो हिन्दुओं को आपसी मेल–मिलाप से रोकती हो, जाति तो एक धारणा तथा मानसिक स्थिति है।[4] इस जातीय धारणा और मनःस्थिति को तोड़ने का एक मात्र मार्ग अम्बेडकर सहजातीय भोज की बजाय अन्तर्जातीय विवाह को सर्वाधिक उपयुक्त मानते थे।केवल खून के मिलने से पृथक्कता या परायेपन की भावना समाप्त होकर रिश्ते अथवा सजातीयता की भावना पैदा होगी।[5] हिन्दू समाज में व्याप्त अस्पृश्यता की प्रथा ने सामाजिक उन्नयन के मार्ग को अवरोध किया है। अस्पृश्यता को समाप्त करने से पूर्व वर्ण और जाति व्यवस्था को समाप्त करना जरूरी है। जब तक जड़े नहीं तोड़ी जाएगी तब तक अस्पृश्यता की मानसिकता समाप्त नहीं हो सकती। अस्पृश्यता और जातिव्यवस्था समाप्त करने के लिऐ शास्त्रों में समाधान ढूंढने का प्रयत्न वास्तव में कीचड़ से कीचड़ को साफ करने जैसा हास्यास्पद प्रयत्न है।[6] अम्बेडकर का मानना था कि उसे कानूनन बन्द कर देना चाहिए। यह व्यवस्था सामान्य जनता के ज्ञान प्राप्ति के अधिकार को नकार कर उसकी अद्योगति करती है। हिन्दू समाज के पुनर्गठन का आधार स्वतंत्रता समानता हो। हिन्दू धर्म के सभी ग्रन्थों को

मिलाकर एक प्रमाणिक, सर्वस्वीकार्य ग्रन्थ हो। पुरोहिताई करने के लिए राज्य एक लिखित परीक्षा करवाऐं, उत्तीर्ण लोगों में से पुरोहितों का चयन करे। पुरोहितों की संख्या तथा उन पर नियंत्रण राज्य द्वारा होना चाहिए जिससे समाज को गुमराह या क्षति करने से रोक सके। यह पद सभी वर्गों के लिए खुला रखना, प्रजातंत्र का लक्षण है, जो निश्चित रूप से ब्राह्मणवाद व जातिवाद को समाप्त करने में सहायक होगा।

रॉल्स ने अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख की बेन्थमवादी धारणा को नकारते हुए, अनुबन्धवादी (लॉक, रूसों व काँट) की धारणा को आधार बना कर ऐसी 'मूल स्थिति' की कल्पना की, जिसमें व्यक्ति को समाज में अपनी (स्वयं) क्या स्थिति रहेगी? उसका ज्ञान न होगा, फिर वे भावी समाज में अपने हितों की अधिकतम वृद्धि के लिए सामाजिक जीवन के नियमों सिद्धान्तों और संस्थाओं का पुनर्निर्माण करेंगे। इस मूल स्थिति में लोग परस्पर सहमति से जो नियम स्वीकार करेंगे, उन्हें विश्वव्यापी आधार पर न्याय के नियम मान सकते है।[7] उसने यह व्यवस्था की, कि विशेष प्रतिभाशाली लोग विशेष पुरस्कार के हकदार तभी माने जाएगें जब वे अपनी प्रतिभा का प्रयोग हीनतम लोगों के कल्याण हेतु करने को तैयार होगें, परन्तु वे ऐसा क्यों करेगें? इस पर रॉल्स का मानना था कि सामाजिक जीवन व्यक्तिगत लेन देन का जोड़ न होकर परस्पर सहयोग का क्षेत्र है। जिसमें अधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति कम प्रतिभाशाली व्यक्तियों के साथ मिलकर ही अपनी प्रतिभा तथा अवसरों का लाभ उठा सकते है। अतः समाज रूपी जंझीर को मजबूत करने के लिए उसकी सबसे कमजोर कड़ी को मजबूत करना अनिवार्य होगा। उसके मजबूत होने पर फिर सबसे कमजोर कड़ी को ढूंढकर यही प्रक्रिया दोहरानी होगी। जब तक समाज का अस्तित्व रहेगा तक तक यही प्रक्रिया निरन्तर जारी रहेगी, और यही न्याय का प्रमाण होगा।[8]

प्लेटों के बाद रॉल्स ने न्याय को राजनीतिक चिन्तन में महत्वूपर्ण स्थान देकर, सामाजिक राजनीतिक संस्थाओं का प्रथम सद्गुण बनाया है।[9] उन्होंने उदारवाद की मूलभूत मान्यताओं पर आधारित एक ऐसे आदर्श राज्य की तार्किक संरचना प्रस्तुत की, जो अधिकारों के साथ-साथ न्याय पर भी आधारित है। जहाँ अवसरों की समानता पद और पदानुशंग की प्राप्ति का एक समान अधिकार है परन्तु विशेष परिस्थितियों में सामाजिक आर्थिक असमानताएँ होने पर सबसे कम लाभान्वित व्यक्ति को सबसे अधिक लाभ मिलना चाहिए। रॉल्स का न्याय सिद्धान्त, समाज की मूल स्थिति पर लागू होता है, जो सामाजिक प्रकारों के क्रम विन्याय की अवधारणा है। व्यक्ति क्या है, क्या होना चाहिए? का निर्धारण सामाजिक व्यवस्था से किया जाता है। विवेकी व्यक्ति होने के कारण लोग उन सिद्धान्तों की प्राथमिकताओं को तय करने का निर्णय लेते है और इसके लिए कुछ नैतिक मापदण्डों को स्वीकारना पड़ता है। इस स्थिति में कोई भी व्यक्ति समाज में अपना स्थान, अपनी वर्गीय स्थिति, सामाजिक हैसियत आदि नहीं जानता और न ही यह उसकी क्षमताएँ योग्यताएँ बुद्धिमता शक्तियों और सिद्धान्त इस तरह एक अज्ञानता के पर्दे के पीछे चयनित होते है। मूलस्थिति में न्याय के सिद्धान्तों को स्वीकारने के पश्चात् व्यक्ति एक संवैधानिक सम्मेलन में भाग लेता है तथा एक न्यायप्रिय संविधान निर्माण के लिए न्यायप्रिय प्रक्रिया का होना भी आवश्यक है। इस प्रकार न्यायप्रिय संविधान में प्रत्येक नागरिक की स्वतंत्रताओं को सम्मिलित किया जाता है। रॉल्स का वितरणात्मक न्याय का सम्बन्ध भी प्रक्रियात्मक न्याय से है। पूर्ण प्रक्रियात्मक न्याय में प्रक्रिया की उचितता होती है, जिससे परिणाम उचित व सही आये।

अम्बेडकर ने जातिवाद एवं छुआछूत को सामाजिक आर्थिक न्याय की स्थापना में बाधक माना। वर्णात्मक समाज में एक ही वर्ण को धन कमाने का अधिकार होना, एक ही वर्ण को शिक्षा का अधिकार देना, एक ही वर्ण को दबाये रखना प्रजातंत्र व मानववाद के खिलाफ है।[10] वे सामाजिक अर्थिक उन्नति के लिए आधुनिकीकरण, शहरीकरण तथा मशीनीकरण को उचित मानते थे। बुराई मशीनों के प्रयोग में नहीं बल्कि उनसे होने वाले लाभ के अपहरण में है, जो पूँजीपतियों द्वारा किया जाता है। दीन हीनों का कल्याण राज्य की सहायता के बिना संभव नहीं था। राज्य को उत्पादन एवं धन वितरण इस प्रकार करना चाहिए कि सब लोगों को तद्नुसार लाभ, बिना भेदभाव के मिल सके।

अम्बेडकर के राजनीति विचारों के केन्द्र में मनुष्य है। रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति मात्र से सत्ता की जिम्मेदारी खत्म नहीं होती है, इसके अलावा मनुष्य के सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों से भी है जिन्हें भी महत्व देना चाहिए। राजनैतिक जनतंत्र अस्तित्व में लाने से पूर्व सामाजिक जनतंत्र मजबूत

करना जरूरी है। सामाजिक जनतंत्र के मूल्यों– स्वतंत्रता, समानता और बन्धुता के अभाव में राजनीतिक जनत्रंत किसी भी क्षण ढह सकता है। जनतंत्र की आत्मा 'एक व्यक्ति एक मूल्य' के सिद्धान्त पर आधारित है अर्थात व्यक्ति को राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक स्तरों पर उचित स्थान देना होगा अन्यथा जनतंत्र का कोई मूल्य नहीं है।

अम्बेडकर स्त्री–पुरूष समानता के पक्षधर थे। उन्होंने समाज में व्याप्त सभी कुप्रथाओं को समाप्त करने पर जोर दिया था। वे दलित स्त्री को दोहरे शोषण से मुक्त करवाना चाहते थे। स्त्रियों के सुधार हेतु स्वतंत्र भारत की विधायिका में रखा हिन्दू कोड बिल कांग्रेसियों की आन्तरिक खींचतान के कारण पास नहीं हो सका। सामाजिक न्याय के लिए अम्बेडकर का नारा था– एकता, शिक्षा और आन्दोलन। स्त्रियों के सहयोग के बिना एकता अर्थहीन, स्त्रियों की शिक्षा के बिना शिक्षा फलहीन है तथा स्त्रियों की शक्ति के बिना आन्दोलन अधूरा है।[11] शिक्षा केवल संसार को जानने का माध्यम न होकर सभी तरह की असमानताओं को समाप्त करने का माध्यम भी है। वे जन्माधारित वर्ण, जाति, सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक अन्धविश्वासों, गरीबी की भाग्यवादी धारणा को समाप्त कर ऐसे समाज का पुनर्निर्माण करना चाहते थे जिसमें व्यक्ति हर प्राचीन परम्परा का पालन आँख मूंदकर न करे, अपितु उसे तर्क, विवेक की कसौटी पर कसकर ही अपनाएँ। डॉ. अम्बेडकर शिक्षा को एक ऐसा उपयुक्त हथियार मानते थे जिसके द्वारा सामाजिक दासता की जड़ों को काटकर सामाजिक समानता, आर्थिक उन्नति तथा राजनीति स्वतंत्रता प्राप्त की जा सकती है।

रॉल्स ने न्याय को स्थापित करने के लिए दो रास्ते बताये है (i) प्रत्येक व्यक्ति को सर्वाधिक बुनियादी स्वतंत्रता का समान अधिकार होना चाहिए और यह अधिकार अन्य व्यक्तियों को भी प्राप्त होना चाहिए। (ii) सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं को इस प्रकार क्रमबद्ध किया जाना चाहिए कि उन दोनों से (क) न्यूनतम सुविधा प्राप्त लोगों को सर्वाधिक लाभ मिले, और (ख) अवसर की निष्पक्ष समानता के आधार पर सभी को प्राप्त पद और दर्जे प्रभावित हो।[12] रॉल्स का कोषीय क्रम का उद्देश्य न्याय की विभिन्न माँगों की सही प्राथमिकताएँ निश्चित करना है। समान स्वतंत्रता की प्राथमिकता पहली है, उसके बाद अवसर की निष्पक्ष समानता आती है। इन दोनों की पूर्ण सन्तुष्टि के बाद हम सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं का क्रम इस प्रकार निर्धारित कर सकते है कि उससे समाज के अपेक्षाकृत कम सुविधा प्राप्त वर्ग को अधिकतम लाभ मिले। समाज की सामाजिक और आर्थिक विषमताओं को दूर करने के लिए रॉल्स ने 'भेदमूलक सिद्धान्त' लागू कर वर्तमान टैक्स प्रणाली की तरह गरीबों को अधिक से अधिक लाभ पहुँचाना चाहता था। न्याय की स्थापना करने के लिए आय का पुनर्वितरण जरूरी है। इससे योग्य के साथ गरीब का का भी विकास होगा। अमीरों, पूँजीपतियों पर टैक्स लगाकर गरीबों पर खर्च किया जाए जिससे समाज में आर्थिक असमानता की खाई को कम किया जा सके। भारत में अमीर–गरीब के बीच व्याप्त भेद को कम करने के लिए सरकार द्वारा गरीबों के कल्याण हेतु जनधन योजना, उज्जवला, आवास, छात्रवृत्ति तथा मनरेगा जैसी जनकल्याणकारी योजनाएँ संचालित की जा रही है। जिससे समाज में सामाजिक, आर्थिक समानता स्थापित हो सके। गरीब वर्ग भी अच्छे से जीवनयापन कर सके। उदारवादियों का मानना है कि आर्थिक स्वतंत्रा और समानता के बिना उदारवादी राज्यों द्वारा किए जाने वाले समस्त राजनीतिक और सामाजिक अधिकार झूठे और खोखले है। इन्होंने समानता को आधार बनाकर एक वर्गविहीन समान का आदर्श सामने रखा है। जो अपने नागरिकों को समान आर्थिक, नागरिक सामाजिक और राजनीतिक अधिकार प्रदान करता है, वह समाज न्यायपूर्ण है। सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए रॉल्स और अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक विषमताओं को खत्म करने के लिए एक तार्किक सामाजिक व्यवस्था की संरचना की, जहाँ न्यूनतम लाभ प्राप्त लोगों को अधिकतम लाभ मिल सके। इसके लिए रॉल्स ने स्वतंत्रता को प्राथमिकता दी उसके बाद अवसर की निष्पक्ष समानता की पूर्ण सन्तुष्टि के पश्चात् सामाजिक, आर्थिक असमानताओं का क्रम इस प्रकार निर्धारित हो– कम से कम सुविधा प्राप्त वर्ग को अधिक से अधिक लाभ मिल सके। इन विषमताओं को दूर करने के लिए भेदमूलक सिद्धान्त जैसे अमीरों पर टैक्स लगाकर गरीबों में बाँट कर आय का पुनर्वितरण करना है।

यदि ऐतिहासिक, सामाजिक भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार के कारण समाज में कोई वर्ग या समुदाय अन्य वर्गो से पीछे रह जाता है तो समाज में सभी

समूहों को समान स्तर पर लाना सामाजिक न्याय का ध्येय है। अम्बेडकर ने हिन्दू समाज में व्याप्त सभी प्रकार की असमानताओं को समाप्त करने के लिए असमानता पर आधारित हिन्दू धर्मशास्त्रों को हटाने पर बल दिया। दलितों कमजोरों के उत्थान के लिए राज्य, कानून, प्रजातंत्र, तथा संवैधानिक प्रावधान जरूरी है। प्रजातांत्रिक मूल्यों की स्थापना के लिए वयस्क मताधिकार तथा एक व्यक्ति एक वोट का सिद्धान्त लागू हो। जिस तरह रॉल्स संवैधानिक प्रजातंत्र में विश्वास करता है। परिवर्तन के लिए संविधान में विश्वास करता है। शुभ पर अधिकारों को महत्व देता है। उसी तरह अम्बेडकर दलितों की उन्नति के लिए प्रजातंत्र, संवैधानिक प्रावधान 'आरक्षण' पर विश्वास करता है। संसार में सरकारों द्वारा किए गए सुरक्षात्मक और सकारात्मक भेदभाव के प्रावधानों के अनुरूप भारत में संवैधानिक जाति आधारित आरक्षण इसी भावना से विकसित हुए है। अम्बेडकर ने सन् 1928 में रॉल्सीय न्याय सिद्धान्त से 43 वर्ष पूर्व साइमन कमीशन के सामने आबादी के अनुपात में दलितों के प्रतिनिधित्व की माँग की थी। अम्बेडकर की न्यायवादी संकल्पना वितरणात्मक और समाज के वंचित वर्ग के लाभ के लिए 'असमान बर्ताव' (सकारात्मक भेदभाव) पर आधारित है जो जॉन रॉल्स के निष्पक्षता के न्याय सिद्धान्त से साम्यता रखती है।

इस तरह सामाजिक न्याय की अवधारणा मूल्यों पर आधारित है जिसका उद्देश्य असमानता को समाप्त करना, सभी के लिए अवसर की निष्पक्ष समानता के लिऐ वातावरण तैयार करना है। सभी मनुष्यों को सम्मान के साथ जीने में समक्ष बनाना है। सार्वभौमिक और स्थायी शान्ति तभी स्थापित हो सकती है जब व्यवस्थाएँ सामाजिक न्याय पर आधारित हो। इस दृष्टि से अम्बेडकर का चिन्तन रॉल्स के चिन्तन से साम्यता रखता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *रॉल्स, जॉन : ए थियरी ऑफ जस्टिस, केम्ब्रिज : मास, 1971*
2. *उपर्युक्त, पृ. 3*
3. *दाधीच, नरेश : समसामयिक राजनीतिक सिद्धान्त, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2015, पृ. 79*
4. *अम्बेडकर, बी.आर : सम्पूर्ण वाङमय, खण्ड 1, सूचना प्रसारण मंत्रालय नई दिल्ली, 1993, पृ. 100*
5. *पूरणमल : बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, जीवन संघर्ष, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयुपर, 2008, पृ. 240*
6. *रणसुभे, सूर्यनारायण : डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर, राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृ. 72*
7. *गाबा, ओ.पी. : राजनीति सिद्धान्त की मूल संकल्पनाएँ, के. एल. मलिक एण्ड सन्स प्रा.लि., नई दिल्ली, 2014, पृ. 86*
8. *उपर्युक्त, पृ. 61*
9. *दाधीच, नरेश : जॉन रॉल्स का न्याय का सिद्धान्त, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2003, पृ. 03*
10. *जाटव. डी. आर. : डॉ. बी. आर. अम्बेडकर का समाज दर्शन, समता साहित्य सदन, जयपुर, 1990, पृ. 84*
11. *शशि, एस. एस. (एडी.) अम्बेडकर एण्ड सोशल जस्टिस, खण्ड दो, इन्फोर्मेशन एण्ड ब्रॉडकॉस्टिंग गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया, दिल्ली, 1992,पृ.19*
12. *संधु, ज्ञानसिंह : राजनीति सिद्धान्त, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1991, पृ. 278-279*

ISSN 2277-5587

अलवर मेवात में लोकगीतों की संवेदना

रूपा
शोधार्थी, राज ऋषि भर्तृहरि मत्स्य विश्वविद्यालय, अलवर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

आज के आधुनिक युग में मनुष्य के जीवन मूल्य आदर्श भावनाऐं और मनुष्य होने की पहचान खतरे में है इसकी रक्षा सबसे अच्छी तरह लोक संस्कृति के माध्यम से ही हो सकती है क्योंकि लोक संस्कृति लंबे समय से इन सद्वृतियों का पोषण करती आई है संस्कृति की भाषा, सौंदर्य और संवेदना की भाषा होती है। वह सद्वृतियों का पोषण उपदेश के द्वारा नहीं करती वह मन रंजन करते हुए उपदेश को संवेदना में ढाल मन के भीतर उतारती है बार-बार ऐसा करने पर अर्थात् लोक संस्कृति में लगातार रमने पर सद्वृतियों हमारे भाव जगत का हिस्सा बनने लगती है संस्कार बनने लगते हैं। अलवर मेवात के लोक गीतों के माध्यम से वहां के जन-जीवन विशेष की संस्कृति वहां के रीति-रिवाज,वहां के रहन-सहन लोक जीवन की झलकियां वहां के जन मानस की संवेदना जो हमें लोक गीतों के माध्यम से परिलक्षित होती है उनका विश्लेषण किया गया है जो कि हमारे लोक जीवन मे लोकगीतों के महत्त्व को उजागर करता है आज के इंटरनेट के जमाने में जब हम लोग अपनी संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं लोकगीतों की संवेदना हमें बरबस ही अपने मोह पाश में बांध लेती है ये संवेदना हमें अपनी मिट्टी से जुड़े होने का अहसास कराती है।इसलिए हमे अपनी लोक संस्कृति की रक्षा करना बहुत जरूरी है।

संकेताक्षर : *मेवात, लोकगीत, संवेदना, लोकसंस्कृति, अलवर।*

भारत कृषि प्रधान देश है इसकी किसी भी अंचल की संस्कृति को वहां का कृषक जीवन व्यापक रूप से प्रभावित करता है मेवात क्षेत्र की अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा रही है यहां के कवि, रचना कार लोक जीवन से अलग नहीं रहे हैं इसी कारण सामान्य जनजीवन में प्रचलित लोक साहित्य की शब्दावली का अधिकांश भाग मेवात किसानों के अशिक्षित होने के कारण व्याकरण और साहित्यिक भाषा एवं क्रम का अनुसरण नहीं करता है। इसके विपरीत साहित्यिक भाषा हमेशा से लोक जीवन से प्राण और जीवनीशक्ति ग्रहण करती आई है इस संबंध में कबीर व बिहारी का एक दोहा दृष्टव्य है-

सुरतिढेकुलीलेज ल्योमन नित ढोलनहार
कंवल कुआं में प्रेम रस पीवैबारम्बार।[1]

किसी भी समाज और लोक जीवन को समझने के लिए उस समाज के लोक साहित्य और लोक संस्कृति को समझना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि लोक साहित्य लोक मन का उद्गार है। मेवात अंचल का लोक जीवन हरियाणा, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य की सीमाओं को स्पर्श करता है। मेवजाति की बहुलता के कारण इस अंचल का नाम मेवात पड़ा। मेवात राजस्थान के जिला अलवर की रामगढ़, तिजारा, किशनगढ़, अलवर, लक्ष्मणगढ़, गोविंदगढ़ आदि तहसीलें व जिला भरतपुर की कांमा, डीग, नगर आदि तहसीलें हैं।

मेवाती लोकगीत मेवाती लोक समाज एवं संस्कृति की पूर्णता से प्रतिनिधित्व करते है मेवाती लोक गीतों में समाज का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा नारी की स्थिति, धार्मिक सद्भावना का असली रूप विद्यमान है यह बात जगजाहिर है कि यह साहित्य लोक के बीच पैदा हुआ अनपढ़ साहित्य है इसलिए इसमें श्रेष्ट कला का निदर्शन संभव

नहीं है लेकिन लोक साहित्य के जरिए किसी भी देश या अंचल विशेष की सामाजिक संरचना उसकी सोच समाज में व्याप्त समस्याओं और विसंगतियों का मूल्यांकन आसानी से किया जा सकता है मेवात एक विशेष अंचल है जिसकी संस्कृति दूसरे क्षेत्रों से अलग है यह भिन्नता उसके लोकगीतों में स्पष्ट दिखाई देती है जो गीत मेवात के अलावा दूसरे क्षेत्रों में नहीं मिलते उनमें होली, बिरहा, मरसिया, रतवई तथा सिंगलवाटी महत्वपूर्ण है।[2]

''रतवई'' जो कि एक बहु प्रचलित लोकगीत है यह गजल की भांति गाई जाती है। औरतें इसे मिलकर गाती हैं मगर पुरुष अकेला भी इसे गा लेता है अपने पति से अगाध प्रेम यहां की औरतों की विशेषता है यहां की संस्कृति में यह देखा गया है कि महिलाएं ही खेती, मजदूरी कर घर भी चलाती है और घर का सारा काम करती हुई भी अपने पति भरतार के प्रति प्रेम व समर्पण के भाव से पुरितरहती है।

इस ओर संकेत कर रहीरतवई निम्न है–

ऑडी रोटी घीघणों
खाले–खाले मेरानणदी काबीर
तोमें तो मेरो जी घणों[3]

यहां मेवाती स्त्रियों के हृदय में अपने पति भरतार के प्रति आत्मसमर्पण के भावों की अभिव्यक्तिकी गयी है जो हमें हमारी भारतीय संस्कृति के दर्शन करवाती हैं

लोकगीतों के द्वारा हमें जनजीवन के समस्त पक्षों के दर्शन होते हैं उनके दर्पण में हम विशिष्ट जन समुदाय की भावनाओं को प्रत्यक्ष देख लेते हैं हर जाति, जन समाज के अपने गीत होते हैं इसमें किसी समाज विशेष की जीवन अनुभूति की अभिव्यंजना होती है जीवन की प्रत्येक अवस्था में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यत लोकगीत एक अलग हीप्रकार से प्रेरणा देकर समयानुकूल भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने का एक अति उत्तम साधन है।

अलवर मेवाती लोकगीतों की परंपरा प्राचीन है यहां के जीवन की छोटी–बड़ी खुशियों में यहां के लोकगीतों की झलकियां माहौल को और भी मनोरम खुशनुमा और हर्षोउल्लास के रंग में रंग देती हैं जन्म से लेकर मृत्यु तक होने वाले अनेक रीति–रिवाजों में लोकगीतों की अपनी भूमिका है यह उनकी सामाजिक जीवन की झलकी और लोक संस्कृति का परिचायक है।

''सांग'' मेवाती अंचल की धरोहर है जो मेवाती लोक जीवन के लिए जीवन मूल्यों, जीवन पद्धतियों, परंपराओं, सामाजिक मान्यताओं व लोक के चरित्र का परिचय प्रस्तुत करती हैं यह यहां की जनजीवन का विशिष्ट अंग हैं और आज इंटरनेट के जमाने में यह हमारे लोक जीवन में इस तरह से घुलमिल गए हैं कि अलवर के मेवाती लोकगीतों में भी उनकी अभिव्यक्ति नकारी नहीं जा सकती या यो कहे इनका सामंजस्य मेवाती लोकगीतों में और भी अनोखे रंग भर रहा है क्योंकि उनको सुनने से लोकमन के हृदय के उद्‌गारों को नई दिशा मिलती है संगीत के इतिहास में अलवर का नाम लिए बिना काम नहीं चलता है[4]

पश्चिमी राजस्थान के संगीत में जहां सामंती प्रभाव अधिक हावी है वहीं पूर्वी राजस्थान का संगीत लोक जीवन से अधिक जुड़ा हुआ है अतरू अलवर राजस्थान की पूर्वी क्षेत्र में होने के कारण यह सहज ही कहा जा सकता है कि अलवर मेवात क्षेत्र में लोकगीतों की छटा हृदय को झंकृत कर देने वाली है। अलवर मेवात क्षेत्र के लोकगीत मनोरम व सुखद होने के साथ–साथ हमें शिक्षा भी प्रदान करते हैं जो कि यहां के लोकगीतों की अद्‌भुत विशेषता है यहां के लोगों की अद्‌भुत कला को प्रदर्शित करता एक लोकगीत–

मेरी खुलगी सकूलपढ़न लूं जाऊंगी।
मैंने करा इरादा सबसे ज्यादा नंबर लाऊंगी।
माई दुनिया में ना पढ़ाई का कोई जवाब।
हमें जीना की तहजीब सिखा रही हैं किताब।
मैं तो एकदिना भी गैरहाजरी ना करवाऊंगी।
मेरी खुलगी सकूल पढ़न लूं जाऊंगी।[5]

अलवर मेवात के लोकगीतों मे शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती भागीदारी को लोकगीतों के माध्यम से अभिव्यक्ति दी गई है। मेव जाति में शिक्षा का अभाव पाया जाता है। लोकगीतों के माध्यम से शिक्षा का प्रचार प्रसार जनसामान्य तक पहुंचाना अपने आप में सराहनीय है। साक्षात्कार के द्वारा किशनगढ़ क्षेत्र की रहने वाली एक महिला ''रसदीना'' ने बताया कि मेवाती लोकगीतों में ऋतु के गीतों का बहुत चलन है जिन्हें बारहमासी गीत कहते है महिलाएं खेती–बाड़ी के कार्यो से होने पर प्राय मनोरंजन व हास–परिहास के लिए लोकगीत गाती हैं उन्होंने बताया कि लगभग हर महीने के हिसाब से हमारे अलवर मेवात क्षेत्र में गीत गढ़े हुए है जिनमें से कुछ निम्न है।

बारहमासी गीतों में सर्दी का वर्णन–
जाडा तेरीरूतभली, भीतरसोणोहोय

जाड़ा भरे शरीर पे, पिया गले लगा ले मोय[6]

बारहमासी गीतों में सावन का वर्णन–
सावन आयो साहिबा या मन लिपटी नार
खिलकत लिपटी बेलरी पुरुषन लिपटी नार[7]

लोकगीत छंद, अलंकार, ताल और काल की सीमा की लक्ष्मण रेखाओं में बंधकर सीमित नहीं होना जानते इसलिए ये विराट के उपासक हैं सामान्य के आराधक हैं तथा वे किसी व्यक्ति या वर्ग विशेष को रिझाने के लिए नहीं रचे जाते उनमें तो किसी व्यक्ति या वर्ग विशेष के मन बहलाव का भाव ही प्रमुख होता है प्रकृति से संबंध होने के कारण लोकगीत प्रकृति के महासंगीत का अंश है ब्याह शादी के अवसर पर लाडा लाडी मेवों में नौसा, नौसी कहे जाते है यहां की लोक संस्कृति सांस्कृतिक समन्वय का प्रमुख स्त्रोत रही है यहां विवाह के समय भात भरने की परम्परा मेवों मे भी प्रचलित है विवाह में भात की रस्म प्रमुख है बेटा–बेटी के विवाह में बहन द्वारा भाई से भात पहनने की रस्म पूर्ण होना आवश्यक है अलवर मेवात के एक लोकगीत मे एक बहन अपने भाई से रुघे गले से गुहार करती है–

मैं दुसरी माला पहर खड़ी कोठा पे
बीरा ऐसों भरीयो भात बहाण टोटा में।
थाली में डेढ़ हजार, मोहर लोटा मे
बीरा ऐसों भरियो भात बहाण टोटा में।[8]

एक अन्य भात का लोकगीत–

मेरी हंसली धरिया, भरिया बहाण को भात,
मैं कैसे भरदूं, नौतण ना आई मेरे भात
तू तो झूठों राजा, भेली तोआईनाई हात,
सिदौसीजायो, दुनियांधरेगी तोलू नाम
रोयेगी लाडो, आवैंगा माई बाबा याद
मेरी हंसली धरिया, भरियाबहाण को भात।[9]

भात के कपड़े जब भाई अपनी बहिन और रिश्तेदारों को पहनाते उढ़ाते हैं तब इसे ''पहरावणी'' कहते हैं।

विवाह से संबंधित अन्य मेवाती लोकगीत–

बिनवारा या बिनोरा के गीत–

मैं तोय पूछूं मेरा सुघर बन्ना,
मेरो आज आयो है बिनवारा।
धौंला धौंला चावल, उजलो सो भात,
सुघर बन्ना याको राजा, बहना रानी होय।[10]

उबटन या तेल के गीत–

आवोरी सात जणियों तेल चढ़ावों।
काई कोतेरो उबटणो,
काई को तेरो तेल
जौचणाको उबटणो और चमेली को तेल।[11]

चाक के गीत–

कुम्हारी को लहंगों धुमणों,
ठेकर होले दैछिणालठेकर हौले दै।
कुम्हारी को बलमों लडणो,
हँसणों मेरो लैछिनाल हँसणो मेरो लै।[12]

सलामी या जौहरी गीत–

बन्ना ये तेरी मोटर कहा जाएगी रे,
या चौधरी की बेटी है बिहार दान लाएगीरे
दहेज लायेगी रे।[13]

विदाई के गीत–

मैं तो चिड़िया से उड़ जाऊंगी मेरा बाबल।
मेरा तो तीनदिना भारी मेरा बाबल।
मोसूहडक–बडक मत बोले मेरा बाबल।[14]

वधू पक्ष की ओर से लग्न धरने परवर पक्ष की ओर से लग्नझेलनेके अवसर पर एक छोटे से बच्चे के हाथ में वर वधु की तरह तमोलिया, धागा बांधा जाता है तब से वह बालक बिंदायक कहलाता है बिंदायक लोकगीत अलवर मेवात प्रचलित हैं–

छोटो सो विनायक डगमग चलें,
चार लाडू गोदिया में लेऊं,
तो पग–पग चाले।[15]

पारम्परिक जीवन को छोड़ अगर अलवर मेवात के जनजीवन के दैनिक जीवन की बात की जाए तो मेवात जनपद की अपनी संस्कृति है यहां का जीवन मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है। परम्परागत रूप में मेवात में संयुक्त परिवार प्रथा रही है जमींदारा व कृषि कार्य एक दो आदमी के बस की बात नहीं है परिवार में जितने भी सदस्य हैं सभी मिलजुल कर एक दूसरे का हाथ बंटाते हुए काम करते हैं। हल जोतना, ग्वाल–बालो को सम्हालना, सिंचाई, लावणीघर का काम आदि कई लोगों के सामूहिक रूप से करने पर आसानी से हो जाते है परन्तु संयुक्त परिवार प्रथा अब धीरे–धीरे खत्म होती जा रही है दो भाइयों के परिवार भी ज्यादा दिन साजे नहीं निभाते हैं घर में दो बासन भिड़ते भी हैं पुरुष परिवार से अलग नहीं होना चाहते तो भी स्त्री

आपस में साथ नहीं रहना चाहती मेवात की स्त्रियां शर्मीले मर्दो की तुलना में ज्यादा मुखर हैं वह अपने को ज्यादा चालाक चतुर मानती हैं वह मेहनती,पतिव्रता ओर चतुर है एक पत्नी पति से कहती है कि अब हम साजे ना रहेगान्याला होवेगा जेठानी, देवरानी और सांस सेरात दिन कलह क्लेश रहता है पत्नी अच्छे खेत घर में दो डांगर (पशु) लेना चाहती है इस संबंध में एक गीत प्रसिद्ध है।–

हम न्याला होवैंगा, सरमायो मत बालमा,
जब तिहारी भैंस बटैंगी, हम कुन्नीलेवैंगा।
सरमायों मत बालमा३३३.।
जब तिहारी हवेली बटैगी, हमअड्डा लेवैंगा
सरमायोमत बालमा३३३३.।[16]

अपने को पति से चतुर मानने वाली पत्नी के मन की चतुराई भरे उद्‌गार निम्नलिखित लोकगीत मे अभिव्यक्त होते है।

देख बलम मेरी चतुराई रे३३३३.।
टका में तीन सौदा कर लाई रे।।
मोलू जंफर, तोलू कुरता,
छोरा लू टोपलो दिलवाईरे।
देख बलम मेरी चतुराईरे३.....।।
दौराणी कूं चपटी,
जिठाणी कूं मटकी,
छोरी कूं भावलोदिलवाई रे।।
जेठ कूं चिलम,
ससुरकूंहुक्को,
देवर कूं सुलपी दिलवाई रे।
देख बलम मेरी चतुराई रे।[17]

मेवात की कृषक नारी कर्महीन पति को भी कमाकर देती हैं बच्चों का भरण पोषण करती हैं पति और परिवार के सदस्यों द्वारा प्रताड़ित होती हुई भी जीवन की विसंगतियों को झेलती हुई उसकी पतिव्रत्य संवेदना सराहनीय है उनका जीवन प्राय खेती–बाड़ी के कार्यो में ही निकल जाता है अलवर मेवात की महिलाएं प्रायः मनोरंजन के लिए सबसे ज्यादा मेलों में जाना पसंद करती हैं। क्योंकि अलवर मेवात क्षेत्र में धार्मिक मेलों की बड़ी धूम है परंतु उनके गृह क्रियाकलापों से निवृत्ति ना होने के कारण वह इनमें भी नहीं जा पाती हैं और अगर कभी समय निकाल कर जाती भी है तो कई बार प्रताड़ित भी कर दी जाती हैं इसी स्थिति का वर्णन मेवाती महिला के हृदय से बड़ी ही संवेदना के साथ इस लोकगीत में अभिव्यक्त हुआ है।

मारे मत ढोला
मारे मत राजा
मारे मत गजबी
कुठेरलग जाएगी
तोलु समझाई भूतेरी मेला में ओजू जाएगी३३[18]

यह लोग अपने कृषि कार्य को बड़ी ही तन्मयता और पूर्ण मनोयोग से करते हैं तथा अपना जीवन का अधिकांश भाग इसी मिट्टी की सुगंध में बीतते है उनके सभी सुख–दुख, हास–परिहास इसी में समाए रहते हैं फसल बोते समय इनके लोक जीवन में बड़ा ही हर्षोल्लास देखा जाता है। फसल बुवाई के समय को कृषक के जीवन में उत्सव के जैसा माहौल होता है यह लोग बड़ी आशा के साथ धरती में बीज रोपित करते हैं क्योंकि वही उनके जीवन का आधार है रामगढ़ क्षेत्र में साक्षात्कार के दौरान मेवाती महिला महमूदी ने वहां के जन–जीवन के बारे में हमें परिचित कराते हुए कृषि से जुड़े उनके लोकगीतों को अभिलिखित करवाया वे कहती हैं कि फसल बुवाई के समय हमे खाने–पीने तक का होश नहीं रहता है। हमारो ब्यालु भी खेतों में ही होवे हम खेतों में बीज डालने के बाद उनको जोतने के बाद ही ठाल खाते हैं उससे पहले हमें कुछ भी सुध नहीं रहती है में सिर्फ खेत ही खेत नजर आते हैं। निम्न लोकगीत दृष्टव्य है

खेतकी दड़ी रे
मेरी उपरी दड़ी रेखेत
हां जोतेगो, मेरो राजा३३.
रेमेरीबीच की दड़ीरे
घणी सकाडे मैं उठ आयी
एक भरोटोकुट्टी कुट्वाई
तू रोटी खाले राजा३३
तेरे कने ही खड़ी रे
मेरी खेत की दड़ी रे
हो जोतेगो मेरो राजा३३[19]

रामगढ़ निवासी मेवाती महिला महमूदी ने बताया की हम अधिकतर साजे (संयुक्त परिवार) में ही रहते हैं। खेती–बाड़ी के कार्यो से निवृत्त होने के पश्चात फुर्सत के पलों में लोकगीत ही हमारे मनोरंजन का प्रमुख साधन है हम प्रायः दुपहरी में पेड़ों के नीचे बैठकर इन्हें गुनगुनाया करती हैं। जिसका उदाहरण निम्न हैं।

सड़क पर बंगलो री
जामे सोवे बालमियोरिसदार
सास तेरो बेटों री

मो पे रोटी मंगावेआधी रात
सड़क पे बंगलों री
जामे सोवेबालमियोरिसदार [20]

लोकगीत गीतिकाव्य के आरंभिक समन्वय के साथ संगीतात्मकता एवं राग का एक विकसित रूप है शब्द और अर्थ की मंजुल आत्माभिव्यक्ति और संवेदनशीलता है संगीत, काव्य की दृष्टि से लोकगीतों का अतीत में अति महत्व है लोक मानस के स्वाभाविक उल्लास, उमंगों, व्यथा, पीड़ा, परम्परागत रीति–रिवाज तथा काव्य की रसात्मक अनुभूतियां लोकगीतों में है लोकगीतों में स्वाभाविक एवं मौलिक अलंकारों का प्रयोग होता है लोकगीतों में श्रृंगार और करुण रस का अधिक महत्व प्रकट होता है लोकगीतों के द्वारा जीवन में होने वाले क्रियाकलापों को अपने स्वरों, शब्दों और भावों की अभिव्यक्ति के द्वारा मानस के सामने जनमानस के सामने प्रस्तुत किया जा सकता है लोकगीतों में व्यंजना एवं छंद विधान का उचित सामंजस्य होता है इनमें लयात्मकता की मात्रा अत्यधिक होती है लोकगीत किसी भी प्रदेश के हो उनमें समान भाव धारा, समान सांस्कृतिक तत्व, सामान धार्मिक भावना तथा जीवन की सुंदर अनुभूति होती है लोकगीतों मे संगीत का रसास्वादन उनके भाव के अनुरूप होता है।

लोक संस्कृति के अभिन्न के विशिष्ट अंग लोकगीतों के द्वारा हम हमारी संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सहज ही पहुंचा देते हैं यह हमारे आंतरिक हृदय की मनो संरचना का ऐसा उद्‌गार है जिसकी सानी और कोई नहीं ले सकता हमें लोकगीतों के द्वारा मुखर हुई अपनी संस्कृति को बचाने के लिए लोकगीतों के संकलन को प्राथमिकता देनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *चिराग–ए–मेवात, संपादक मुंशी खांबालोत, विशेषांक 3 जून 2006, पृष्ठ संख्या–59, मेवाती संस्कृति की प्रगतिशील पत्रिका।*
2. *मेवात का इतिहास और संस्कृति, संपादक डॉक्टरपी. एस.सहारिया, डॉक्टरमुंशी खां बालोत, मेवात साहित्य अकादमी संस्थान अलवर, पृष्ठ संख्या154*
3. *Nishim Nagar, मेवात अंचल का सांस्कृतिक परिदृश्य, Journal of Advance and scholarly Research es in Allied Education, Vol-16, March 2019*
4. *अलवर सृजन अंक 2005–06, प्रकाशक बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर, संपादक डॉक्टर संग्राम मीणा, पृष्ठ संख्या 25*
5. *यू व्युब, शायर मुरसलीन ओफिशियल, मेवाती लोकगीत,1 जूलाई 2019*
6. *साक्षात्कार, रसदीना मेवणी, किशनगढ़, अलवर राजस्थान।*
7. *वही*
8. *डॉक्टर छंगाराम मीणा, मेवात का कृषक जीवन और मेव–मीणा संबंध, मेवात का इतिहास और संस्कृति डॉक्टर पी.एस.सहरिया डॉक्टर मुंशी खां बालोद मेवात साहित्य अकादमी संस्थान अलवर पृष्ठ संख्या113*
9. *साक्षात्कार, ग्राम–रामगढ (अलवर), महमूदी, उम्र–40 साल*
10. *Nishim Nagar, मेवात अंचल का सांस्कृतिक परिदृश्य, Journal of Advance and scholarly Researches in Allied Education, Vol-16, March 2019*
11. *वही*
12. *सीमा गौतम, मेवात के लोकगीतों में चित्रित लोक जीवन, मेवात का इतिहास और संस्कृति, संपादक डॉ.पी. एस. सहारिया, डॉ. मुंशी खां बालोत, मेवात साहित्य अकादमी संस्थान अलवर, पृष्ठ सं. 156*
13. *वही*
14. *वही*
15. *डॉक्टर छंगाराम मीणा, मेवात का कृषक जीवन और मेव–मीणा संबंध, मेवात का इतिहास और संस्कृति डॉक्टर पी.एस. सहरिया डॉक्टर मुंशी खां बालोत मेवात साहित्य अकादमी संस्थान अलवर पृष्ठ संख्या186*
16. *वही*
17. *वही*
18. *यूट्यूब, मेवाती लोकगीत, एल्बम छतरी के नीचे आजा गायक बाबूलाल, सुनीता, प्रकाशित11फरवरी2019*
19. *साक्षात्कार, महमूदी मेवणी, रामगढ़, अलवर, राजस्थान*
20. *वही*

पूना पैक्ट पर गांधी एवं अम्बेड़कर का विश्लेषण

अल्का मंत्री
शोधार्थी, महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

1932 का पूना पैक्ट इतिहास की तारीख में एक तथ्य से ज्यादा कुछ नहीं था हांलाकि तत्कालीन समय में इस पैक्ट ने इस समस्या को कम कर दिया लेकिन आने वाले भविष्य में इसने हिन्दु जाति व्यवस्था में एक विभाजनकारी लकीर खींच कर रख दी । उस समय में गांधी जी ने हरिजन उद्धारक यात्राओं के द्वारा इस विभाजनकारी लकीर को मिटाने का पूरा प्रयास किया लेकिन एक शोद्यार्थी होने के नाते मैं यह कह सकती हूं कि अंग्रेज अपनी 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति में पूरी तरह से कामयाब हो गए। गांधी जी अम्बेड़कर के बीच उपजे अविश्वास ने इस विभाजनकारी लकीर को आने वाले समय में और चौड़ा कर दिया।

संकेताक्षर : *हिन्दु जाति, मताधिकार, प्रणाली, निर्वाचक मंडल, साम्प्रदायिकता, गोलमेज परिषद, अछूत, अल्पसंख्यक वर्ग, हरिजन आन्दोलन।*

मैं खाली हाथ लौटा हूं। लेकिन मैंने देश की इज्जत के साथ कोई सौदा नहीं किया। बंबई के आजाद मैदान में आयोजित विराट आमसभा के माध्यम से गांधी ने देशवासियों को गोलमेज परिषद की विफलता की सूचना दी। वे उसी दिन सुबह गोलमेज परिषद तथा यूरोप के दौरे से लौटे थे। 28 दिसम्बर, 1931 को 'एस. एस. पिल्साना' से स्वदेश की धरती पर उतरते ही गांधी को पहली सूचना कांग्रेस के महासचिव जवाहर लाल नेहरू की गिरफ्तारी की मिली।[1]

मताधिकार प्रणाली निर्धारित करने के लिए नियुक्त लोथिवन समिति 17 जनवरी, 1932 को भारत आ गई थी।[2] ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने इसे ऐसे तथ्य भी एकत्रित करने का निर्देश दिया था, जो दलित वर्गों के पृथक प्रतिनिधित्व के पक्ष में युक्ति तैयार करने में सहायक है। इससे लगने लगा था कि 'सांप्रदायिक सवाल' पर ब्रिटिश सरकार किसी भी क्षण अपने निर्णय की घोषणा कर सकती है। ऐसे में खेरवाड़ा कारावास में कैद गांधी की भूमिका क्या रहेगी ? क्या वे सरकार को यह कदम चुपचाप उठा लेने देंगे ? या कि वे इस बारे में समय रहते सरकार को चेतावनी देंगें ? उनके अपने अनुनायियों की दृष्टि में तो यह एक प्रकार से गांधी के सिद्धांतो की ही परीक्षा थी।[3]

इन सभी जिज्ञासाओं और संदेहों के बीच गांधी ने 11 मार्च को भारतमंत्री सर सैम्युल होर को पत्र लिखा। उसमें उन्होने 'खुद को अंत्यनों में से एक होने' की बात को दोहराते हुए स्पष्ट किया कि ''मैं इस बात के विरूद्ध नहीं हूं कि धारा सभाओं में उन्हें प्रतिनिधित्व मिले । औरों के लिए मताधिकार का पैमाना ज्यादा कड़ा हो, तो भी मैं इस बात की तरफदारी करूंगा कि शिक्षा या जायदाद की योग्यता के किसी भी प्रतिबंध कि बिना, सभी बालिग अंत्यज स्त्री–पुरूषों को मताधिकार मिले। मगर अलग निर्वाचक मंडल अंत्यज और हिन्दु समाज दोनों के लिए ही अपार हानि करने वाला है। अलग निर्वाचक मंडलों में उन्हें कैसा और कितना नुकसान होने वाला है, उसे समझने के लिए ये जानना जरूरी है कि वे कथित स्वर्ण हिन्दुओं के बीच में किस तरह बिखरे हुए है, उसे तो अलग निर्वाचक मंडल चीरकर टुकड़े–टुकड़े ही कर देगें।[4] सैम्युल होर को लिखे इस पत्र के अन्त में गांधी ने अपने अगले कदम की सूचना देते हुए लिखा – ''इसलिए ब्रिट्रिश सरकार को मैं नम्रतापूर्वक जता देना चाहता हूं कि अगर वह अंत्यजों के लिए अलग निर्वाचक मंडल बनाने का निर्णय देगी मुझे आमरण उपवास करना पड़ेगा।''[5]

सांप्रदायिक निर्वाचक मंडल के बारे में ब्रिटिश सरकार ने अपना फैसला पहले ही तय कर रखा था। परन्तु इस पर प्रधानमंत्री ने अपने निर्णय की विधिवत् घोषणा 17 अगस्त, 1932 को की। इसमें वे सभी दोष थे, जिनके बारे में गांधी ने गोलमेज परिषद् और उसके बाद भी सबको सचेत किया था। इसमें अछूतों के लिए अलग से निर्वाचन क्षेत्र बनाने के अलावा उनको सामान्य सीटों पर भी खड़े होने का अधिकार दिया था। इसके साथ ही यह भी व्यवस्था की गई थी कि बीस वर्ष बाद पृथक निर्वाचक मंडल की व्यवस्था स्वंय ही समाप्त हो जायेगी।[6]

18 अगस्त, 1932 को उन्होनें प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर 13 नवम्बर, 1931 को गोलमेज परिषद की अल्पमत समिति की बैठक में घोषित अपनी प्रतिज्ञा याद दिलाई ''सेंट जेम्स पैलेस में हुई उस बैठक में मैंने जाहिर किया था कि मुझे आपके फैसले का विरोध जान की बाजी लगाकर करना पड़ेगा। वैसा करने का एक ही रास्ता है – और वह यह है कि नमक और सोडे के साथ या उसके बिना सिर्फ पानी के सिवा और किसी तरह की खुराक न लेकर आमरण उपवास किया जाए।'' गांधी ने अपने पत्र में प्रधानमंत्री को सूचना दी कि उनका उपवास 20 सितम्बर, 1932 को दोपहर में शुरू होगा। यह उपवास तभी समाप्त होगा, जब सरकार अपनी इच्छा से अथवा जनमत के दबाव से अछूतों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल की योजना वापस ले लेगी।[7]

गांधी ने प्रधानमंत्री के इन तर्कों का उत्तर देते हुए 9 सितम्बर को उन्हें लिखा – ''अछूतों का दोहरे मत मिल जाने से उनकी या हिन्दु समाज की रक्षा नहीं हो जाती और वे बिखराव से नहीं बच पाएगें। अछूतों के लिए अलग निर्वाचक मंडल बनाने की योजना में हिन्दु समाज को विघटित करने वाला विष दिया जा रहा है और इससे अछूतों का भला नहीं होगा। अछूत वर्गों को जरूरत से अधिक प्रतिनिधित्व मिले, मैं इसके विरुद्ध कैसे हो सकता हूं। मेरा विरोध तो यह है कि जब तक वे हिन्दु समाज में रहना चाहते हैं तब तक उन्हें मर्यादित रूप में भी हिन्दु समाज से अलग करने की बात कानून में नहीं होनी चाहिए।[8]

जैस–जैसे गांधी के आमरण उपवास का दिन आता गया, देश में पृथक निर्वाचक मंडल के प्रश्न पर हलचल बढ़ती गई। उनके अछूत नेता भी इस मुद्दे पर पुर्विचार की मांग करने लगे थे। शुरुआत सुप्रतिष्ठित अछूत नेता और 'डिप्रेस्ड क्लासेस एसोसिएशन' के अध्यक्ष एम. सी. राजा ने की। 13 सितम्बर को उन्होनें एक वक्तव्य में अछूतों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल संबंधी ब्रिटिश सरकार के निर्णय की कटु आलोचना की और सभी वर्गों से अपील की कि वे ''गरीबों और अस्पृश्यों के सबसे बड़े उपकारक महात्मा गांधी'' के प्राण बचाने के लिए एकजुट होकर प्रयत्न करें। इस मुद्दे पर केन्द्रीय विधान सभा में रखे हुए 'काम रोको' प्रस्ताव पर बोलते हुए एम. सी. राजा तथा अन्य वक्ताओं ने भी यही भावना व्यक्त की।[9]

गांधी जी ने दलित वर्ग को अल्पसंख्यक वर्ग में शामिल करने तथा निर्वाचक मंडल व्यवस्था की कड़ी आलोचना की तथा इसे समाप्त करने के लिए रैम्जे मैकडोनाल्ड को पत्र लिखा लेकिन कोई सुनवाई नहीं होने के कारण उन्होनें 20 सितम्बर, 1932 से आमरण अनशन प्रारम्भ कर दिया। मदन मोहन मालवीय, राजेन्द्र प्रसाद, पुरुषोत्तम दास टंडन तथा सी. राजगोपालचारी के प्रयासों के फलस्वरुप उन्होनें अम्बेड़कर को दलित पृथक निर्वाचक मंडल को समाप्त करने के लिये मनाया। 26 सितम्बर, 1932 को गांधी जी और अम्बेड़कर के मध्य 'पूना समझौता' हुआ। समझौते की शर्तों के अनुसार दलित वर्गों के लिए पृथक निर्वाचक व्यवस्था समाप्त कर दी गई लेकिन विधान मंडलों में दलितों के लिए आरक्षित सीटों की संख्या 71 से बढ़ाकर 147 कर गई तथा केन्द्रीय विधान मंडलों में उनके लिए सुरक्षित सीटों की संख्या में 18 प्रतिशत की वृद्धि की गई।[10]

गांधी जी ने उपवास तोड़ने के बाद पूना समझौते के बारे में कहा '' मैं अपने हरिजन भाइयों को इसके पूरी तरह पालन का विश्वास दिलाता हूं।'' गांधी जी अपने वचन को पूरा करने के प्रयास में जुट गए लगभग 2 वर्ष वे छूआछूत निवारण आन्दोलन में जुटे रहे। 7 नवम्बर, 1933 को वर्धा से गांधी जी ने अपनी हरिजन यात्रा प्रारम्भ की।[11]

गांधी जी अपने लेखों और भाषणों में बार–बार कहते थे कि ''हम हिन्दु लोग सदियों से हरिजन और दलितों पर जा अत्याचार ढ़ाते आए है, अब हमें उसका प्रायश्चित करना चाहिए।'' शायद इसी कारण उन्होनें डॉ. अम्बेड़कर की आलोचना का बुरा नहीं माना।[12]

गांधी जी कहते थे कि हरिजन आंदोलन, राजनितिक आंदोलन नहीं है। लेकिन वह जानते थे कि इसके व्यापक राजनीतिक परिणाम निकलेंगे, ठीक उसी तरह

जैसे ''छूआछूत'' के जहर से हमारा पूरा सामाजिक – राजनितिक ढांचा विषाक्त हो गया है।[13]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *तेंदुलकर, डी.जी. महात्मा खण्ड 3 दिल्ली, 1969 पृ. 152*
2. *तेंदुलकर, डी.जी. महात्मा खण्ड 3 दिल्ली, 1969 पृ. 152–54*
3. *प्यारेलाल – दि एपिक फास्ट, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1942 पृ. 10*
4. *प्यारेलाल – दि एपिक फास्ट, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1942 पृ. 10*
5. *तेंदुलकर, डी.जी. महात्मा खण्ड 3 दिल्ली, 1969 पृ. 160*
6. *देसाई, महादेव, महादेव भाई की डायरी, दूसरा भाग (नवजीवन) पृ. 340*
7. *द बाम्बें क्रॉनिकल, 14 सितम्बर 1932*
8. *शादूर विलियम – गांधीः ए मेम्बर पृ. 205–06*
9. *प्यारेलाल – दि एपिक फास्ट, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1942 पृ. 19*
10. *तेंदुलकर, डी.जी. महात्मा खण्ड 3 दिल्ली, 1969 पृ. 167–69*
11. *देसाई, महादेव, महादेव भाई की डायरी, दूसरा भाग (नवजीवन) पृ. 122*
12. *गोरे, एम. एस. – दि सोशल कांटेस्ट ऑफ एन आइडियोलॉजी, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1993 पृ. 142*
13. *बिड़ला घनश्यामदास, बापू की प्रेम प्रसादी, खण्ड–1 पृ. 342*

भारत में मंदी और आर्थिक विकासः एक विस्तृत आर्थिक अध्ययन

डॉ. दुर्गेश कच्छवाह
सहायक प्रोफेसर, ओंकारमल सोमानी कॉलेज ऑफ कॉमर्स, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

भारत की आजादी के बाद की यात्रा एक मामूली कृषि प्रधान देश के रूप में शुरू हुई थी। एक लम्बी और श्रमसाध्य यात्रा के बाद भारत ने दो अंकीय वृद्धि दर को भी छुआ। लेकिन वर्तमान समय में कुछ समय से भारतीय अर्थव्यवस्था अपनी तेजी धीरे-धीरे खो रही है। भारत की विकास दर में निरन्तर गिरावट देखने को मिल रही है। RBI, IMF व World Bank ने भारतीय अर्थव्यवस्था के G.D.P. ग्रोथरेट के पूर्वानुमान को भी घटा दिया है। कुछ समय से भारतीय अर्थव्यवस्था में एक गहरा विरोधाभास देखा जा रहा है। भारत की विकास दर 6.6% है। पिछले डेढ़ दशकों में अपने ही प्रदर्शन की तुलना में यह कमजोर है कई महत्वपूर्ण संसूचकों पर नजर डाले तो अर्थव्यवस्था की स्थिति निराशाजनक लगती है। अर्थव्यवस्था का हर क्षेत्र मांग की कमी से प्रभावित है आंकड़ों से पता चलता है कि कोर सेक्टर में केवल 2.1% वृद्धि हुई और औद्योगिक उत्पादन सूचकांक मात्र 0.1% गया है। भारत की निर्यात वृद्धि पिछले पाँच वर्षो में लगभग शून्य रही है। बचत व निवेश की दरे 30% से नीचे चली गई है। भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के आँकड़ों का विश्लेषण करे तो यह स्पष्ट होता है कि वह धीरे-धीरे मंदी की तरफ बढ़ रही है।

संकेताक्षर : *मंदी, मांग, विकासदर, बचत, निवेश, भारत, आर्थिक विकास, भुगतान संकट।*

आजादी के बाद से भारत को प्रमुख रूप से दो बार (सन् 1991 व 2008) मे आर्थिक मंदी से झटका लगा है सन् 1991 में आई आर्थिक मंदी के पीछे आंतरिक कारण थे लेकिन 2008 में वैश्विक मंदी के चलते भारत की अर्थव्यवस्था पर आंच आई थी। 1991 में भारत के आर्थिक संकट में फसने की सबसे बड़ी वजह भुगतान संकट था इस दौरान आयात में भारी कमी आई थी देश का व्यापार संतुलन गडबड़ा चुका था सरकार बड़े राजकोषीये घाटे पर चल रही थी खाड़ी युद्ध में 1990 के अंत तक स्थिति इतनी गंभीर हो गई थी कि भारतीय विदेशी मुद्रा भंडार मुश्किल से तीन सप्ताह के आयात लायक बचा था सरकार कर्ज चुकाने में असमर्थ हो रही थी।

विदेशी मुद्रा भंडार घटने मे रूपये में तेज गिरावट आई जिससे घाटे का संकट बढ़ गया पूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर की सरकार फरवरी, 1991 में बजट पेश नहीं कर सकी इसी दौरान अंतराष्ट्रीय क्रेडिट रेटिंग एजेंसी मूडीज ने भारत को डाउनग्रेड कर दिया। विश्व बैंक और आई.एम.एफ ने भी अपनी सहायता रोक दी, जिससे सरकार को भुगतान पर चूक से बचने के लिए देश के सोने को गिरवी रखने के अलावा कोई विकल्प नही बचा था।

1991 में आए आर्थिक संकट की मुख्य वजह रूपये की कीमत तेजी से घटना, देश का बढ़ता चालू घाटा, निवेशकों का भारत के प्रति घटता भरोसा और रूपये की विनिमय दर में कमी थी। 1990 के दशक के अंत तक भारत गंभीर आर्थिक संकट में था 2008 में आई आर्थिक मंदी से भारत की अर्थव्यवस्था को उतना नुकसान नहीं झेलना पड़ा था। 2008 की मंदी के दौरान भारत का वैश्विक जगत के साथ व्यापार काफी घट गया था। आर्थिक ग्रोथ घटकर 6% से नीचे चली गई थी, IMF के अनुसार वर्तमान समय में भी वैश्विक अर्थव्यवस्था मंदी से गुजर रही है जिसके कारण इस साल दुनिया के 90% देशों में वृद्धि दर कम होगी। IMF के अनुसार भारत जैसी उभरती बड़ी अर्थव्यवस्थाओं पर इस मंदी का असर कुछ अधिक है

साहित्य की समीक्षा

जैसा कि हम सभी इस तथ्य से अवगत है कि एक नए शोध कार्य के संचालन के लिए कुछ आधर होना चाहिए या पहले से प्रकाशित एक ही विषय से सम्बन्धित कार्य उपलब्ध होना चाहिए। अध्ययन के प्रत्येक पहलू को जो पहले से प्रकाशित है। शोधकर्त्ता द्वारा उसका अध्ययन किया गया। यह शोध कार्य भी पहले से प्रकाशित अध्ययनों पर आधारित है प्रत्येक नए शोधकार्य के लिए यह अनिवार्य है कि वह अनुसंधान के एक ही विषय पर किए गए पिछले शोध कार्य से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा होना चाहिए और पहले से प्रकाशित कार्य के साथ पुराने शोध कार्य को संबंद्ध करना साहित्य की समीक्षा के रूप में जाना जाता है मूल रूप से साहित्य की समीक्षा इस बात का संक्षिप्त विवरण देती है कि शोध कार्य को कैसे प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यह शोधकर्ता को बिना किसी भ्रम के पिछले प्रकाशित अध्ययनों का हवाला देकर सही दिशा में आगे बढ़ने में मदद करता है।

संबंधित विषय पर बहुत सारे अध्ययन किए गए है आइचेंग्रीन और ओरूके ने अध्ययन में पाया कि मंदी ने न केवल ओद्योगिक उत्पादन के संदर्भ में अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है बल्कि निवेश व रोजगार को भी प्रभावित किया है जब कोई देश मंदी में होता है तो इसका प्रभाव सभी क्षेत्रों जैसे–उत्पादन, रोजगार, आय आदि सभी क्षेत्रों पर पड़ता है। 2008 और 2009 के बीच एकत्र किए गए अमेरिकी आंकड़ों पर हर्ड एण्ड रोहवेदर का अनुमान है कि 30% से अधिक अमेरिकी परिवार बेरोजगार है। 2014 में ब्राह्मी और जौरी ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया कि वित्तीय संकट ने वित्तीय प्रणाली के विकास को प्रभावित किया है। पेरेजौ और सुद्रिया ने 2012 में मंदी के एक महत्वपूर्ण बिन्दु को उजागर किया जिसमें बताया कि वित्तीय संकट का विकास पर प्रभाव पड़ता है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन की विषय सामग्री व आंकड़े प्राथमिक व द्वितीय स्त्रोंतों से एकत्रित की गई है। इस हेतु मंदी पर आधारित रिपोर्ट संदर्भ पुस्तकें, समाचार पत्र, जर्नल, वेबसाइट, शोध लेखों आदि का अध्ययन किया गया। निम्न उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु हमने उपरोक्त शोध पद्धति अपनाई।

- मंदी ने भारतीय अर्थव्यवस्था को कैसे प्रभावित किया।
- भारत में मंदी के क्या कारण रहे।
- मंदी को दूर करने हेतु कौन–कौन से कदम हमे उठाने होगें।

मंदी के संकेत

भारतीय अर्थव्यवस्था का हर क्षेत्र मांग की कमी से प्रभावित हैत्ठप्ने भी अपनी मौद्रिक नीति समिति की बैठक में भारतीय अर्थव्यवस्था के G.D.P ग्रोथ रेट के पूर्वानुमान को घटकार 6.9% कर दिया है भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के आंकड़ो का अध्ययन करे तो निष्कर्ष निकल रहा है कि वह धीरे–धीरे मंदी की तरफ बढ़ रही है।

- एक दौर में प्रभावशाली निजी विमान सेवा कंपनी जेट एयर वेज आज बंद हो चुकी है एयर इण्डिया बड़े घाटे में चल रही है किसी दौर में टेलीकॉम सेक्टर की पहचान रही बी.एस.एन.एल आज अपने अस्तित्व के लिए जूंझ रही है
- रक्षा के क्षेत्र में सरकारी कंपनी हिन्दुस्तान एयरोनॉटिक्स ने हाल ही में बाजार से 1000 करोड़ रूपये का कर्ज अपने कर्मचारियों को वेतन भुगतान के लिए लिया है। यह इस दशक में पहली बार है भारतीय डाक सेवा का वित्त वर्ष 2019 में वार्षिक घाटा 15000 करोड़ रू तक हो चुका है वर्तमान में यह सबसे नुकसान वाली सरकारी की कंपनी बन चुकी है
- भारत की सबसे बड़ी कच्चे तेल और नेचुरल गैस की कंपनी ओ.एन.जी.सी का अतिरिक्त केश रिजर्व तेजी से घट रहा है सरकार द्वारा गैर जरूरी अधिग्रहण के चलते आज यह कंपनी एक बड़े कर्ज के दबाव में आ गई है
- भारतीय बैकिंग व्यवस्था अभी एन.पी.ए की त्रासदी को झेल रही है वर्तमान में कुल एन.पी.ए 9,49,279 करोड़ रूपये का है एन.पी.ए का 50% हिस्सा तो महज देश को 150 बड़े पूंजीपतियों की वजह से हुआ है। हालांकि पिछले 4 सालों में 1 लाख करोड़ रूपये से अधिक के एन.पी.ए. में कमी आई है लेकिन यह भी हमे नही भुलना है कि पिछले 5 सालो में मोदी सरकार ने बड़े पूंजीपतियों के 5,55,603 करोड़ के लोन माफ कर दिए है बैंके एन.पीए. के साथ–साथ बैंकिग फ्रॉड की भी समस्या से जुंझ रही है पिछले 11 वर्षो में आर.बी.आई. के

अनुसार 53334 घटनाएँ बैंकिग फ्रॉड की हुई है इसकी वजह से 2.05 लाख करोड़ रूपये का नुकसान बैंको को हुआ है

- वर्तमान समय में ऑटो सेक्टर में माँग की कमी की वजह मे स्पष्ट मंदी दिख रही है ऑटो सेक्टर भारतीय अर्थव्यवस्था कें महत्वपूर्ण स्थान रखता है यह पूरी जी. डी. पी. का 7.50% और मैन्यूफैक्चरिंग में 49% हिस्सा रखता है हाल ही के आँकड़ो के अनुसार वाहनो की बिक्री में 18. 4% की कमी आई है अगर मंदी ऐसे ही चलती रही तो ऑटो सेक्टर में करीब 10 लाख लोगो को नौकरियां गवानी पड़ सकती है।
- भारत की जी.डी.पी. ग्रोथ रेट 5 साल के न्यूनतम स्तर पर आ चुकी है विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं भी भारत की जी.डी.पी ग्रोथ रेट के पुर्वानुमान मे कमी कर रही है
- निवेश को किसी भी अर्थव्यवस्था में एक मजबूत कड़ी माना जाता है। भारतीय अर्थव्यस्था निजी निवेश की कमी से जुंझ रही है वित्त वर्ष 2015 में निवेश पर 30.1% थी वही 2019 में यह घटकर 28.9% रह गई है। भारत जैसी बड़ी आबादी वाली अर्थव्यवस्था को खपत आधारित अर्थव्यवस्था बताया जाता है पर पिछले 3 वर्षो से खपत की दर एक समान 28.3% रही है
- कृषि क्षेत्र के बाद सबसे ज्यादा 10 करोड़ लोगों को रोजगार देने वाले टेक्सटाईल सेक्टर की हालत भी खराब है। देश में कपड़ा उद्योग में 34.6% की गिरावट आई है। जिसकी वजह से 25 से 30 लाख नौकरियाँ जाने की आशंका है।
- इसी तरह के हालात रियल एस्टेट सेक्टर के है जहां 2019 तक भारत के 30 बड़े शहरों में 12 लाख 80 हजार मकान बनकर तैयार है लेकिन उनके खरीदार नही मिल रहे हैं।
- RBI द्वारा हाल ही में जारी आंकड़ों के अनुसार बैंकों द्वारा उद्योगों को दिए जाने वाले कर्ज में गिरावट आई हैं। पेट्रोलियम, खनन, टेक्सटाइल, फर्टीलाइजर और टेलिकॉम जैसे सेक्टर्स ने कर्ज लेना कम कर दिया है।
- यह मंदी का ही असर है कि सोना–चांदी के आयात में 5.3% की कमी आई है निवेश और ओद्योगिक उत्पादन के घटने से भारतीय शेयर बाजार में भी मंदी का असर दिख रहा है।
- 2019 के आँकड़ों से पता चलता है कि कोर सेक्टर मे केवल 2.1% वृद्धि हुई है और औद्योगिक उत्पादन सूचकांक मात्र 0.1% ऊपर गया है। भारत की निर्यात वृद्धि पिछले पांच वर्षो में लगभग शून्य रही है। बचत और निवेश की दरों 2003 में 30% सीमा पार करने के बाद 2008 में 35% तक पहुँच गई जिससे भारत पूर्वी एशिया की तीव्र वृद्धि वाली अर्थव्यवस्थाओं पर लगने लगा। लेकिन अभी ये 30% से नीचे चली गई है।
- कृर्षि विकास दर भी ऐतिहासिक गिरावट के साथ आगे बढ़ रही है वर्तमान कृर्षि विकास दर किसानों की दुगनी आय का सपना 2022 तक किसी भी कीमत पर पूरा नहीं हो सकता है। इसके लिये प्रतिवर्ष 9% से 10% की दर की जरूरत पडेगी।

कारण

- अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की बढ़ती कीमतें जिसका असर महंगाई दर पर पड़ा है।
- डॉलर के मुकाबले रूपये की घटती हुई कीमते हैं। एक अमेरिकी डॉलर की कीमत 72 रूपये के आंकड़े को छू रही है।
- आयात के मुकाबले निर्यात में गिरावट से देश का राजकोषीय घाटा बढ़ा और विदेशी मुद्रा भण्डार में कमी आई है।
- इसके अलावा अमेरिकी ओर चीन के बीच जारी ट्रेड दौर की वजह से भी दुनिया में आर्थिक मंदी का खतरा तेजी से बढ़ रहा है। जिसका असर भारत पर भी पड़ा हैं।
- देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था बड़े पैमाने पर किसानों की स्थिर आय की समस्या से जूंझ रही है। बीते पाँच वर्षो में ग्रामीण मजदूरी वृद्धि पर औसतन 4.5% रही है किंतु मुद्रा स्फीति के समायोजन से यह मात्र 0.6% रह जाती है।
- भारतीय अर्थव्यवस्था की मौजूदा स्थिति के लिये कुछ चक्रीय कारकों के साथ संरचनात्मक मांग की समस्या को भी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।
- हाल ही में सामने आए NPFC संकट से देश का क्रेडिट सिस्टम काफी प्रभावित हुआ है, जिससे उसके ऋण देने की क्षमता पर भी प्रतिकूल प्रभाव देखने को मिला है।

- आर्थिक वृद्धि के सभी चार प्रमुख कारक–निजी उपभोग, निजी निवेश, सार्वजनिक निवेश और निर्यात बुरी तरह प्रभावित हुए है।
- पिछली 10 तिमाहियों में केवल 3 बार ही ऐसा हुआ जब देश के निजी उपभोग में वृद्धि देखने को मिली। जबकि इस तथ्य को नजर अंदाज नही किया जा सकता कि भारतीय अर्थव्यवस्था काफी हद तक लोगों की मांग पर ही टिकी है।
- कुछ संस्थागत सुधारों के बजाय भारतीय अर्थव्यवस्था नीतियों की अनियमितता को झेल रही है। नोटबंदी आर्थिक संकट सामने आया सुधार की जगह एक बड़ा आर्थिक संकटन बनकर सामने आयत जी. एस. टी. एक बहुत बड़े सुधार के रूप में बताया गया उसका भी बाजार पर खराब असर देखने को मिला।
- स्टेट ऑफ वर्किंग इंडिया 2019 नामक इस रिपोर्ट से पता चलता है कि बीते दो वर्षो में असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले लगभग 50 लाख लोगों में अपना रोजगार खो दिया है। रोजगार उपलब्ध कराने में सबसे अधिक योगदान विनिर्माण क्षेत्र का होता है। जो काफी समय से सुस्त चल रहा है।

सुझाव

- आर्थिक संकट को हल्का करने का एक तरीका सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण को गति देना है। क्योकि यह अब एक स्थापित सत्य है कि राज्य के स्वामित्व वाली बैंकिंग प्रणाली के साथ संरचनात्मक समस्याऐं लगातार बनी रहती है।
- बैंको की ब्याज दरों को कम करने से ऋणदाताओं की क्षमता को भी बढ़ाया जा सकता है। ताकि ऋण का विस्तार हो सके और दुनियाभर की सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्था में विकास को बढ़ावा मिले।
- भारत में पिछले 15–20 वर्षो में जिस वृद्धि दर को निरंतर बनाए रखा है उसे आगे भी जारी रखने के लिये बुनियादी ढ़ाँचे, विनिर्माण और कृषि में बड़ी मात्रा में निवेश की आवश्यकता है। इसे पूरा करने के लिए एक मजबूत वित्तीय ढ़ाँचा तैयार करना होगा जो विकास की और बढ़ते भारत की जरूरतों और मांगों को पूरा कर सके।
- भारत की आबादी में इस समय नौजवानों की संख्या सबसे ज्यादा है। अर्थशास्त्र की भाषा में इसे डेमोग्राफिक डिविडेंड कहा जाता है यानि यह आबादी की एक ऐसी स्थिति है जो किसी भी देश को बहुत बड़ा लाभ पहुँचा सकती है, क्योंकि देश में उत्पादक श्रमशक्ति का अनुपात सबसे ज्यादा है लेकिन हम इसका लाभ नहीं उठा पा रहे है। क्योकि हमारे पास इस श्रम शक्ति को देने के लिये पर्याप्त काम ही नहीं है। रोजगार के अवसर ही नहीं है। इस समस्या के समाधान हेतु हमें बड़े पैमाने पर निवेश करना होगा। इतने बड़े पैमाने पर निवेश देश में तभी आएगा, जब श्रम सुधार किये जायेगें, अर्थात श्रम कानूनों को बदला जाएगा। लगभग वैसे ही जैसे चीन ने किया। हमें भी श्रम प्रधान उद्योगों को बढ़ावा देना होगा कुछ ऐसा करना होगा कि इनमें उद्योगपतियों की खास दिलचस्पी पैदा हो।
- अर्थव्यवस्था में सुधार के लिए देश के वित्तीय क्षेत्र मुख्यतःNBFC में सुधार किया जाना आवश्यक है। परन्तु MSMES जैसे कुछ विशेष क्षेत्रों के लिये NBFCS से ऋण के प्रवाह की जरूरत है।
- गत कुछ वर्षो में किये गए आर्थिक सुधारों ने देश के शीर्ष कुछ लोगों की ही क्षमता निर्माण का कार्य किया है परन्तु आवश्यकता है कि आने वाले सुधारों ने समाज की अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति को भी लाभ मिल सके।
- देश में बुनियादी ढ़ाँचे के अंतर को देखते हुए यह आवश्यक है कि बुनियादी ढ़ाँचे के निर्माण में निजी क्षेत्र की भूमिका को और अधिक बढ़ाया जाए।
- ग्रामीण क्षेत्र में इन्फ्रास्ट्रक्चर और रोजगार आदि में निवेश करने से इस क्षेत्र को मंदी के प्रभाव से उभरने मे काफी मदद मिलेगी।

निष्कर्ष

हाल ही में राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO) ने चालू वित्त वर्ष (2019–20) के लिये देश की अर्थव्यवस्था संबंधी आँकड़ों का पहला अग्रिम अनुमान जारी किया है। अधिकारिक आँकड़ों के मुताबिक चालू वित्त वर्ष में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) घटकर 5% पर पहुँच सकता है। वित्त वर्ष 18–19 में भारत की GDP वृद्धि दर 6.8% थी। यदि चालू वित्त वर्ष में GDP की विकास

दर 5% ही रहती है तो यह पिछले 11 वर्षो की सबसे न्यूनतम विकास दर होगी। आर्थिक संकेतको की मौजूदा स्थिति को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अनुमानित दर में ज्यादा फेरबदल संभव नही है। ऐसे में यह स्पष्ट हो गया है कि भारत एक व्यापक मंदी की कगार पर है। मंदी के सभी कारण एक दूसरे से जुड़े है जो मौजूदा समय में हमारी अर्थव्यवस्था में मौजूद है मंदी की वजह कुछ आंतरिक है तो कुछ ब्राही। लेकिन आन्तरिक वजह ज्यादा बड़ी है। जैसे कि अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्रों में गिरावट, डिमांड और सप्लाई के बीच लगातार कम होता अंतर और निवेश में मामूली कमी जैसी चीजे मंदी की तरफ इशारा कर रही है। जिसका असर अब दिखाई देने लगा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मिश्र, डा. जे.पी – मुद्रा एवं वित्तीय प्रणालियाँ, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स।*
2. *शर्मा, डा. हरिशचन्द्र – मुद्रा, बैंकिग एवं अन्तराष्ट्रीय व्यापार, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्री ब्यूटर्स प्रा.लि.।*
3. *सेठ, डा. एम. एल. – मुद्रा एवं बैंकिग, शिवलाल – अग्रवाल एण्ड कम्पनी।*
4. *सेठी, डा. टी.टी. – मुद्रा, बैंकिग एवं लोकाविन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।*
5. *आर्थिक मंदी : कारण, उपाय।*

   https: // www. drishtiias com> hindi
6. *aaj tak. in today. in*
7. *m. economictimes.com*
8. *https: // satyagrah. scroll. in*
9. *global rece.ssion and its impact on india financial markets: by nidhi choudhari volume-3*
10. *www. amarujala. com*
11. *www. jagran.com*
12. *economictimes. india times.com*
13. *https:// m. economictimes.com>*
14. *https:// hi.m.wikipedia. org> wiki*
15. *www. livehindustan.com*

‘छायावाद’ में नामवरसिंह की तुलनात्मक आलोचना–पद्धतिः एक अनुशीलन

जेराराम माली
शोद्यार्थी, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

आचार्य नामवर सिंह ने पूर्ववर्ती समीक्षकों द्वारा प्रयुक्त तुलनात्मक आलोचना पद्धति के विभिन्न दोषों से परे रहते हुए अपने आलोचनात्मक लेखों से यथास्थान विभिन्न रचनाओं एवं रचनाकारो की तुलनात्मक दृष्टि से विश्लेषण करते हुए जीवन और साहित्य के व्यापक संदर्भ में उनका मूल्यांकन किया है। उनकी कृति ‘‘छायावाद’’ (1955) के विविध प्रतिनिधि उदाहरणों के साथ इस शोध लेख में डॉक्टर नामवर सिंह की समीक्षा के श्रेष्ठांश पर विचार किया गया है। छायावादी काव्य के धरातल पर उनकी तुलनात्मक समीक्षा –दृष्टि किसी व्यक्ति विशेष विशेष के प्रति सीमित नहीं है अपितु समग्र साहित्य और संपूर्ण जीवन जगत् के प्रति अपनी व्यापक गहराई के कारण ही उनका समीक्षा – कर्म और अधिक विस्तृत शोध की माँग रखता है।

संकेताक्षर : *व्यापकता गहराई, जागो फिर एक बार, रूपविन्यास, आर्य समाज की सौंदर्य भावना, अलंकार प्रियता, मार्क्सवादी समालोचक।*

आलोचना की विभिन्न प्रवृत्तियों के आधर आलोचना पद्धतियों का नामकरण किया जाता है। तुलनात्मक आलोचना में दो या दो से अधिक साहित्य, कृतियों अथवा कृतिकारों की तुलना की जाती है। हिन्दी साहित्य में ‘मिश्रबंधुओं के ‘हिन्दी नवरत्न’ कृति से तुलनात्मक आलोचना का सूत्रपात हुआ। द्विवेदी युग में ‘देव–बिहारी’ के संदर्भ में इस आलोचना पद्धति का विशेष उपयोग किया गया । डॉ. रामचन्द्र तिवारी ने द्विवेदीयुगीन तुलनात्मक आलोचना पर विचार करते लिखा है – ‘‘इस खींचतान से हिन्दी में तुलनात्मक आलोचना का पृथक साहित्य ही बन गया। तुलनात्मक मूल्यांकन करने वाले आलोचकों के संस्कार रीतिकालीन ही थे। यों तुलनात्मक मूल्यांकन अपने आप में श्लाध्य है। तुलना के द्वारा ही मूल्य उभरकर सामने आता है । किन्तु इस आधार पर छोटे–बड़े का निर्णय बहुत स्वस्थ प्रवृति का द्योतक नहीं कहा जा सकता । यदि प्राचीन कवियों का यह तुलनात्मक मूल्यांकन जीवन और साहित्य के व्यापक सन्दर्भ में किया गया होता तो श्रेयस्कर होता ।”

इस दृष्टि से वस्तुतः आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. नगेन्द्र और नंददुलारे वाजपेयी आदि ने अपने मौलिक आलोचना–कर्म द्वारा तुलनात्मक आलोचना को नूतन दिशा प्रदान की। नामवरसिंह ने पूर्ववर्ती समाालेचकों द्वारा प्रयुक्त तुलनात्मक आलोचना पद्धति के दोषों से दूर रहते हुए अपने आलोचनात्मक लेखों में यथास्थान विभिन्न रचनाओं एवं रचनाकारों का तुलनात्मक विश्लेषण जीवन और साहित्य के व्यापक संदर्भ में किया ।

‘छायावाद’ (1955) के विभिन्न अध्यायों का अनुशीलन करते हुए हमें यह ज्ञात हो जाता है कि नामवरसिंह ने प्रत्यक्ष तौर पर किन्हीं दो रचनाओं या रचनाकारों के मध्य तुलना का ध्येय नहीं रखा अपितु युग विशेष की प्रवृत्तियों पर विचार करते हुए बीच–बीच में जहाँ जरूरत पड़ी, वहाँ प्रसंगानुकूल ढंग से अपना मंतव्य प्रस्तुत करने में तुलनात्मक पद्धति का सीमित उपयोग किया है। यहां कतिपय प्रतिनिधि उदाहरणों पर विचार किया जाना समाचीन होगा।

‘‘पल–पल परिवर्तित प्रकृति–वेश” अध्याय में वे लिखते हैं– वाल्मीकि–कालिदास का प्रकृति–काव्य प्रकृति पर आंरभिक विजय का परिणाम है तो छायावादी कवियों का, प्रकृति –चित्रण आधुनिक विजय का । इसी तरह उन्होंने

रवीन्द्रनाथ की बांगला कविता 'निझरिर स्वप्न भंग' और पंतजी की काव्यपंक्ति 'स्वप्न में चोंका गई प्रभात' की भावपूर्ण तुलना की।

उन्होंने कालिदास के 'मेघदूत' और पंत जी के 'बादल' कविता के उदाहरण से स्पष्ट किया – छायावाद युग ने प्रकृति को इतना महत्व दिया कि किसी अपरिचित और नन्हें से फूल को भी स्वतन्त्रता से एक कविता का विषय बनाया । अकेली एक ओस की बूँद पर भी पूरी–की पूरी कविता लिखी जा सकती है, जिसमें और किसी भाव का संदेशवाहक ही बनकर आए तो आए। पंत ने स्वतंत्र रूप से बादल पर एक पूरी कविता लिखी, जिसमें 'बादल' चेतनप्राणी की तरह अपने बारे में स्वयं कहता है। कहाँ कालिदास का 'धूम ज्येतिः सलिलमरूतां सन्निपातः' और कहाँ पंत का स्वतः चेता बादल! कालिदास का मेघ स्वयं सोच नहीं सकता लेकिन पंत का बादल अपनी चेतना की तरह अपने बारे में स्वयं सर्तक है। इसी प्रकार छायावादी काव्य में प्रस्तुत प्रकृति–वर्णन को पूर्ववर्ती कवियों के प्रकृति चित्रण से श्रेष्ठ मानते हुए उन्होंने लिखा कि छायावादी कवि ने प्रकृति के परिचित दृश्यों को नए रूप में देखा और अनेक अपरिचित तथा अदृष्ट वस्तुओं पर भी दृष्टिपात किया।

उन्होंने द्विवेदीयुगीन कवि हरऔध की 'संध्या' और निराला की 'संध्यासुंदरी' की अनूठी तुलना कर अंतर दर्शाया । इसी प्रकार उन्होंने हरिओध के नैश–वर्णन और प्रसाद के नैश–चित्रण में अंतर को रेखांकित करते हुए लिखा– इस रजनी पुरंध्री (हरिऔध) को 'माधव यामिनी' (प्रसाद जी) के बराबर रखकर देखिए–

कहाँ हरिऔध की रजनी की चटक–मटक और कहाँ प्रसाद की कामिनी का धीर पद–विन्यास! कहाँ अल्युज्जला तारकमाला और धुलती हुई कालिमा में धुलता हुआ आलोक! 'भावों–भरी का प्रमाणपत्र पाकर भी हरिऔध की रजनी भावशून्य है, लेकिन प्रसाद की यामिनी उस प्रमाणपत्र के अभाव में भी भावप्रवण है!' स्पष्ट है कि नामवरसिंह महज अच्छी तुलना करने के लिए ही आलोचना नहीं करते है बल्कि अच्छी आलोचना करने के लिए आवश्यकतानुसार संतुलित मात्रा में तुलना का इस प्रकार उपयोग करते है कि उसमें जीवन और साहित्य का अंतर्संबंध साकार हो उठता है।

'देवी माँ सहचरि प्राण' अध्याय में उन्होंने विभिन्न युगों में विद्यमान नारी–दृष्टि के सापेक्ष छायावादी युग में चित्रित नूतन नारी दृष्टि का प्रसंगवश तुलनात्मक चित्रण किया है। कवि पंत की कविता 'अनग' के बारे में उनका विचार है कि निःसंदेह यह 'अनग' कालिदास के युग का मूर्त कामेदव नहीं है। यह तो पौराणिक अनंग का नवीन संस्करण है। और प्रसाद का 'काम' (कामायनी का पात्र) यहीं नहीं कि पौराणिक काम से अधिक भव्य, उदात्त और आधुनिक है, बल्कि पंत के 'अनंग' से भी अधिक व्यापक है। यहाँ हम देख सकते है कि 'इतिहास और आलोचना' संग्रह के पहले ही निबंध 'व्यापकता और गहराई' में उन्होंने लिखा था–''गहराई की व्यापकता मानवता तक जाती है।'' इस प्रकार नामवरसिंह 'काम' को व्यापकता सामाजिक संदर्भ में मानवतावादी दृष्टिकोण से देखना उचित मानते हैं।

सीता को प्रियदर्शन और प्रणय की प्रथम अनुभूति का चित्र तुलसीदास ने इस प्रकार किया है –

लोचन मग रामहिं उर आनी।
दीन्हें पलक–कपाट सयानी।। (रामचरितमानस)

उधर कवि निराला ने भी 'याद आया उपवन' शीर्षक पद में जानकी के कमनीय नयनों के प्रथम कंपन की तुरीयावस्था का चित्रण किया है। नामवरसिंह ने इन दोनों की गहरी तुलना करते हुए लिखा–

इसी प्रसंग का वर्णन तुलसीदास ने भी किया है; परन्तु निराला के इस चित्रण में जो मानसिक उथल–पुथल तथा प्रेम के जिस विश्वव्यापी प्रभाव की अभिव्यक्ति हुई है, वह तुलसीदास की सीधी–सादी अथिव्यंजना में कहां, नारी के देह–चित्रण की उदात्त छायावादी काव्य प्रवृत्ति के अन्यान्य उदाहरणों के तुलनात्मक निरूपण से नामवरसिंह ने स्पष्ट किया कि 'आधुनिक प्रणयानुभूति की यही बारीकियाँ है, जो पुरानी कविता से आधुनिक प्रणयानुभूति कविता को अलग करके असकी विशिष्टता प्रकट करती है।' उन्होंने स्त्री–पुरूष के प्रणय–संबंध के निरूपण में प्रसाद, पंत और निराला आदि छायावादी कवियों की ही परस्पर तुलना करके उपयोगी निष्कर्ष दिये है। इसी तरह उपयुक्त उदाहरणों पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा है–

नारी सौन्दर्य के चित्रण में उपमानों की राशि तो पहले के कवियों ने भी लुटाई है, लेकिन छायावादी कवियों ने अद्‌भुत कल्पनाशक्ति के द्वारा नारी का जो भव्यरूप खड़ा किया है; उसके सामने पुराने कवियों की रूढ़ उपमाओं से अलंकृत नारी तुच्छ है। प्रसाद की श्रद्धा, पंत की अप्सरा और निराला की रत्नावली के सामने

जायसी की पद्मावती सूर की राधा, तुलसी की सीता और रीतिवादी कवियों की समस्त नायिकाएं फीकी पड़ जाएगी। स्पष्ट है कि नामवरसिंह किन्हीं दो रचनाओं या रचनाकारों के मध्य तुलना करते हुए भी समग्र आलोचनात्मक दृष्टिकोण के साथ युगीन प्रवृत्तियों पर दृष्टिपात करते हैं इससे उनकी तुलनात्मक आलोचना में 'व्यापकता और गहराई' का समावेश होगा स्वाभाविक ही है।

'जागो फिर एक बार' अध्याय में उन्होंने स्पष्ट किया कि छायावादी काव्य ने छायात्मक अभिव्यक्ति के अतिरिक्त कभी-कभी सीधे ढ़ंग से भी राजनीतिक और सामाजिक बातों पर प्रतिक्रिया देते हुऐ राष्ट्रीय भावों के उत्थान में सहायता दी। प्रसाद और कवि निराला की कविताओं में जातीय गौरव का बोध सर्वाधिक झलकता है। निराला के बारे में वे लिखते है कि उनकी कविता छत्रपति शिवाजी का पत्र (1922) औरंगजेब के समर्थक जयसिंह के लिए नहीं, बल्कि अंग्रेज-बहादुर के समर्थक आधुनिक 'जयसिंहों' के लिए नहीं, बल्कि अंग्रेज-बहादुर के समर्थक आधुनिक 'जयसिहों' के लिए है। ''वे काव्य में प्रतीकों की जड़ तक पहुँचते हुए ऐसी ही अनूठी तुलनाएं सामने खोलकर रख देते हैं। वे अन्य आलोचकों के इस तुलनात्मक निर्णय से सहमत है क राजनीतिक ढ़ंग से जो कार्य गाँधीवाद ने किया, साहित्यिक ढंग से वही कार्य छायावाद ने किया।"

'कल्पना के कानन की रानी' अध्याय में नामवरसिंह ने मध्ययुगीन और छायावादी कल्पना में अंतर स्पष्ट करने के लिए सीधे तौर पर ही बिहारी और निराला की यमुना-संबंधी कविताओं की तुलना की है। इसी तरह भागवत, सूरसागर, रासपंचाध्यायी में राधा-कृष्ण की लीलाओं के साथ निराला द्वारा संस्मृत लीला चित्रों की सीधी तुलना करते हुए उन्होंने लिखा है कि -''निराला के चित्र भागवत, सूरसागर, रासपंचाध्यायी आदि के चित्रों के अधिक कल्पना-प्रवण और मोहक है। इसी तरह यदि कालिदास के मेघदूत और पंत के बादल की तुलना की जाए तो छायावादी स्वच्छंद कल्पना की विशेषता स्पष्ट हो जायेगी। कालिदास के काव्य में कल्पना कम, वास्तविकता अधिक है। इसके विपरीत पंत के 'बादल' में आदि से लेकर अंत तक बादल के विविध रूपों की कल्पना की गई है और फिर उन रूपों को मूर्त करने के लिए अद्भूत अप्रस्तुतों की योजना की गई है।"

'रूप विन्यास' अध्याय में नामवरसिंह का निर्णय है कि 'द्विवेदी-युग की तुलना में छायावादी कविता का रूपविन्यास इतना भिन्न और भव्य था कि अधिकांश पाठकों की आँखें चौंधिया उठी।' विस्तारपूर्वक चर्चा करते हुए उन्होंने बताया कि द्विवेदीयुगीन कविता आर्यसमाज की सौंदर्यभावना से प्रेरित होने के कारण आर्यसमाज के उपदेशकों की तरह अपने वेश- विन्यास में एकदम सादी थी। तथ्य के सीधे कथन का आग्रह अधिक था। न कहीं उपमा, न रूपक। व्यर्थ का बतबढ़ाव नहीं। जो बात है, ज्यों की त्यों रख दी गई। जैसी रूचि वैसा रूप। तापस भाव, तापस रूप। ''सैद्धांतिक तौर पर तो स्वयं उपमा और रूपक अंलकार अपने आप में ही तुलना है। यहाँ नामवर सिंह ने द्विवेदीयुग की सादी कविता के सादेपन का व्यावहारिक एवं तुलनात्मक कारण सहित विवेचन किया है।''

इसी तरह उन्होंने छायावादी काव्य पर रीतिकालीन अलंकारप्रियता के प्रभाव को नकारते हुए लिखा है - "परन्तु यह अलंकार प्रियता, यह रूप-सज्जा रीतिवादी कविता से काफी भिन्न है। रीतिकाल और छायावाद की कविता के रूप-विन्यास में वही अंतर है, जो दोनों युगों की नारियों अथवा पुरूषों के रूप-विन्यास में अंतर है। 'रूप-विन्यास' अध्याय में तो नामवरसिंह ने अंलकारों की परंपरा और छायावादी काव्य में मौलिक उपमानों के उपयोग पर इतना अधिक अंतर्निहित तुंलनात्मक विवेचन किया है कि छायावादी काव्य की नूतन उपमाओं की मर्मस्पर्शी सार्थकता सहज बोधगम्य हो जाए।

वे मानते है कि प्राचीनकाव्य की रूढ़ उपमाओं की तुलना में छायावाद नें अपना ध्यान प्रभाव-साम्य पर विशेष रूप से केंद्रित किया; जबकि पुराने कवि आकार-साम्य की ओर अधिक दौड़ते थे। जैसे रीतिवादी कवि बादल के लिए आकार-साम्य पर 'हाथी' की उपमा देते थे; लेकिन जब पंत ने उसे 'धीरे-धीरे उठ संशय - सा' कहा तो उनका ध्यान बादल के धीरे-धीरे उठने वाले धर्म की ओर गया। प्रेयसी को 'चंद्रिका की झंकार'; 'तारिकाओं की तान' वगैरह कहना इसी प्रभाव-साम्य का परिणाम है।

कवि निराला ने 'तुलसीदास' में लिखा है -
वह आज हो गयी दूर तान
इसलिए मधुर वह और गान ।।

नामवरसिंह ने इसमें प्रभाव-साम्य की ओर संकेत करते हुए तुलनात्मक शैली में व्याख्या की - "रत्नावली दूर चले जाने पर निराला के 'तुलसीदास' को और भी

मधुर लगने लगी । जिस तरह दूर की तान मीठी लगती है, उसी तरह प्रिया भी दूर जाकर मधुरतर प्रतीत होती है।'' मूल कविता में 'और' तथा नामवरसिंह की आलोचना में 'मधुरतर' शब्द दोंनो की तुलनात्मक प्रभाव प्रदान करते है। इसी प्रकार अन्य उदाहरणों में भी नामवरसिंह ने छायावादी काव्यों के रूप विन्यास (अंलकार–पक्ष) की विवेचना करते समय मूल रचना में प्रयुक्त तुलना को खोजते हुए अपनी ओर से व्यावहारिक तुलनात्मक आलोचना लिखी है।

'पद–विन्यास' अध्याय में नामवरसिंह ने लिखा है – स्वशब्द–वाच्यत्व से काव्य सौदंर्य नहीं बढ़ता। तात्पर्य यह है कि संस्कृत के गुंजायमान शब्दों का प्रयोग करके भी द्विवेदीयुग के कवि भाषा में वह मोहकता न ला सके, जो छायावाद के कवियों ने ला दी।

भाषा शब्दों की संख्या से धनी नहीं होती, धनी होती है उनकी भाव व्यंजकता से। द्विवेदीयुग की कविता की तुलना में छायावाद की समृद्धि का रहस्य यही है। स्पष्ट है कि नामवरसिंह ने छायावाद ग्रन्थ में विभिन्न स्थानों पर प्रसंगानुकूल ढंग से स्पष्टरूपेण 'तुलना' शब्द का उपयोग भी किया है।

जब हम नामवरसिंह की एक ही कृति 'छायावाद' में अलग–अलग अध्यायों में इस प्रकार प्रत्यक्ष अथवा परोक्षरूपेण तुलनात्मक आलोचना के प्रतिनिधि उदाहरणों पर विचार करते हैं तो कहना ही चाहिए कि उन्होंने मूलत केवल तुलनात्मक आलोचना पद्धति को तो आधार नहीं बनाया है तथापि 'छायावाद' सहित उनके समग्र आलोचना–कर्म में यत्र–तत्र सर्वत्र नौसर्गिक रूप से तुलनात्मक आलोचना पद्धति के आदर्श प्रतिमान झलकते है।

वैसे तो वे मार्क्सवादी या प्रगतिवादी समालोचक के रूप में ही सर्वाधिक प्रसिद्ध है तथापि तुलनात्मक आलोचना पद्धति के अनूठे प्रयोंगों की दृष्टि से भी उनका अपना ही वैशिष्ट्य है। उनका तुलनात्मक दृष्टिकोण किसी व्यक्ति विशेष की प्रति नही, अपितु समग्र साहित्य और सम्पूर्ण जीवन–जगत के प्रति अपनी व्यापक गहराई के कारण ही और अधिक विस्तृत शोध की माँग रखता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 *डॉ. विवेकशंकर – हिन्दी साहित्य, राज.हि.ग्रं.अ. जयपुर द्वि.सं. 2016, पृ. 34*

2 *मिश्रबंधु – हिन्दी नवरत्न 1910ई. संशोधित संख्या 1975, भूमिका पृ. 20*

3 *तिपरी डॉ रामचद्रं – हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी अष्टम संस्क 2012 पृ.सं. 103*

4 *डॉ. विवेकशंकर – गद्य–सहित्य, राज.हि.ग्रं.अ. जयपुर, प्रथम संत्र 2017, पृ.सं. 561*

5 *नामवरसिंह – छायावाद राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रचंम संख्या 1990, पृ. 38*

6 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 40*

7 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 42*

8 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 43*

9 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 53–54*

10 *नामवरसिंह – इतिहास और आलोचना संस्क 1962, पृ.सं. 22*

11 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 60*

12 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 61*

13 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 65*

14 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 74*

15 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 72*

16 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 85*

17 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 86–87*

18 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 90*

19 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 91–92*

20 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 92*

21 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 97*

22 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 97*

23 *नामवरसिंह – छायावाद पृ.सं. 108–109*

नृत्य सम्मोहिनी बूंदी रियासत

विभा श्रृंगी
शोद्यार्थी, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

24 जून, 1241 को जन्मा बूंदी का हाड़ा राज्य अपना आर्थिक विकास अधिक नहीं कर पाया, किन्तु इसे सांस्कृतिक राज्य बनाने का श्रेय यहाँ की सार्वजनिक कला प्रियता व नर्तकियों के कलानुराग के साथ भौगोलिक विशेषताओं ने भी अर्जित किया। यहाँ राज्याश्रेय मे लोक नृत्यों की प्रस्तुति में संलग्न 20 वीं शताब्दी की तीन नृत्यागंनाओ का कला परिचय इस शोध पत्र का प्रमुख उद्धेश्य है। परम्परागत उत्सवों उदाहरणार्थः–कजली तीज, डोल ग्यारस व गणगौर इत्यादि पर नृत्य प्रस्तुति सांस्कृतिक तत्व बन गई थी । नन्हीं बाई, गणेश बाई, केसर बाई, जैसी प्रख्यात नृत्यागंनाएं जैतसागर तालाब मे नौकाओ में अथवा बून्दी नगर में रानी जी की बावडी के निकट अथवा फूलसागर पैलेस में बहुमूल्य वेशभूषा में नृत्य प्रस्तुत करती थी। संगीतमय शास्त्रीय गायन शैली में लोकगीतों को भी उन्होनें जनप्रिय बनाया। अभिजात्य वर्ग इन नृत्यागंनाओ को निमंत्रित करना व उनकी सुरक्षा करना सांस्कृतिक मानदण्ड बना रखा था। सौंदर्य, अंग सौष्ठव एवं नृत्यकला में विशारद इन नर्तकियों ने बून्दी घराने के लोक नृत्य की शैली को जन्म दिया था। यहीं नहीं धर्मनिरपेक्ष जाति निरपेक्ष आंचलिक संस्कृति को सूत्रबद्ध करके उमंग व आल्हाद के स्त्रोत के रूप मे बून्दी के इतिहास मे इनका नाम महत्वपूर्ण है। राजकीय विभाग गुणीजन खाना एवं पुन्यार्थ विभाग इनके प्रमाणिकरण के अभिलेखों के स्त्रोत है।

संकेताक्षर : *राज्याश्रेय, अभिजात्य, सौष्ठव, विशारद, आंचलिक, आल्हाद।*

भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण से सिद्ध हैं कि मध्यपाषाण युगीन शैल चित्रों में भी आदि मानव नृत्य कला में रूचि लेता था। भरतमुनी के नाट्य शास्त्रम् व पूर्ववर्ती वैदिक साहित्य में नृत्य कला को कला विशारदो विधा स्वीकार किया गया था। राजस्थान में मध्ययुगीन रियासतों में शास्त्रीय नृत्य विकसित हुए, कत्थक का जयपुर घराना ही नहीं लोक नृत्यों व अपरम्परागत नृत्यों को भी विभिन्न केन्द्रों पर विकसित किया गया । प्रस्तुत शोध पत्र बूंदी राज्य में 20 शताब्दी ईस्वी के काल में राजकीय संरक्षण व लोक लालित्य के प्रकाश में नृत्य कला को सार्वजनिक जीवन से जोड़ने वाली तीन प्रख्यात राजनर्तकियों की कला मर्मज्ञता का विश्लेषण करना हैं।

यद्यपि 24 जून 1241[1] को जन्मा बूंदी का हाडा राज्य अपना आर्थिक विकास अधिक नहीं कर पाया, किन्तु इसे सांस्कृतिक राज्य बनाने का श्रेय यहाँ की सार्वजनिक कला प्रियता व नर्तकियों के कलानुराग के साथ भौगोलिक विशेषताओ ने भी अर्जित किया। फिर भी कला प्रेमी बूंदी नरेशों उदाहरण स्वरूप रावराजा रत्न सिंह, शत्रु शल्य सिंह, भावसिंह व उम्मेदसिंह इत्यादि के सौजन्य से कला की आत्मा सँवरती रही है। 20 शताब्दी के पूर्वार्द्ध में रसज्ञता के आग्रह से ओत–प्रोत नरेशो क्रमशः रघुवीर सिंह, ईश्वरी सिंह व बहादुर सिंह के संरक्षण ने नृत्य व नृत्यांगना को बूंदी का सांस्कृतिक तत्व बना दिया था। महाराव राजा ईश्वरी की विरासत को उनके उतराधिकारी बहादुर सिंह द्वारा प्रदत लालित्य वर्तमान तक चर्चित हैं। अरावली पर्वत की अंतिम श्रृंखला के मध्य बसा बूंदी नगर इटली के नेपल्स के सदृश्य पहाड़ी व हरियाली की गोद में बसा था। वर्षा की बूँदे पहाड़ों के अगणित वृक्षों की पतियों व तत्कालीन टिन की छतों पर लयबद्ध संगीत उत्पन करती थी। पहाड़ों से बरसाते नाले स्वाभाविक की विशेषता रूप से जनचेतना में प्रफुल्लता व संगीतमय वातावरण का संचार करते थे। लोकगीतों व लोक वाद्यों की धुनों पर थिरकना सार्वजनिक उत्सवों[2] की

विशेषताऐं थी, यही नहीं गणगौर, कजली तीज व डोल ग्यारस के उत्सवों में राजनर्तकियों की नृत्य प्रस्तुति एक बहु प्रशिक्षित लालित्य होता था। इन नृत्यांगनाओं को अभिजात्य वर्ग के सदस्य प्रायः मूल्यवान आभूषण, स्वर्णमुद्रा अथवा अन्य मूल्यवान भेंट प्रदान करते थे, किन्तु इनका किसी भी व्यक्ति विशेष से व्यक्तिगत सम्पर्क करना मर्यादा व परम्परा के विरुद्ध था।

सांस्कृतिक धरोहर

संध्या के झुरमुट में जैतसागर तालाब में बहती वायु के साथ इत्र, पान, पुष्प, धुपबती एवं राजसी साजिंदों की शास्त्रीय संगीत–लहरी मशालो की आभा पर थिरकती लहरों के साथ सम्पूर्ण वातावरण को एक छंद, एक लय में बाँधती सी लगती थी, इसी के साथ बूंदी नरेश की सजी–धजी नौका से सटकर पानी पर फिसलती हुई नौका पर आसीन पुष्प लताओं सी कमनीय व लवंग–लता जैसे सौंदर्य युक्त तन्वंगी नृत्यांगनाओं का कटि–विलास युक्त नृत्य बूंदी राज्य की संस्कृति को आभासित करता था। गोधूलि बेला का चयन सूर्य की क्रमशः क्षीम होती जा रही लाल किरणों से धीरे–धीरे तालाब में सिकुड़ते जा रहे गुलाबी कमल व सिंघाड़े सी बेलों के मध्य मंथर गति से संचालित नौकाओं में चाँदनी चर्चित मुखाकृति वाले बूंदी नरेश के नैत्रों में संपूर्ण वातावरण का स्पंदन घोंसलों में लौटती चिड़ियों के चहचाहट की भाँति थिरकता रहता था। यह थी मुगल बादशाहों के नृत्य में अभिरुचि इटालियन इतिहासकार मनुचि[3] द्वारा किये गए वर्णन के समानांतर रजवाड़ी काल में बूंदी रियासत में सतत् प्रचलित नृत्य प्रेम और पिछली सदी के पूर्वार्द्ध में इसकी सूतधार बनी तीन विलक्षण नायिकाएं क्रमशः नन्हीं बाई, गणेश भाई, केसरबाई।

पतली नदियों, सघन वनों, अरावली की पर्वत उपत्यकाओं, पहाड़ी नालों, वन्य पशु पक्षियों एवं सर्पिले सकरे दर्रों व पगडंडियों से सजा बूंदी राज्य प्राकृतिक संतुलन बाग शौर्य गाथाओं की प्रचुरता का साक्षी सदैव से रहा है, इसी भौगोलिक संस्कृति को यह आदि मानव द्वारा निर्मित शैल चित्रों[4] मध्ययुगीन शिल्प कला एवं सार बाग तक्षण कला के नमूनों में भी प्रतिफलित किया गया। इसी का प्रभाव यहॉ लोक गायन, लोक संगीत, लोक साहित्य व लोक नृत्य पर भी पड़ा। सात्विक भोजन व प्रकृति प्रेमी जीवन में पली–बढ़ी किशोरियाँ कालांतर में शास्त्रीय संगीत का अभ्यास करके लोक नृत्य को बूंदी की राजसी परंपराओं को संबल प्रदान करने वाली धरोहर सिद्ध होती रही है। बूंदी की नृत्य परंपरा में जयपुर घराने से भिन्न कत्थक नृत्य क्रमबद्ध अंग संचालन नहीं था, किंतु आदिवासियों अथवा नर्तकों वाली अरुचिकर चेष्टाओं का भी अभाव था।वस्तुतया भाव नृत्य यहाँ की प्रमुख विधा थी, किसी भी परंपरागत गीत के भावो को अंग चेष्टाओ, दृष्टिविलास व संगीत की लय पर थिरकने के द्वारा अभिव्यक्ति देना बूंदी नृत्य शैली का आधार था, यद्यपि प्रख्यात नृत्यांगनाओं से भिन्न सार्वजानिक जीवन में भी नृत्य समारोह दृष्टि गोचर होते थे, किन्तु उनमें लयबद्धता, प्रवीणता, वेशभूषा का विन्यास एवं नृत्यांगनाओ के चयन आदि का अभाव था। राजसी नृत्यांगनाए अपने त्वरित नृत्य, शारीरिक सौन्दर्य एवं आत्मभिमानपूर्ण मुख मुद्रा के कारण जन सामान्य से पूर्णतया भिन्न वर्ग की मणि जाती थी। गुप्त साम्राज्य के काल में प्रौढा नृत्यांगनाऐं नव –नख शिख सौंदर्य से समृद्ध नृत्यांगना को जिस प्रकार प्रशिक्षित करती थी, वैसे ही बूंदी राज्य में भी परंपरानुसार वंशानुगत नृत्यांगनाऐं कला प्रस्तुति देती रही। मणिकंचन योग ही था कि –रमणीक यौवन व कला की सुरुचि संपन्न ये युवतियां चारित्रिक सौंदर्य, भाषा लालित्य, भंगिमा सौंदर्य, वाणी विलास एवं लाक्षणिक वेशभूषा तथा आभूषणों के लिए भी अत्यधिक आकर्षण का केंद्र थी।

बून्दी नृत्य शैली की विशेषता

गुणीजन खाना[5] नामक राजसी विभाग ऐसी कलाकारों के निर्वाह की व्यवस्था करता था, इनके जीवन शैली की सुरक्षा का दायित्व राज्य प्रशासन अपने हाथों में ग्रहण करता था। इसी दौरान अंग्रेजों का प्रभाव बढ़ने से बूंदी इलेक्ट्रिसिटी सप्लाई कंपनी इंपीरियल पोस्टल सर्विसेज[6] और तार घर की बूंदी में स्थापना हुई। सूचना व संचार के माध्यम बढे। इससे इन तीनों नृत्य विशारदों की ख्याति भी बढ़ने लगी, बूंदी के राव –राजा शत्रु शल्य सिंह द्वारा निर्मित चौहान दरवाजे के निकट इनका आवाज था, जहां से इनकी गायन लहरी सुनकर संपूर्ण निकटवर्ती क्षेत्रों में निस्तब्धता छा जाती थी। मात्र मंदिर के आरती के घंटे ही शांति को भंग कर पाते थे। राजसी उत्सवों व धार्मिक त्यौहारों के समय जनसमुदाय सामंतों की सवारियों के साथ इनकी छवि के दर्शन के लिए उमड़ पड़ता था। सोलह श्रृंगारों से गुलाबी आभा मंडल से प्रदीप्त कपौलो सुडौल चिबुक व आकर्षक नथ से सुशोभित नासिका व कमल नैत्रों पर धनुषाकार श्यामवर्णी भौंहे, किसी देवधर्नुदत की प्रत्यंचा

पर चढ़े बाण के सदृश्यों रोमांचित कर देते थे। सजी–धजी यह रमणियाँ विशाल ललाट पर बोर, कर्णफूल व ग्रीवा में हीरक जड़ित वैजयंती माला, भुजबन्ध क्षीण–कटी में झूलती करधनी पायल आदि उनेक कमनीय सौंदर्य में अभिवृद्धि करते थे।उरवल्ली पर थिरकती मणि मेखला व ग्रीवा में सहमते हुए लिपटी हुई आड नामक स्वर्ण आभूषण की शोभा दर्शनार्थियों की लिप्सा में वृद्धि करती थी। हरीतिमा की आभा लिये फहरता हुआ लहंगा अपने ऊपर झूलती इसी रंग की कुर्ती व अतीव सावधानीपूर्वक व्यक्त असावधानी से लहराते हुए पचरंगी दुपट्टे हृदय के उन्माद में लालित्य भर देती थी। कजरारी आंखों के कटाक्ष पुष्पगुच्छ का दर्शन करवाने में सिद्धहस्त लंबी पतली नाजुक अंगुलियों की मुद्राएं रियासती दौर में अत्यधिक भाव बोर करती हुई जनप्रिय बनी हुई थी। नृत्यांगना के चंचल भाव सौजन्य एक राय होकर कभी–कभी कठपुतली के सामान एक रास्ता का सम्मोहन बिखेर देते थे इसकी पृष्ठभूमि में कर्णप्रिय परंपरागत वाद्य की संगीत लहरिया एवं ताल छंद में गायकों का समय सुमधुर गायन संपूर्ण दृश्य को मनमोहक बना देता था इन प्रस्तुतियों की गरिमा बढ़ाते बूंदी नरेश और सामंतों एवं दूसरी रियासतों की राशि अतिथि के नजर आने ज्ञातव्य है कि इन पर न्यौछावर करने की अनुमति जनसाधारण कौन थी परंपरा के रूप में प्रदान करते थे जिनका विवरण अन्यत्र नहीं मिलता इनके नाम अनुसार हैं डांग मटिटा (हीड अथवा एक लकड़ी से जुड़े दीपक में जलते अंगार), सौसर (फूल पत्तियों की कलंगी व मौज) पुष्पमाला।

राजनर्तकियों का सम्मान गुणीजन खाने के प्रबंध अनुसार इस प्रकार होता था कि उनकी उत्सव संबंधी वेशभूषा मखमली रेशम, मलमल कलाबत्तू व सूती वस्त्र की आवश्यकतानुसार प्रयोग से राजकीय व्यापार निर्मित की जाती थी। एक प्रख्यात दर्जी माधव को इस कार्य हेतु वेतन प्राप्त होता था इन वीरांगनाओं को अपना भोजन विशिष्ट पदार्थो तक सीमित रखना अनिवार्य होता था राजकीय उत्सवों के अतिरिक्त इन्हें किसी भी निजी उत्सव अथवा विवाह उत्सव में अपनी प्रस्तुति देना अथवा भोजन ग्रहण करना निषिध था । परिणामतया, मर्यादाओं सांस्कृतिक गरिमा व बाह्य आकर्षण के अतिरिक्त इन के आंतरिक सौंदर्य के प्रभामंडल में स्पष्टतया आंका जाता था। इसी कारण सार्वजनिक सम्मान प्रदान किया जाता था, बूंदी महाराणा जय श्री रघुवीर सिंह जी 1827 ईश्वर सिंह जी 1927 से 1945 श्री बहादुर सिंह जी 1945 से 1948 में कला व संस्कृति को इस धरोहर को संरक्षण व अभिरुचि से संजोकर समाज की गतिशीलता में योग दिया, वहीं दूसरी ओर आलोच्य कला पूर्वजों ने अपने सांस्कृतिक चेतना व मर्यादा परखता से संबंध करके अपना वर्तमान भविष्य को रुचि पूर्ण बना दिया।

सारतया राजस्थान के दक्षिण पूर्व की सांस्कृतिक नगरी बूंदी में जहॉ वास्तु कला व चित्रकला के नयनाभिराम आयाम प्रस्तुत हुए, शौर्य गाथाओ व प्राकृतिक सुरम्यता ने जिसे वीरता व लालित्य के तेवर से संजोया वही नृत्य कला व इसके माध्यम से नारी सौंदर्य स्पंदन ने समाज को सदैव हर्षितत्व व तरंगितत्व सामाजिक व्यवस्था का केंद्र भी बना दिया है।

निष्कर्ष

राजस्थान के दक्षिणी पूर्व मे स्थित बून्दी राज्य अपनी प्राकृतिक सम्पदा व संगीत तथा नृत्य की शताब्दी में नृत्य कला को राजकीय संरक्षण मे चरमोत्कर्ष पर पहुँचाने लगाता था। तीन प्रख्यात लवंगलता नर्तकियों के नृत्य विलास मे पर्वत तलहटी मे बसे बून्दी राज्य की संस्कृति को अत्यधिक मनोरमता प्रदान की थी। परिणामतया स्थानीय संस्कृति में इनका नृत्य व संस्कृति एक दूसरे में परिलक्षित होने लगी। नन्हीं बाई, केसर बाई, गणेश बाई इत्यादि नर्तकियो की जीवन शैली विलासिता में पवित्रता एवं जन आर्कषण के मध्य व स्वयं के प्रति आर्कषण के साथ सांस्कृतिक गतिशीलता को सहयोग देती रही। इनके गीतों मे आध्यात्म व श्रृंगार की अभिव्यक्ति रियासतो की समाप्ति के उपरांत भी जन श्रुतियों का केन्द्र है। स्थानीय उत्सवों ने इन नर्तकियो के समायोजन से मनोरंजन को राज्याश्रेय के परिधि मे अनुशासित बनाने का नवीन प्रकरण बून्दी मे प्रारम्भ किया गया था।

संदर्भ संकेत

1. *सक्सेना डॉ अरविंद कुमार – बूंदी राज्य का इतिहास 1818 से 1948 पृष्ठ 5*
2. *वही पृष्ठ 252*
3. *मनुचि स्टोरिया– डू– मोगोर पृष्ठ 157 इलियट एंड डॉउसन् हिस्ट्री ऑफ इंडिया एंड टोल्ड बाय इट्स ओन हिस्टोरियंस वॉल्यूम –7 वर्ष 33*
4. *प्रधान डॉ नलिनी– ए सर्वे ऑफ द रिमेंस ऑफ प्री हिस्टोरिक बूंदी जॉन पृष्ठ 38 (अप्रकाशित शोध प्रबंध)*

5. हाडा डॉ सोन कँवर –बूंदी राज्य का संक्षिप्त इतिहास–कॉर्पोरेशन पब्लिकेशंस संस्करण– 2013 आईएसबीएन 978–93–8314703–08
   - 'बूंदी राज्य–साहित्य व धार्मिक स्थिति पर एक विहंगम दृष्टि (साहित्य चंद्रिका प्रकाशन) आईएसबीएन 978–81–7932–045–7
   - बूंदी राज्य की कला एवं संस्कृति (ग्रंथ विकास)978–95–80405–44 –5
   - चरणों की स्वतंत्रता लिप्सा हाड़ौती अंचल (साहित्यकार प्रकाशन) 978–93–83468–00–3
   - 'बूंदी राज्य के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में कला व संस्कृति (साहित्यगार) 978–81–7711–409–6
6. राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर बस्ता नंबर 15 फाइल नंबर 28 मध्यवर्ती शाखा बूंदी रियासत
   - सक्सेना डॉ अरविंद कुमार– बूंदी राज्य का इतिहास (1818 से 1948 तक) पृष्ठ 256
7. राष्ट्रीय अभिलेखागार दिल्ली भारत सरकार फॉरेन एंड पोलिटिकल डिपार्टमेंट इंटरनल– बी जून 1918 ईस्वी एन.ओ.एम. 32/27
   - अभिलेखागार बीकानेर बस्ता नंबर 15 फाइल नंबर 252 महकमा खास बूंदी रिकॉर्ड
   - द एनवल रिपोर्ट ऑन द एड मिनिस्ट्रेशन ऑफ बूंदी स्टेट 1935– 36 ईस्वी पृष्ठ 30
   - वही 1945–46 ईस्वी पृष्ठ 80
   - सक्सेना डॉ अरविंद कुमार– बून्दी राज्य का इतिहास (1818से1948 तक) पृष्ठ 205
8. ठेकेदार श्री राम किशन जी की स्मृतियाँ

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सक्सेना, डॉ अरविंद कुमार – बूंदी राज्य का इतिहास (1882–1948) ईस्वी प्रकाशन हिंदी साहित्यगार जोधपुर 1991प्रथम संस्करण
2. हाड़ा, डॉ सोन कँवर – बूंदी राज्य की संस्कृति का शास्त्रीय अध्ययन (वोल्यूम 5 प्रकाशन साहित्यगार जयपुर 2013)
3. सिंह, डॉ चंद्रमणि सिंह – बूंदी जिले का सांस्कृतिक सर्वेक्षण
4. शिव सागर, डॉ मंजू श्री शिरसागर – राजस्थान की संगीत परंपरा
5. झा, डॉ माला – बूंदी की मूर्तिकला की विवेचना (अप्रकाशित)
6. गर्ग, डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग – संगीत मासिक अंक
7. राठौर, डॉ. अमर सिंह – राजस्थान सूजस जयपुर
8. सत्यार्थी– डॉ. रमेश – बूंदी चित्रशैली
9. शर्मा, डॉ पितांबर – बूंदी के स्मारकों का इतिहास
10. बर्डे , डॉ कौमुदी – राजस्थान के दरबारी संगीत
11. देवीलाल सांभर – राजस्थान लोक संगीत
12. द गजेटर ऑफ बूंदी डिस्ट्रिक्ट 1964 गवर्मेंट पब्लिश
13. प्रधान, डॉ. नलिनी – सर्वे ऑफ द रिमेंस ऑफ स्टोरीक बूंदी जॉन (अनपब्लिश्ड)
14. नीरज डॉ. जयसिंह – राजस्थान की सांस्कृतिक परंपरा
15. शर्मा, डॉ. गोपीनाथ – मध्यकालीन राजस्थान का सामाजिक इतिहास
16. पंडित गंगा सहाय प्रबंध सार

जसनाथी सम्प्रदाय : परिचयात्मक विवेचन

श्री भेराराम
सहायक आचार्य, श्री परसराम मदेरणा राजकीय महाविद्यालय, भोपालगढ़

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

जब-जब धर्म की हानि होती है तब-तब अधर्म के विनाश एवं धर्म के पुनरुत्थान के लिए ईश्वर अवतार लेते हैं, इसी पुनीत पुरातन परम्परा के प्रकाश पुंज श्रीदेव जसनाथ जी का अवतार सनातन धर्म के संकटग्रस्त काल में हुआ। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन के दौरान सम्पूर्ण भारत में एक नई लहर चली तथा निर्गुण संत सम्प्रदायों का प्रादुर्भाव हुआ। राजस्थान में भी विश्नोई सम्प्रदाय, रामस्नेही सम्प्रदाय व जसनाथी सम्प्रदाय की स्थापना हुई। श्रीदेव जसनाथजी द्वारा 36 धर्म-नियमों के पालन की आचार संहिता लागू कर जसनाथी सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया। सम्प्रदाय का विश्व प्रसिद्ध अग्नि नृत्य अनूठा लोकनृत्य है। सम्प्रदाय के अनुयायी जसनाथी कहलाते हैं जो मुख्यतः राजस्थान, हरियाणा राज्य में निवास करते हैं। जसनाथी सम्प्रदाय ने तत्कालीन समाज व धर्म की विनाशोन्मुख अवस्था से विकासोन्मुख अवस्था की ओर अग्रसर करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। श्रीदेव ने कर्मवाद पर जोर देते हुए समाज में व्याप्त कुरीतियों, बुराइयों, आडम्बरों का पूरजोर विरोध किया।

संकेताक्षर : *निर्गुण, संत, 36 धर्म नियमावली, जसनाथाणी शैली, अग्नि नृत्य, चळू, साहित्य, जाळ वृक्ष, सिद्ध, समाजोद्धार, यशोनाथ।*

मध्यकाल में भक्तिभाव से ओत प्रोत काव्य रचनाएँ संतों की महत्त्वपूर्ण परम्परा रही हैं। अनेक धर्मों व सम्प्रदायों से संबद्ध संत यहाँ लोगों को अपनी भावभीनी काव्य रचनाओं से ईश्वर के प्रति आस्था बढ़ाने का महत्त कार्य करते रहे हैं। राजस्थान में संत साहित्य की धारा दो प्रमुख रूपों में प्रचलित हैं। एक सगुण भक्ति काव्य धारा और दूसरी निर्गुण भक्ति काव्य धारा। निर्गुण भक्ति काव्य धारा के प्रमुख संतों में श्रीदेव जसनाथजी, श्रीदेव जाम्भोजी, दादूजी, चरणदासजी, रामस्नेही सम्प्रदाय के संत आदि आते है।

जसनाथी सम्प्रदाय के प्रवर्तक श्रीदेव जसनाथ जी का जन्म 1482 ई. में कतरियासर, बीकानेर (राज.) में हुआ।[1] इस संबंध में एक उक्ति प्रसिद्ध है –

"संवत् पन्द्रासौ वरस गुणचाळो, कातिक मास नै पख उजाळो।
एकादशी नै छनिछर वारो, उण दिन धरती में प्रगट्यो ओतारो।।[2]

श्रीदेव जसनाथ, हमीरजी जाणी व रूपादे के पोष्य पुत्र थे। इन्होंने गोरखमालिया, बीकानेर में तपस्या की थी, यहीं पर इनको ज्ञान प्राप्त हुआ। इस संबंध में झूलराकार जियोजी सांखला लिखते है –

"मार पलाथी तपस्या बैठा, जाप जप्या वां ओंकार।"[3]

चौबीस वर्ष की आयु (1506 ई.) में श्रीदेव जसनाथजी ने आश्विन शुक्ला सप्तमी को कतरियासर में जीवित समाधि ली थी। इसी संबंध में सिद्ध रामनाथजी ने 'यशोनाथ पुराण' में लिखा है –

संवत पन्द्रैसै तैसठ आई-मास आसोज सात्यूं सुद पाई
शुक्रवार वरत्यो दिन जाई-सिद्ध जसनाथ समाध लगाई।[4]

जसनाथजी के द्वारा प्रतिपादित 36 धर्म नियमों का पालन करने वाले अनुयायी जो गले में काला धागा (डोरा) धारण करते हैं, वे जसनाथी कहे जाते हैं। अधिकांश अनुयायी जाट जाति के हैं, जो बीकानेर, हुनमानगढ़, चूरू, नागौर, जोधपुर, बाड़मेर, श्रीगंगानगर जिलों में रहते हैं। जसनाथजी के उपदेश सिंभूधड़ा, कोड़ा, गोरखछन्दो, सबद, झाड़ा,

मंत्रजाप, 36 धर्म नियमावली आदि ग्रंथों में संगृहीत हैं।

जसनाथ जी ने निर्गुण निराकर ब्रह्मा की उपासना पर बल देकर पशु हिंसा का विरोध, जीव व ब्रह्मा की एकता तथा संसार की नश्वरता पर जोर दिया। इनका उद्देश्य व्यक्ति व समाज के आचरण को शुद्ध व मर्यादित, पवित्र करना था। जसनाथी सम्प्रदाय के लोग जाल वृक्ष व मोर पंख को पवित्र मानते हैं। जाल वृक्ष की प्रशंसा में कहा गया है –

धिन बाड़ी धिन देहरा, धिन आसण धिन जाल।
धिन'स दिहाड़ो धरतरी, ज्हाँ बैठ किरतार।[5]

अर्थात् 'जाळ जठै जसनाथ' की कहावत सम्पुष्ट होती है। सम्प्रदाय में भगवा वस्त्र धारण करने वाले जसनाथी अनुयायी सिद्ध कहलाते हैं।

जसनाथजी के प्रमुख शिष्य हरोजी, हँसोजी, रुस्तमजी आदि थे। तत्कालीन बादशाह सिकन्दर लोदी ने जसनाथ जी को जमीन भेंट की थी।[6] श्रीदेव जसनाथ जी राजस्थान के पुरातन एवं अग्रणी महापुरुष हुए है। इन्होंने धोरा धरती मरूधरा के भूले भटके मानव समाज को धर्म की पुनः प्रतिष्ठापना कर एक ऐसा दिशा निर्देश दिया जो परिणाम स्वरूप आज हमारे सामने जसनाथी सम्प्रदाय के रूप में प्रचलित है। जिनके प्रभाव से आज भी वे लोग अपनी आचरण शुद्धि में विशिष्टता रखते हैं।

जसनाथी सम्प्रदाय का साहित्य और इतिहास मौखिक परम्परा में ही ज्यादा प्रचलित रहा है लेकिन परवर्ती सिद्ध आचार्यों ने लिपिबद्ध एवं संगृहीत किया है। इस संबंध में प्रसिद्ध है –

विद्या तो बापरती भली, छलिया भला निवाण।
सुरनर तो कथता भला, सुणता भला सुजाण।।[7]

अर्थात् विद्या का प्रचार–प्रसार करने पर ज्ञान की श्रीवृद्धि होती है, देवता व मनुष्य बोलते हुए अच्छे लगते है, ज्ञानी सुणते हुए शोभायमान होते हैं।

सिद्ध श्रीदेव जसनाथ जी ने अपने द्वारा प्रवर्तित सम्प्रदाय के लिए एक विशिष्ट अनुशासन की स्थापना की। उन्होंने मानव जीवन को समुन्नत बनाने के लिए विपुल मात्रा में आध्यात्मिक सद्साहित्य का सृजन किया तथा उनकी उत्तराधिकारी शिष्य परम्परा में भी शांत रस से सराबार साहित्य का सृजन हुआ है, जिसे समग्र रूप में 'जसनाथी साहित्य' कहा जाता है। यही नहीं जसनाथी सम्प्रदाय ने राजस्थानी संस्कृति को उन्नतिशील बनाने के लिए अपने सांस्कृतिक पक्ष को सम्पुष्टित किया जो अपनी मौलिकता में सम्प्रदाय का गायन, वादन और इसका अग्नि नृत्य अपनी सानी नहीं रखता।

राजस्थान और राजस्थान से बाहर भी लाखों लोग जसनाथी सम्प्रदाय के मतानुयायी है। जो वैदिक सनातन धर्म के अन्तर्गत अपनी विशिष्ट जीवन पद्धति को अपनाये हुए हैं। श्रीदेव जसनाथजी राजस्थान में आदि सिद्ध तथा प्रथम श्रेणी के महापुरुष माने गये है। संस्कृतज्ञों ने उन्हें 'यशोनाथ' नाम दिया है। जसनाथ जी ने राजस्थानी संस्कृति के उन्नयन में एक मौलिक संगीत शैली जिसे 'जसनाथांणी राग शैली' का नाम दिया है, प्रस्तुत की। जिसका उदाहरण दृष्टव्य है –

ओं विष्णु ध्यायां आव बधै, गोरख ध्यायां रिछ्या।।1।।
ईसर ध्यायां मोख मुगत, चांद सूरज दोय साखी।।2।।
ईसर जन्म ले ले कर्मे जागै, फेर लेवै औतारूं।।1 1।।
ईसर देवांदेव सिधां में साधक, जुग जुग रो ओतारूं।।1 2।।
ईसर लाहे लाह्य खुदाये खदवो, आपो है निरकारूं।।1 5।।
ईसर पीरे पीर दरगाये, दरवेस, नित छाजै निसवारूं।।1 6।।
ईसर उत्तरे उत्तर दिकणे दिखण, पूरवे पूरव पिछम है निरकारूं।25।।
जपो ईसर ध्यावो गोरख, आव उपावण हारूं।।35।।[8]

अर्थात् भगवान विष्णु का स्मरण करने से आयु बढ़ती है तथा गोरखनाथ जी के स्मरण से रक्षा होती है। ईश्वर स्मरण से मोक्ष या मुक्ति प्राप्त होती है। कर्म के अनुसार जन्म की प्राप्ति होती है। ईश्वर भी आवश्यकता पड़ने पर अवतार लेते है। ईश्वर देव, सिद्धों एवं साधकों के रूप में युगों युगों में अवतार लेते है। ईश्वर लाभ रूप प्राप्ति है और खुदा के रूप में बंदगी कराने वाला है, फिर भी वह निराकार है। ईश्वर पीरों में पीर है, दरगाह में दरवेश है, वह निराकार एवं शोभायमान है। ईश्वर ही उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम में निराकार है, अतः ईश्वर का जप करो, गोरख का ध्यान करो क्योंकि वही सबको उत्पन्न करने वाला है।

अग्नि नृत्य

श्रीदेव जसनाथजी ने विश्वप्रसिद्ध अग्नि नृत्य का प्रवर्तन किया। जसनाथी सम्प्रदाय में रात्रि जागरण को प्रमुख धार्मिक अनुष्ठान के रूप में मान्यता है।

स्थानीय भाषा में इसे 'जम्मा' कहा जाता है। जसनाथी सिद्ध युवकों द्वारा प्रज्वलित अंगारों पर अपनी विविध लोक मुद्राओं व भंगिमाओं में नृत्य किया जाता है जिसे 'अग्नि नृत्य' के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है।

रात्रि जागरण व अग्नि नृत्य के दौरान सिद्ध गायक शब्दों का वर्ण अलाप नगाड़े की ध्वनि के साथ करते हैं। इन शब्दों में एक 'सिरलोक' (दोहा छंद) सिंधु राग का उदाहरण प्रस्तुत है –

विद्या विनायक सिंवरिये, पोरस में हणवन्त।
रिध सिध दाता सिंवरिये, गौर तिमीणो कंत।
विद्या बापरती भली, छलिया भला निवाण।
सुरनर तो कथता भला, सुणता भला सुजाण।
नांव पियारो श्याम रो, पिंजर मांहि पिराण।
सिंझया सिंवरण कीजिये, पौ उगन्तै भाण।
गुरु जसवंत नै सिवरता, सिंवरा पालण पीर।
भूखा भोजन सोंपजै, तिसिया पावण नीर।[9]

जसनाथी सम्प्रदाय का अपना एक विशिष्ट अनुशासन है, अपनी एक परम्परा हैं तथा अपनी एक जीवन पद्धति है। नैतिक आचरण प्रवणता इस सम्प्रदाय की विशेषता है। इसमें उत्तम गुणों का समुच्चय तथा सभी विचार सरणियों का समन्वय है। सम्प्रदाय में ऊँच–नीच तथा भेदभाव की संकीर्णता हेतु कोई स्थान नहीं है, किन्तु सदाचार का अनुबंध आवश्यक है। इसमें वेद बाह्य अन्य सम्प्रदायों तथा आचारहीनता को भर्त्सना और वेद विहित शुद्धाचार, धर्मनिष्ठा तथा आस्तिकता की महिमा गाई गई है।

सिद्धाचार्य जसनाथ अपने सम्प्रदाय में भगवान का अवतार माने जाते हैं। श्रद्धालु भक्तों ने इन्हें यादवपति भगवान विष्णु का निष्कलंक अवतार माना है। श्रीदेव अपने गुणकर्मों और अपने क्रियाकलापों में महान् एवं प्रकाशमान थे, लेकिन धोरा धरती की अशिक्षा, जड़ता, मूर्खता और ग्रामीणत्व के भोलेपन में ऐसी महान् आला यहाँ के बांठ–बोझों में एक बड़े भूभाग के लिये ही नहीं अपितु समस्त देश के लिए बहुत अंशों में छिपी की छिपी रह गई।

जसनाथी सम्प्रदाय को साहित्य व शोध के क्षेत्र में बहुत कम वर्णित किया गया है। जसनाथी साहित्य, स्वयं जसनाथ जी के कथन, अनेक कवियों द्वारा भिन्न–भिन्न जीवन घटनाओं का वर्णन, प्रवाद परम्परा अनेकशः रचनाओं खण्ड–खण्ड रूप में परिचय आदि ऐसे सूत्र हैं, जिनके संयोजन, अन्वेषण, आंकलन एवं आलोकन द्वारा सम्पूर्ण परिचय यथातथ्य रूप में संलब्ध हो सकता है, जो श्रवणापेक्ष है।

36 धर्म–नियम

श्रीदेव जसनाथ जी ने सम्प्रदाय के अनुयायियों हेतु 36 धर्म नियमों की आचार संहिता प्रतिपादित की। इनमें नैतिक एवं उच्च आचरण जीवन पद्धति का विधि–विधान है। इन्हीं 36 नियमों वाला जसनाथी सम्प्रदाय एवं समाज विश्व के अन्य सम्प्रदायों एवं समाज से विशिष्ट छवि बनाये हुए है। श्रीदेव ने सरल भाषा शैली में छत्तीस धर्म नियमों के पालन का उपदेश दिया, उससे संबंधित एक 'सबद' प्रस्तुत है –

गुरु शरणै पालण कहै, बंधु सखा गुरु तात।
धर्म छत्तीस विध मम कहो, देव गुरु जसनाथ।।1।।

जो जसनाथी धर्म धरासी,
उत्तम करणी राखो आसी।
जीव रक्षा कर भूख न आइये,
दूध नीर नित छाण रखाइये।।2।।
शील सिनान सांवरी सूरत,
जोत पाठ परमेसर मूरत।
होम जाप अग्नि सुर पूजा,
अन्य देव मानो मत दूजा।।3।।
ऐंठे मुख पर फूंक न दीजो,
निकमी बात काळ मत कीजो।
मुख सूं राम नाम गुण लीजो,
शिवशंकर को ध्यान धरीजो।।4।।
कन्या दान कदे मत लीजो,
व्याज वसेवो दूर करीजो।
गुरु की आशा किसवंत बांटो,
काया लगे नहीं कीड़ो कांटो।।5।।
होको तमाखू पीजे नांही,
लसन भांग दूर हटाई।
साटिये सौदा वर्जित ताई,
बैल बढ़ावन पावे नाहीं।।6।।
मृगा वन में रखत कराई,
घेटा बकरा थाट सवाई।
दया धर्म सदा मन भाई,
घर आयां सतकार सदाई।।7।।
निंद्या कूड़ कुटक नहीं कीजे,
चोरी जारी परहर दीजे।
रजश्वला नारी दूर करीजे,
हाथ उसी का जळ नहीं लीजै।।8।।

का'ला पाणी पीजै नाहीं,
दस दिन सूतक पाळो भाई।
कुल की काट करीजे नाहीं,
श्रीजसनाथ गुरु फरमाई।।9।।
उत्तम केश सदा रख लीजे,
देही भोम समाधि दीजे।।10।।[10]

ये छत्तीस नियम उक्त पदों के अनुरूप निम्नानुसार सूचीबद्ध प्रस्तुत हैं–

1. स्व धर्म का पालन करना।
2. उत्तम कर्म करना।
3. भूख लगने पर भी जीव रक्षा करना, हत्या नहीं करना।
4. दूध, पानी स्वच्छ रखना।
5. नित्य स्नान करना।
6. शील, सदाचार, संयम का पालन करना।
7. ज्योत दीपक से ईश्वर का पूजा पाठ करना।
8. अग्नि पूजा होम जप करना।
9. एक देव के अतिरिक्त पूजा अर्चना नहीं करना।
10. झूठे मुँह अग्नि में फूंक नहीं देना।
11. अनर्थकारी व्यर्थ बात नहीं करना।
12. मुख से राम नाम का गुणगान एवं शिव की उपासना करना।
13. कन्या का दाम (मूल्य) नहीं लेना।
14. ब्याज, प्रति ब्याज से दूर रहना।
15. गुरु के प्रति श्रद्धा भाव से शिक्षादीक्षा लेनी।
16. आय का बीसवां हिस्सा परोपकार में बाँटना।
17. हुक्का, तम्बाकू, लहसुन, भांग का सेवन नहीं करना।
18. साटियों से पशु आदि का आदान–प्रदान नहीं करना।
19. बैल बछियों को बंधिया (खस्सी) या सूई सार नहीं करना।
20. वन्य जीव हरिण आदि पशुओं की रक्षा करना।
21. सदैव मन में दया धर्म रखना।
22. घर आये अतिथियों का सत्कार करना।
23. निंदा कपट नहीं करना।
24. मिथ्या भाषण (कूड़) चुगली नहीं करना।
25. चोरी–जारी को छोड़ देना।
26. रजश्वला महिला से पांच दिन तक दूर रहना।
27. काला पानी (शराब) नहीं पीना।
28. मांस भक्षण नहीं करना।
29. व्यर्थ वाद–विवाद न करना।
30. अध्यात्म विद्या से मोक्ष प्राप्त करना।
31. मस्तक पर उत्तम सुव्यवस्थित केश रखना।
32. जन्म एवं मरण पर 10 दिन का सूतक मानना।
33. कुसंग न करना।
34. कुल की काट (निंदा) न करना।
35. अभक्ष्य (बासी, सड़ा गला) भक्षण नहीं करना।
36. उदक् (पवित्र) भूमि में समाधि लेना।

इन नियमों के पालन हेतु एक उदाहरण दृष्टव्य है –

जो कोई जात हुवै जसनाथी,
उत्तम करणी हालो आछी।
राह चलो अपणा धर्म रख,
भूख मरो पण जीव न भख।।[11]

श्रीदेव ने कर्मवाद पर विश्वास व्यक्त करते हुए उत्तम करणी का संदेश दिया। कर्मों का फल सुनिश्चित है इसलिए प्रत्येक प्राणी को उसके कर्मो का फल अवश्य भोगना पड़ता है। स्वयं जसनाथ जी कहते है –

करणी हीणा नित पिछतावै, दोष न दीजे देवा।
जो करणी सो भरणी पड़सी, देव न आडो आसी।[12]

स्वयं जसनाथ जी ने अहिंसा का समर्थन एवं जीवहत्या का विरोध करते हुए समाज को मार्गदर्शन प्रदान किया। वे लिखते है –

गाय'र गाड'र भैंस'र छाली,
दुय दुय पिवो पिराणी।
सिरज्या देव अमीं रा कूंपा,
गळवो काट न खाणी।[13]

अतः जिस व्यक्ति या परिवार ने 'जसनाथी धर्म' की दीक्षा ली हो, जसनाथजी द्वारा प्रतिपादित छत्तीस धर्म नियमों के पालन की प्रतिज्ञा की हो, जिसने दिक्षार्थ 'चळू' पान किया हो, वह तथा उसका परिवार जिसका संस्कार 'जसनाथी धर्मानुसार' हुआ हो, जो वर्तमान में विधि–विधान से जसनाथी होना स्वीकार करता हो, वह 'जसनाथी' है। 'ओउम् नमो आदेश' – जसनाथी सिद्ध और सेवक इसी अभिवादन वाक्य से परस्पर नमस्कार करते हैं। इसमें नमन का भाव प्रधान रूप में है। सम्प्रदाय के अनुपालनीय तत्त्व चळू (पंचामृत), भगवा वस्त्र धारण करना, जात (यात्रा), भू–समाधि, गुरु दीक्षा, ध्वज, नगाड़ा जोड़ी, धूपेड़ी, वनस्पति (वन), कलश, नारियल, तिलक, भस्म, आदर सूचक सम्बोधन आदि है।

निष्कर्षतः जसनाथी सम्प्रदाय व साहित्य मानव कल्याण, समाजोद्धार के साथ-साथ धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक दृष्टि से उपलब्धिपूर्ण सिद्ध हुआ। जिस समय में समाज, धर्म व राजनीति अपने पराभव व पतनोन्मुख थी, उस समय श्रीदेव जसनाथ जी का उदय तत्कालीन समाज व धर्म के लिए वरदान सिद्ध हुआ। जसनाथी सम्प्रदाय व साहित्य गत 500 वर्षों से सम्पूर्ण मानव जाति को जीवन पद्धति, ज्ञान, सिद्धांत और चमत्कारों से प्रभावित ही नहीं कर रहा बल्कि सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दे रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *राजस्थान के लोक नृत्य और लोकनाट्य : डॉ. कालूराम परिहार, रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर, पृ. 15*
2. *सिद्धाचार्य श्रीदेव जसनाथ चरित : श्री सूर्यशंकर पारीक, सरदारशहर (चूरू) 2001 ई., पृ. 16*
3. *वही, पृ. 45*
4. *सबद ग्रंथ : श्री सूर्यशंकर पारीक, श्रीदेव जसनाथ बाड़ी ट्रस्ट, बीकानेर 1999 ई., पृ.130*
5. *सिद्ध चरित्र : श्री सूर्यशंकर पारीक, रतनगढ, सं. 2013 ई., पृ. 46*
6. *तवारीख राज श्री बीकानेर : मुंशी मोहनलाल, पृ. 46*
7. *सबद ग्रंथ : श्री सूर्यशंकर पारीक, श्रीदेव जसनाथ बाड़ी ट्रस्ट, बीकानेर 1999 ई., पृ. 8*
8. *वही, पृ. 162*
9. *काव्यवाणी : सोमनाथमहाराज, पृ. 460*
10. *सबद ग्रंथ : श्री सूर्यशंकर पारीक, श्रीदेव जसनाथ बाड़ी ट्रस्ट, बीकानेर 1999 ई., पृ. 622*
11. *प्रार्थना पत्रिका (सरदारशहर) चूरू*
12. *सबद ग्रंथ : श्री सूर्यशंकर पारीक, श्रीदेव जसनाथ बाड़ी ट्रस्ट, बीकानेर 1999 ई., पृ. 154*
13. *सिद्ध चरित्र : श्री सूर्यशंकर पारीक, रतनगढ, सं. 2013 ई., पृ. 98*

ISSN 2277-5587

कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों के तनाव का उनके स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

shodhshree@gmail.com

संगीता रानी
शोधार्थी, श्री सत्य साँई तकनीकी एवं चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय, सिहोर (मध्यप्रदेश)

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में सिहोर के कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों के तनाव का उनके स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया। इस शोध कार्य में हमनें सिहोर शहर के 50 कामकाजी एवं 50 गैर कामकाजी अभिभावकों को यादृच्छिक विधि से न्यादर्श के रूप में चुना है । आंकड़ों के संकलन के रूप में स्वयं निर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया है। प्रस्तुत शोधकार्य से हमें यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि कामकाजी अभिभावकों में तनाव विषय बहुत ही संवेदनशील विषय हैं। जिसका प्रभाव न सिर्फ अभिभावकों पर पड़ता है किन्तु उनके पारिवारिक आपसी संबंधों पर भी पड़ता है । कामकाजी अभिभावकों को अपने परिवार के लिए समय इस व्यस्त जीवन से भी निकालना पड़ेगा । आज विश्व ज्यों ज्यों विकास की ओर आगे बढ़ रहा है मानव का कार्य क्षेत्र उतना ही विस्तृत होता जा रहा है । पिता के साथ मातायें भी जीवन यापन के नित नये आयाम खोजने लगी है सरकारी एवं प्राइवेट सेक्टर में कोई भी ऐसा क्षेत्र बाकी नहीं रह गया है जहाँ महिलाओं की पहुँच न हो । बढ़ती मंहगाई को देखते हुए आज दोनों का कामकाजी होना भी अति आवश्यक हो गया है ।

संकेताक्षर : *कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावक, तनाव, परिवारिक संबंध, मनोवैज्ञानिक अध्ययन।*

कामकाजी अभिभावकों में तनाव विषय बहुत ही संवेदनशील विषय हैं । आज विश्व ज्यों ज्यों विकास की ओर आगे बढ़ रहा है मानव का कार्य क्षेत्र उतना ही विस्तृत होता जा रहा है । पुरुष के साथ महिलायें भी जीवन यापन के नित नये आयाम खोजने लगी है सरकारी एवं प्राइवेट सेक्टर में कोई भी ऐसा क्षेत्र बाकी नही रह गया है जहाँ महिलाओं की पहुँच न हो । बढ़ती मंहगाई को देखते हुए आज दोनों का कामकाजी होना भी अति आवश्यक हो गया है । अभिभावकों के कामकाजी होने से उनके वैवाहिक संबंधों में पराम्परागत् कर्त्तव्यों में परिर्वतन आया है जैसा कि महिलाओं का कार्य करने के लिए बाहर जाना, पारिवारिक प्रणाली का विघटन तथा आधुनिक जीवन शैली का दबाव आदि अभिभावकों में तनाव की वृद्धि करता हैं । अभिभावकों में तनाव विभिन्न क्षेत्रों से आता है जैसे कि कार्य, विवाह, बच्चे, घरेलू कामकाज तथा संबंधीगण आदि से। इस अध्ययन का उद्धेश्य कामकाजी अभिभावकों में नौकरी के दौरान थोपे गये नये दायित्व के बावजूद अपने पारिवारिक जीवन में और कार्य स्थल में किन-किन परिस्थितियों में तनाव को लेकर तनाव होता है और तनाव परिवारिक संबंधों एवं बच्चों को किस प्रकार से प्रभावित करता है। महिलाऐं किस प्रकार दोनों के बीच तालमेल बैठाती है ? क्या महिलाऐं इस दोहरी भूमिका कुश्लतापूर्वक निभा पाती है ? क्या पति घर के काम में, बच्चों की देखभाल में पत्नि का सहयोग करता है ? इस अध्ययन का मुख्य उद्धेश्य उन तत्वों, परिस्थितियों एवं प्रक्रियाओ को खोजना है जो अभिभावकों में तनाव बढ़ाता है।

कामकाजी अभिभावकों से तात्पर्य वे अभिभावक जो की दोनों कार्य करते है अर्थात् जिनका कार्य क्षेत्र उनके पारिवारिक जीवन तक सीमित न हो बल्कि उनका कार्यक्षेत्र सामाजिक जीवन में भी हो । जैसे – नौकरी करना, व्यवसाय में कार्यरत आदि ।

कामकाजी अभिभावकों पर समय – समय पर हुए अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि कामकाजी अभिभावकों में विशेषकर महिलाओं के नौकरी से उत्पन्न हुई दोहरी भूमिका के कारण किन किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसका प्रभाव उसके स्वास्थ्य पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन पर पड़ता है। उसका यह संघर्ष ही उसके अनचाहे

तनाव का कारण बनता चला जाता है। कामकाजी अभिभावकों में उत्पन्न तनाव चाहे वह कार्य स्थल के कारण या फिर पारिवारिक स्थिति के कारण उत्पन्न हुआ हो उसके कार्यों में बाधा पहुँचाता है। यह तनाव उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

जब हम बाह्य मांगों, प्रत्याक्षाओं, आंतरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ पाते है। तनाव कई प्रकार के होते है जैसे शारीरिक तनाव, मानसिक तनाव, सामाजिक तनाव, संवेगात्मक तनाव, आर्थिक तनाव आदि। तनाव एक प्रक्रिया है जो अत्याधिक दबाव के कारण अभिभावकों में देखी जाती है। यह आधुनिक युग की द्रुतगति तथा अति महत्वांकाक्षाओं का परिणाम है।

पूर्व शोध अध्ययन

नाय और हॉफमैन ने 1998 में मिलकर विवाहित महिलाओं की समस्याओं पर काफी अध्ययन किया हैं उन्होनें यह जानने के लिए माँ एवं पत्नि के नौकरी में होने से उसके पारिवारिक व वैवाहिक जीवन में किस तरह के तनाव रहते रहते है, का अध्ययन किया। इनके द्वारा किये गये अध्ययन को एमप्लाइड़ मदर इन अमेरिका 1990 नामक पुस्तक के रुप में संकलित किया।

ब्राउन एम.सी.गिल, 2000 ने पाया कि कामकाजी महिला है तो उस स्थिति में वैवाहिक सामंजस्य का लेखा जोखा अधिकत्तर परिवार असंतोष एवं खिन्नता को ही प्रकट करता है।

टेलर ने 2003 में अपने अध्ययन में पाया कि कार्यस्थलीय तनाव और पारिवारिक तनाव से महिलाओं के व्यक्तित्व पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है। कार्यस्थल पर उत्पन्न हुए तनाव से महिलाओं का पारिवारिक जीवन प्रभावित होता है और पारिवारिक जीवन से उत्पन्न हुए तनाव से महिलाओं का कार्यस्थल प्रभावित हो जाता है। यही तनाव उसके स्वास्थ्य को प्रभावित करता है।

डॉ. सुषमा मलहोत्रा, 2005 नें कामकाजी महिला और उनके बच्चों के बीच संबंधों पर अध्ययन किया और पाया कि कामकाजी महिला बच्चों को पर्याप्त समय नहीं दे पाती है जिसका प्रतिकूल प्रतिकूल प्रभाव बच्चों के विकास पर पड़ता है। लंबे समय के अंतराल में यदि पति पत्नि दोनों ही नौकरी कर रहे हो और अपने बच्चे के साथ प्रर्याप्त समय व्यतीत नहीं कर रहे हो तो बच्चे के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है और महिला भी अपने आप को दोषी मान कर तनाव में रहती है।

समस्या कथन

''कामकाजी एवं गैरकामकाजी अभिभावकों के तनाव का उनके स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव का अध्ययन''

उद्देश्य

- शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों को ज्ञात करना ।
- ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारको को ज्ञात करना।
- शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों का अध्ययन करना ।
- ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों का अध्ययन करना ।

परिकल्पना

उपरोक्त उद्देशों की प्राप्ति हेतू शोधार्थी ने परिकल्पना का निर्धारण शून्य परिकल्पना के आधार पर किया ,जो निम्नानुसार हैः–

- शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों में कोई सार्थक अंतर नहीं है ।
- ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है ।
- शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है ।
- ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

शोध उपकरण

प्रदत्त् संकलन के लिऐ उपकरण के रूप में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों पर आधारित प्रश्नावली का प्रयोग किया।

प्रयुक्त सांख्यिकीय विश्लेषण

सांख्यिकीय विश्लेषण में निम्नलिखित सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया।

1 मध्यमान 2 प्रमाणिक विचलन 3 टी टेस्ट

शोध विश्लेषण एवं व्याख्या

तालिका क्र.1 शहरी कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारणों के प्राप्तांकों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र. सं.	चरं	मुक्तांश	कामकाजी अभिभावक			गैरकामकाजी अभिभावक			टी मान	सार्थक अंतर	
			मध्यमान	मानक विचलन	मानक अंतर	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि		0.05 1.98	0.01 2.63
1	शहरी	98	29.65	2.13	0.32	25.9	2.4	0.40	2.98	सार्थक	सार्थक

उपरोक्त तालिका क्र.1 के अवलोकन करने से स्पष्ट है कि शहरी कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न वाले कारको के प्राप्तांकों का मध्यमान 29.6 व मानक विचलन 2.13 एवं शहरी गैर कामकाजी अभिभावकों में प्राप्तांकों का मध्यमान 25.9 व मानक विचलन2.4 है तथा शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों के प्राप्तांकों का टी मान 2.98 है । जो टी सारणी मान 1.98 व 2.63 से अधिक है । इसलिए 0.05 एवं 0.01 स्तर पर अंतर सार्थक हैं । अर्थात् कामकाजी अभिभावकों में गैर कामकाजी अभिभावकों की तुलना में अधिक तनाव पाया जाता है।

परिकल्पना का सत्यापन

शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले वाले कारकों में कोई सार्थक अंतर नहीं होता । यह परिकल्पना अमान्य सिद्ध होती है क्योंकि परिकल्पना 0.05 एवं 0.01 स्तर पर असत्य पाई गई ।

तालिका क्र.2

ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों के प्राप्तांक का तुलनात्मक अध्ययन।

क्र. सं.	चरं	मुक्तांश	कामकाजी अभिभावक			गैरकामकाजी अभिभावक			टी मान	सार्थक अंतर	
			मध्यमान	मानक विचलन	मानक अंतर	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि		0.05 1.98	0.01 2.63
1	शहरी	98	28.91	2.13	0.14	22.44	3.4	0.21	2.77	सार्थक	सार्थक

परिकल्पना का सत्यापन

ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों में कोई सार्थक अंतर नही है । यह परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है। क्योंकि 0.05 व 0.01 स्तर पर सार्थक अंतर पाया गया ।

तालिका क्र. 3

शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों के प्राप्तांकों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र. सं.	चरं	मुक्तांश	कामकाजी अभिभावक			गैरकामकाजी अभिभावक			टी मान	सार्थक अंतर	
			मध्यमान	मानक विचलन	मानक अंतर	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि		0.05 1.98	0.01 2.63
1	शहरी	98	26.3	2.9	0.1	29.7	2.4	0.08	2.6	सार्थक	सार्थक

उपरोक्त तालिका क्र. 3 को देखने से स्पष्ट है कि शहरी कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य एवं पारिवारिक संबंधों के प्राप्तांकों का अध्ययन 26 .3 व मानक विचलन 2.9 है एवं शहरी गैर कामकाजी अभिभावकों के प्राप्तांकों का मध्यमान 29.7 व मानक विचलन 2.4 है तथा शहरी कामकाजी एवं गैरकामकाजी अभिभावकों के प्राप्तांकों का टी मान 2.60 है । जो टी सारणी मान 1.98 से अधिक व 2.63 से कम है अतः 0.05 स्तर पर कामकाजी व गैर कामकाजी अभिभावकों में सार्थक अंतर पाया गया है। गैर

कामकाजी अभिभावकों में 0 .05 स्तर पर कामकाजी अभिभावकों की तुलना में स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंध अच्छे पाये गये । इसलिए 0.05 एवं 0.01 स्तर पर अंतर सार्थक पाया गया ।

परिकल्पना का सत्यापन शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंधों में 0.05 स्तर सार्थक अंतर पाया गया । यह परिकल्पना अमान्य सिद्ध होती है क्योंकि परिकल्पना 0.05 एवं 0.01 स्तर पर असत्य पाई गई ।

तालिका क्र. 4

क्र. सं.	चरं	मुक्तांश	कामकाजी अभिभावक			गैरकामकाजी अभिभावक			टी मान	सार्थक अंतर	
			मध्यमान	मानक विचलन	मानक अंतर	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि		0.05 1.98	0.01 2.63
1	शहरी	98	22.6	1.9	0.12	26.0	0.4	0.10	4.04	सार्थक	सार्थक

उपरोक्त तालिका क्र. 4 को देखने से स्पष्ट है कि ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंधों के प्राप्तांकों का मध्यमान 23.6 व मानक विचलन 1.9 एवं गैर कामकाजी अभिभावकों के प्राप्तांकों का टी मान 4.04 है जो टी सारणी मान 1.98 व 2.63 से अधिक है। अतः दोनों स्तर पर अंतर सार्थक है व ग्रामीण गैर कामकाजी में स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंध अधिक अच्छे थे अपेक्षाकृत गैर कामकाजी अभिभावकों के।

परिकल्पना का सत्यापन

ग्रामीण कामकाजी अभिभावकों व गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंध में 0.05 व 0.01 स्तर पर अंतर पाया गया अतः परिकल्पना अमान्य सिद्ध होती है ।

निष्कर्ष कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों के तनाव का उनके स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंधों के तनाव का अध्ययन किया गया जिसके निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुआ ।

- शहरी कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों में सार्थक अंतर पाया गया।
- ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों में सार्थक अंतर पाया गया ।
- शहरी कामकाजी ण्वं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य व पारिपारिक संबंधों को प्रभावित करने वाली परिस्थिति में 0.05 स्तर पर अंतर पाया गया एवं 0.01 स्तर पर अंतर नहीं पाया गया ।
- ग्रामीण कामकाजी एवं गैर कामकाजी अभिभावकों में स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंधों को प्रभावित करने वाली परिस्थिति में सार्थक अंतर पाया गया।

  शहरी कामकाजी अभिभावकों में समय की व्यस्तता के कारण तनाव ग्रस्तता अधिक देखी गयी जिसका प्रतिकूल प्रभाव उनके स्वास्थ्य व पारिवारिक संबंधों पर भी देखा गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *कपूर प्रमिला – कामकाजी भारतीय नारी बदलते जीवन मूल्य और सामाजिक स्थिति दिल्ली राजपसल सिंह एण्ड संस।*
2. *देशपांडे एस.आर. – इकानॉमिक्स एण्ड सोशल स्टेट ऑफ वूमेन वर्कर्स इन इंडिया, नई दिल्ली 1983*
3. *ए. के. जर्नाधन – ए स्टेडी ऑफ द लेवल ऑफ इस्टैस एण्ड इट्स मैनेजमेंट इन एनी पर्सन*
4. *एच.बासोमट् – एक्साइटी एण्ड इसटैस्*

Archaeological Sites in Rajasthan: Their Problems and Suggestions

Mr. Kamal Singh
Research Scholar, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner

Dr. Ambika Dhaka
Head, Department of History, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner

shodhshree@gmail.com

Abstract

Archaeological sites are non-renewable resources and once they are destroyed or excavated by archaeologists, they are gone forever and can't be replaced. The loss is great. Although, even without our intervention, some sites are very vulnerable and are being destroyed either through construction, natural disasters such as floods, or natural processes like erosion. In the end, archaeology isn't about artifacts or excavations or exhibits, it's about people! Our decisions about the future are based on the lessons we learn from those who came before us. The Harappans, Mauryans, Kushanas, Guptas, Delhi Sultanate and Mughals, Marathas, regional powers etc. - entire generations of our predecessors and ancestors - can be reconstructed from the things they left behind in archaeological sites, mounds, monuments, buildings etc. They can still teach us and we can still learn from them. The knowledge and accomplishments of all those past generations are part of our collective heritage as Indians. It's a legacy far too valuable to lose. However, recent expansions, intentional or unintentional, have created a situation of crisis for our archaeological sites that requires a deep concern.

Key Words : *Archaeological Sites, Antiquities, Copper Objects, Excavation, Early Historic.*

Rajasthan is an abode of culture and heritage. A number of archaeological sites have been brought to light since independence. Many of these have been excavated but still a large number of them lie scattered throughout the length and breadth of the state. These archaeological remains are embodiment of our heritage and culture. One cannot deny the fact that heritage and conservation have become important themes in current discussions on place, cultural identity, and the preservation of the past.

However, current concerns with the escalating pace of site destruction can be attributed to the perception among the public and professionals that archaeological sites, like the natural environment, are finite non-renewable resources deteriorating at an increasing rate. An unfortunate risk to archaeological sites is development itself. As the world continues to develop and build new buildings and roadways, many times archaeological sites are damaged. While development cannot be discontinued simply to protect archaeological sites, having a basic understanding of what might be impacted before development takes place could help protect sites and at least the information they can provide. Vandalism, whether intentional or unintentional, is also a prominent force of damage to archaeological sites. There is a range of actions that can be considered: graffiti, carving, deconstruction, burning, et cetera. In Rajasthan, there are many archaeological sites that are on the verge of destruction

as a result of human interference. Just to name a few- Baror[1], Badopal[2], Bhadrakali[3], Tarkhanewala Dera[4], Chak 86[5], Rer/GB 48[6], Ganeshwar[7], Ahar[8] etc. We shall discuss the condition of the different archaeological sites in Rajasthan in general, which is and should be an area of concern for every responsible person who has admiration and respect for the heritage and culture of our country.

Archaeological Sites at Glance:

The archaeological sites in Rajasthan have been identified and being taken care as protected sites/ monuments by the Archaeological Survey of India, New Delhi as well as the State Archaeology Department, Jaipur. The ASI has a total number of 163 sites under its aegis which includes sites and monuments both. The State Archaeology Department has under its protection a total of 375 sites and monuments of which, 44 are archaeological sites.

We find a number of archaeological sites in Rajasthan pertaining to Harappan, Early Historic and Historical period. These sites are significant as they help up to understand and reconstruct the rich history of this region in a splendid manner. Many sites have been excavated (Kalibangan[9], Ojhiyana[10], Baror, Ganeshwar, Ahar, Tarkhanwala Dera etc.), surveyed or documented by these departments from time to time. However, this work was done almost two decades back or even more and now when we go out in the field to locate and study these sites, it is almost difficult to find them. The modern construction and agricultural activities have engulfed many of these sites. Some of the important archaeological sites and their present condition is being taken up under discussion.

Baror

The site Baror[11] is on left side of the Vijaynagar-Anupgarh road in Ganganagar district. It is 13 km from Anupgarh. It was first brought to light by L.P. Tessitori. The mound is approximately 183 m in diameter and 7.5 m high, yielding pre-Harappan and Harappan pottery. The archaeologists have found pottery of Pre Harappan and Harappan period. The circular and triangular terracotta cakes, sling balls with pinched decoration, circular beads and spacer, terracotta, faience and shell bangles, etc.

The antiquities found here are circular and triangular terracotta cakes, sling balls with pinched decoration, circular beads and spacer, terracotta, faience and shell bangles, etc. Some other important artefacts known from here are a skeleton of a human with ornaments; two stones have been found which produce red-coloured liquid after rubbing with each other; a 5 meter long and 3 meter clay oven and a pitcher filled with 8000 pearls.

This is a very important archaeological site but presently it has been converted into a graveyard and the funerary practices are destroying this site.

Badopal

Badopal[12] is quite famous for the saltwater lake. A variety of birds species are found in the Badopal Lake. Flamingo is most well known migratory bird that come in the winter season. Apart from this the site of Badopal has archaeological significance too. The terracottas of the Early Gupta period have been excavated in the ancient *Theris* found in the village. This village has got remains of habitation in addition to rich terracotta assemblage. This site has also been converted into graveyard and the process of destruction been initiated.

Tarkhanewala Dera[13]

This site was discovered by A. Ghosh in 1950-53. It is 6km north of Anupgarh. in Ganganagar district. This site was excavated by ASI which brought forth Mature Harappan and PGW cultures. This site has been levelled and totally destroyed. There is an office building here and a brick kiln near it, on other side of the road.

Chak 86[14]

This is a PGW site in Ganganagar district of Rajasthan, 6 km north of Anupgarh and 250 m from Tarkhanewala Dera. This site has been destroyed due to farming. A road dissects the site

which has further escalated the process of destruction. We do find sherds of PGW on the surface. In future, it may not be possible to locate this site.

Rer/GB48[15]

This is an Early Historic site in Ganganagar. The surface finds exhibit red ware and PGW. This site is facing encroachment and religious structure has been built on it.

Bhadrakali[16]

This is an Early Historic site in Ganganagar. This site has brought forth wonderful terracottas of early Gupta period. A religious structure on this site causing destruction to its original form.

Binjor[17]

This is a Harappan site in Ganganagar. A number of artefacts and pottery has been found here. It extends in vast area and has Rang Mahal ware on top level. A religious structure on this site is causing destruction to its original form and fields have been cut through it for agriculture.

Rang Mahal[18]

This early historical site was excavated by the Swedish Archaeological Expedition, during 1952-4. The first settlement was laid around A.D. 250 during Kushana period and flourished up to the sixth or seventh century A.D. During excavations, coins of Kanishka III, besides the Murundas and three earlier coins of Kanishka I, Huvishka and Vasudeva and a seal palaeographically datable to A.D. 300, have been found. Excavation has revealed eight structural phases. The structures were built of mud-bricks of varying sizes but the normal size was about 32 x 23 x 7 cm. The bricks were laid in the English bond system. The floors were paved with mud-bricks. The houses were rectangular with north-south orientation. The site is famous for the manufacture of typical ceramic industry termed as Rang Mahal Ware culture. This distinctive pottery is wheel-made, reddish or pinkish in colour. The types include globular or oval jars and *handi* with pronounced rims, externally rusticated showing wavy ribs. In some cases the shoulder and the neck are painted in black-on-red polished surface, other types are spouted vase, sprinkler, cooking vessels, storage jars, beaker with or without handle, bowls of different varieties, lamp, incense-burner, etc. A few carinated *handis* have textile marks on the body. Moulded pottery is represented by the bowl and miniature basin. The decorations on the pottery are applied and incised patterns and paintings. The cultural assemblage also includes figurines in faience, terracotta animal figurines, carts and wheels, weights, balls, flesh-rubbers, discs, dice, votive tanks, potters stamps, pendants, ear-ornaments, beads of coral, paste, lapis lazuli and shell; rotary querns, mullers, pestles and bone and iron objects.

This site has been immensely destroyed by salt makers who dug quarries and made salt. However, recently, the ASI has taken note of it and demarcated the site to stop this activity. But only time will reveal the outcome of these efforts.

Ganeshwar

Ganeshwar19 is a village in Neem-Ka-Thana Tehsil (Mandal) in the Sikar district of Rajasthan. Ganeshwar is 7.9 kilometres from Neem-Ka- Thana town, 66.4 kilometres from Sikar city and 83 kilometres from Jaipur. Excavations in the area revealed the remains of a 4,000-year-old civilization.

Ganeshwar was excavated by the State Archaeology Department in 1977. Red pottery was found here with black portraiture. The period was estimated to be 2500–2000 BC. Nearly one thousand pieces of copper were found there. Ganeshwar is located near the copper mines of the Sikar-Jhunjhunu area of the Khetri copper belt in Rajasthan. Excavations revealed copper objects including arrowheads, spearheads, fish hooks, bangles and chisels. With its microliths and other stone tools, Ganeshwar culture can be ascribed to the pre-Harappan period. Ganeshwar mainly supplied copper objects to Harappa.

This site of international repute is facing danger as it has almost been levelled by the

agriculturists.

Suggestions

The plight of the archaeological sites in Rajasthan, whether under protection or not, is almost the same. These sites are facing danger due to human interference and other hidden interests. The possible measures and suggestions that can help in their preservation and maintenance are- we need to create awareness amongst masses and maximum destruction is being caused by them and not the outsiders; local people and young generation should be made aware and educated about the rich cultural heritage and they should be encouraged to protect it too; the ethics behind preserving archaeological sites, and how to talk to non-archaeologists about cultural heritage management is important. NGO's may take initiative in spreading and education masses; and Government Departments should make efforts to acquire lands on which archaeological sites are located and deploy adequate staff and regularly monitor their maintenance. By taking these few initiative, we may be able to bring some change in present condition of archaeological sites.

References

1. *Ghosh, A. (ed.), An Encyclopaedia of Indian Archaeology, Volume II, Munshiram Manoharlal Pvt. Ltd., 1989, p.55*
2. *Ibid, p. 394-97*
3. *Ibid, p. 63*
4. *Trivedi, P.K., Excavations at Tarkhanewala- Dera And Chak 86 (2003-04), ASI, New Delhi, 2009.*
5. *Ibid.*
6. *Ghosh, A., op.cit., p.375*
7. *Mishra, V.N., The Ganeshwar-Jodhpura Culture, Rajasthan Prehistoric and Early Historic Foundations, Aryan Book International, New Delhi, 2007, p.252*
8. *IAR, 1954-5, p.14*
9. *Lal, B.B. & others, Excavations at Kalibangan The Early Harappans (1960- 1969), ASI, New Delhi, 2003.*
10. *Mishra, V.N., op.cit., p. 169*
11. *Ghosh, A., op.cit., p.433*
12. *Ghosh, A., op.cit., p. 394-97*
13. *Trivedi, P.K., op.cit.*
14. *Ibid.*
15. *Ghosh, A., op.cit., p.375*
16. *Ghosh, A., op.cit., p.63*
17. *Mishra,V.N., op.cit., p. 58*
18. *Rydh, Hanna, Rang Mahal The Swedish Archaeological Expedition to India 1952-1954, Lund (Sweden), 1959.*
19. *Mishra, V.N., op.cit.*

Green Finance: A Step Towards Environmental Sustainability

Dr. Nuzhat Sadriwala
Lecturer, R.M.V. Girls College, Udaipur

shodhshree@gmail.com

Abstract

The Indian banking business is one of the largest banking business in the world which caters to the needs of different strata of society. The concern for environmental sustainability by the banks has given rise to concept of Green Banking. The environment and climate change are the most complicated issues that world is facing today. So adoption of change is the need for the survival. Until the end of twentieth century, green was just the colour of money for banks in India. With the introduction of Automated Teller Machines (ATMs) in 2001in the banking sector of India, banking sector took initiative towards an environment-friendly banking system. Green banking means combining operational improvements, technology and changing client habits in banking business. Today's business is all about being green. Green financing is the part of green banking. Being a financial organization banks are responsible for the economic development of the nation. Green banking means promoting environmental friendly practices and reducing carbon footprint from banking activities. It is like normal banking along with the consideration for social as well as environmental factors for protecting the environment. Adoption of green banking practices will not only be useful for environment, but also benefit in greater operational efficiencies, a minimum errors and frauds, and cost reductions in banking activities. The present paper aims to deal with the green initiatives and developments that took place in the banking sector in India and sites international developments. Further, an attempt has been made to highlight the major benefits, strategies, importance of green banking, risks involved and confronting challenges of Green Banking.

Key words*: Green Banking, Eco-Friendly, Green Technology, Environment Initiatives.*

Governments, enterprises, and people, all have roles to play in combating global warming and building a sustainable environment. A good thing is that there is now greater awareness and a growing commitment to address environmental problems we face. In action to arrest environmental degradation would significantly affect not only current but also future generations and our further progress. So, a proactive multipronged action is necessary by all the industry and business sectors, regulatory agencies and the individuals.

The Finance sector of an economy forms the backbone of the country. It has a direct impact on the country's economic growth and development. The banking sector can play an outstanding role between economic growth and environmental protection for promoting environmentally sustainable and socially accountable institution. Therefore, with increasing environmental concerns both at national

and global level; it has become important for the finance sector to become responsive to these environmental issues. The concern for environmental sustainability by the banks has given rise to concept of Green Banking. The concept of "Green Banking" will be mutually beneficial to the banks, industries and the economy. Green financing is the part of green banking. Change is the need of hour for survival in all spheres. The world has seen much focus on economic progress and mankind has made giant steps in its journey through time. The side effects of the development process have, however, also been equally enormous loss of biodiversity, climatic change, environmental damage, etc. The banking of this type can be termed as 'Green Banking'. Green Banking is comparatively a new development in the financial world. It is a form of banking taking into account the social and environmental impacts and its main motive is to protect and preserve environment.

Objective of the study

The objective of the present study are:

1. To understand the concept of Green Banking.
2. To have abetter understanding of the strategies of green banking.
3. To identify the Methods for adopting Green Banking.
4. To understand the practice of Indian banks with reference to green banking concept.
5. To enlist Green Banking opportunities and challenges.

Research Methodology

The study mainly includes literature review from secondary data. The secondary data sources include reports of the respective banks and other relative information published on the banks and other internet sites, Research Paper and Various articles on Green Banking.

Green Banking: Meaning

Green Banking is an umbrella term referring to practices and guidelines that make banks sustainable in economic, environment, and social dimensions.(IDRBT, August 2013) It aims to make banking processes and the use of IT and physical infrastructure as efficient and effective as possible, with zero or minimal impact on the environment. Green banking means promoting environmental-friendly practices and reducing carbon footprint from the banking activities.

Green banking aims at improving the operations and technology along with making the clients habits environment friendly in the banking business. Green is the word now 'Green Computing', 'Green Banking', 'Green Strategic Management' and so on (Ahuja, January 2015). This comes in many forms; using online banking instead of branch banking, paying bills online instead of mailing them, opening up CDs and money market accounts at online banks, instead of large multi-branch banks or finding the local bank in the area that is taking the biggest steps to support local green initiatives. Any combination of the stated personal banking practices can help the environment. Enterprises are now increasingly interested in establishing and implementing strategies that will help them to address environmental issues and also pursue new opportunities. The reasons for going green are manifold, and the key among them are: increasing energy consumption and energy prices, growing consumer interest in environmentally friendly goods and services, higher expectations by the public on enterprises' environmental responsibilities and emerging stricter regulatory and compliance requirements. Green banking refers to practices which considers all the social and environmental factors, aims to make use of IT and banking processes with minimal impact on the environment (Ritu, September 2014). There are four major avenues for greening banking – processes, products and services, strategies and other activities – which are briefly outlined here.

Green Bank Products

Green banking helps to create effective and far

reaching market based solutions for customers. Banks are developing new products and services that respond to consumer demand for sustainable choices. Green banking product coverage includes:

- Green mortgages
- Green loans
- Green credit cards
- Green saving account
- Green checking account
- Green CDs
- Green money market
- Mobile banking
- Online banking

Green Banking Strategies

Indian Banks can adopt green banking as business model for sustainable banking. Some of following strategies little reflected in their banking business or must be adopted by banks.

- **Carbon Credit Business (CBS)**

  All Nations must reduce greenhouse gases emission and reduce carbon to protect our environment. These emissions must be certified by Certified Emission Reductions commonly known as carbon credit.

- **Set SMART** (Specific, Measurable, Attainable, Realistic, and Timely) green goals

  These goals should be set as the internal targets to reduce your carbon footprint along with timelines. Develop criteria for measuring progress towards the goals.

- **Green Banking Financial Products**

  Banks can develop innovative green based products or may offer green loans on low rate of interest. As Housing and Car loan segments constitute the main portfolio of all banks so they adopt green loans facility.

- **Paperless Banking**

  All banks are shifting on CBS or ATM platform providing electronic banking products and services. So there is a scope for banks to adopt paperless banking. Private and foreign banks are using electronics for their office but in PSU banks are still using huge paper quantity.

- **Energy Consciousness**

  Banks have to install energy efficient equipment's in their office. Banks have to transform this green banking in hardware, waste management, energy efficient technology products. Banks can donate energy saving equipment to schools and hospitals.

- **Social Responsibility Services**

  Indian banks can initiate various social responsibility services like tree plantation camps, maintenance of parks and pollution check-up camps.

- **Conduct energy audits**

  Review equipment purchases and disposal policies and practices. Assess IT's environmental and cost impact and identify areas to be "greened".

- **Set SMART** (Specific, Measurable, Attainable, Realistic, and Timely) green goals as the internal targets to reduce your carbon footprint along with timelines.

- **Monitor the progress regularly**

  Watch industry trends and new developments and revise the green policy as required. Publicize your environmental policy, actions, and achievements and thereby get credits and accolades from customers, peers, industry groups, environmental advocates, government agencies and society at large.

Green Banking Process

A Green Bank requires each of its functional units and activities to be Green- environmentally friendly and help to improve environmental sustainability. Several opportunities are available for banks to go green their functional units and activities. Key among them are:

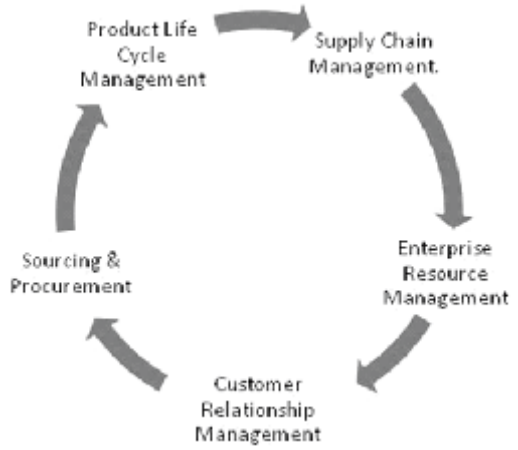

1. Supply Chain Management(SCM)

SCM is the management of the flow of goods and services. It includes the movement and storage of raw materials, work-in-process inventory, and finished goods from point –of- origin to point- of-consumption. Interconnected or interlinked networks, channels and node businesses are involved in the provision of products and services required by end customers in a supply chain**.**

- Adopt techniques and plans to minimize inventory and wasted freight.
- Adopt networked design using a carbon foot print.

2. Enterprise Resource Management(ERP)

ERP is a category of business-management software, typically a suite of integrated applications that an organization can use to collect, store, manage and interpret data from many business activities, including product planning, purchase, manufacturing or service delivery ,marketing and sales, inventory management, shipping and payment.

- It facilitates paper less transactions.
- Adopt techniques for workforce and parts optimization as well as intelligent device management.

3. Customer Relationship Management(CRM)

Customer relationship management is an approach to managing a company's interaction with current and future customers. The systems of CRM compile information from a range of different communication channels including a company's website, telephone, email, live chat, marketing materials, social media, and more. Through the CRM approach and the systems used to facilitate CRM, businesses learn more about their target audiences and how to best cater to their needs.

4. Sourcing & Procurement

In business, the term sourcing refers to a number of procurement practices, aimed at finding, evaluating and engaging suppliers for acquiring goods and services. Outsourcing is the process of contracting a business function to someone else, select vendors for sustainability rating for their products, services and operations.

5. Product Life Cycle Management

In industry, PLC is the process of managing the entire lifecycle of a product from inception, through engineering design and manufacture, to service and disposal of manufactured products.

- Design and offer banking products & services in such a way that consume less resources and energy and thereby reduce carbon foot print.
- Implement effective systems for product end-of- life management that have minimal impact on environment.

Green Banking In India

The various banks in India which provide green banking services to their customers are as follows

State Bank of India

SBI has launched green banking policy and set up windmills in Tamil Nadu, Maharashtra and Gujarat in generating 15MW power. This is the first bank in India which is in green banking and promoting green power projects.

Punjab National Bank

They had taken various steps for reducing emission and energy consumption.

Bank of Baroda

They had taken various green banking initiatives such as financing a commercial project. BOB is giving preference to environment friendly green projects such as windmills, biomass and solar power projects which help in earning the carbon credits.

Canara Bank

As a part of green banking initiative it had adopted environmental friendly measures such as mobile banking, internet banking, telebanking, solar powered biometric operations.

ICICI Bank Ltd

ICICI bank had started 'Go Green' initiative which involves activities like Green products/offerings, Green engagement and green communication with customers.

HDFC Bank Ltd

HDFC bank is taking up various measures for reducing their carbon footprints in waste management, paper use and energy efficiencies.

Kotak Mahindra Bank

Through the 'Think Green' initiative this bank had taken several initiatives such as to reduce the paper consumption and encouraging their customers to sign for e-statements and they had become partners with 'Grow- Trees.com' to plant one sapling for every e-statement on behalf of its customers.

Indusind Bank

It has initiated its Green Office Project under which it had installed solar powered ATMs in different cities targeting energy saving as well as reducing CO_2 emissions.

YES Bank

It has projects portfolio in the areas of alternative energy and clean Technologies.

HSBC Group

HSBC has separate targets for data centre, paper consumption and business air travel. The purposes of the targets are to drive efficiency, reduce its operational impact on the environment and generate cost savings.

IDBI

IDBI Bank is providing various services in the field of Clean Development Mechanisms (CDM) to its client.

Risk and Challenges of Green Banking

While adopting green banking practices, the banks would face the following challenges:

- **Reputational Risk:** If banks are involved in those projects which are damaging the environment they are prone lose their reputation. There are few cases where environmental management system has resulted in cost saving, increase in bond value.
- **Diversification Problem:** Green banks restrict their business transaction to those business entities who qualify screening process done by green banks. With limited number of customers they will have a smaller base to support them.
- **Start-up face:** Many banks in green business are very new and are in start-up face. Generally it takes 3 to4 years for a bank to start making money. Thus it does not help banks during recession.
- **Credit Risk:** Credit risk arises due to lending to those customers whose businesses are effected by the cost of pollution, change in environmental regulation and new requirements of emission level.
- **High operating cost:** Green bank requires talented and experienced staff to provide proper services to customers. Experienced loan officers are needed, they give additional experience in dealing with green business and customers.

Green coin rating

Green Coin Ratings Challenge

The Institute of Development and Research and in Banking Technology (IDRBT) established by Reserve Bank of India (RBI) has proposed the introduction of standard rating for green efficient banks and banking practices among

Indian Banks. Under this rating system, both the infrastructure and operations of the banks are being considered. IDRBT has coined the term of Green Rating Standard as "Green Coin Rating". Banks' primary business must not be money making only, but it should also keep in mind social and environmental issues relating to its operations. Green Coin Rating will be in line as energy star rating given for appliances. Banks will be judged based on the rate of carbon emission out of their operations, the amount of reuse, refurbish and recycling concept being used in their building furnishings and in the systems used by them such as computers, servers, networks, printers, etc. They will also be evaluated on the number of green projects being financed by them and the amount of rewards and recognition they are paying for turning businesses green.

The primary objectives behind Green Coin Rating are as follows:

- Improving the energy and carbon efficiency of bank.
- To estimate energy usage and wastage.
- Comparative assessment of banks and its products efficiency for the customers and other stakeholders in relation to environment impact assessment.
- Recognize and reward the environment-conscious financial institutions.

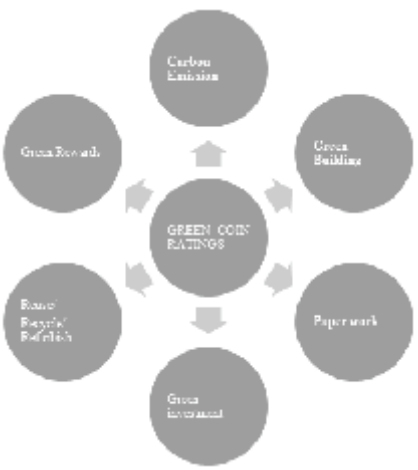

Conclusion

As far as green banking is concerned, Indian banks are running behind time and it is the need of the hour to think it seriously for the sustainable growth of the nation. Green Banking concept will be beneficial for both the banking industries and the economy. Not only "Green Banking" will ensure the greening of the industries but it will also facilitate in improving the asset quality of the banks in future.

Sustainable development can best be achieved by allowing markets to work within an appropriate framework of cost efficient regulations and economic instruments. One of the major economic agents influencing overall industrial activity and economic growth is the financial institutions such as banking sector. In a globalised economy, the industries and firms are vulnerable to stringent environmental policies, severe law suits or consumer boycotts. Since banking sector is one of the major stake holders in the Industrial sector, it can find itself faced with credit risk and liability risks. Further, environmental impact might affect the quality of assets and also rate of return of banks in the long-run. Thus the banks should go green and play a pro-active role to take environmental and ecological aspects as part of their lending principle, which would force industries to go for mandated investment for environmental management, use of appropriate technologies and management systems.

Currently, in India, the concept of green banking is catching up and banks are actively looking for ways to portray themselves as a Green Bank. Thus, it can be concluded that India has a great potential to create a green infrastructure needed for green finance by overcoming the barriers and creating awareness among the corporate citizens.

Suggestions

The banks should report in their annual reports the initiatives taken by them for sustainable development. The banks should also upload the information on these aspects in their respective

websites. The Green approach adopted by the banks will impact the customers in the following ways:

- Better choice for customers and businesses
- Customers will be attracted to relationship-driven approach built on foundation of core values designed to enhance environmental, social, and financial well-being of communities
- Active lending to sustainable businesses
- Green credit being provided to the customers.

References

1. *Ahuja, N. (January 2015). Green banking in India: A Review of Literature. International Journal for Research in Management and Pharmacy, Vol. 4, Issue 1 .*
2. *ASHRAE Data Center Technical Guidebooks. Best Practices for the EU Code of Conduct on Data Centers, Evaluating the Carbon Reducing Impacts of ICT: Assessment Methodology.*
3. *Data Center TCO: A Comparison of High Density and Low DensitySpace Energy Efficiency in Buildings: Business Realities and Opportunities*
4. *D Kandavel (2013), "Green Banking Initiatives of Commercial banks in India", SIT Journal of Management, Volume 3, No: 2, 213- 225.*
5. *Dr.LoluruNagarjuna (2015), "Green Financial Management Practices in Public and Private Sector banks – a case study of SBI and ICICI bank", International Multidisciplinary E – Journal, Volume 4, No:8, 295-306*
6. *Green banking for indian banking sector by Institute For Development and Research In Banking Technology Publication, August 2013.*
7. *Greener and Smarter: ICTs, the Environment ,and Climate Change, OECD, 2010.*
8. *Leslie D Monte, 'It's Times for Green Banking', Business Standard, May 21, 2010.*
9. *Neetu Sharma, Dr.Richa Chaudhary and Dr. Harsh Purohit (2015), "A Comparative study on Green Banking InitiativesTaken by Select Public and Private Sector banks in Mumbai", IOSR Journal of Business and Management, 32-37.*
10. *Raghupati M and Sujhatha S (2015), "Green Banking Initiatives of Commercial Banks in India", International Research Journal of Business and Management, Volume No:8, No:2, 74-81. 12.*
11. *Ritu. (September 2014). Green Banking: Opportunities And Challenges. International Journal of Informative & Futuristic Research, Volume 2, Issue 1 .*
12. *Ritwik Mukherjee, 'SBI launches green policy for paperless banking', Financial Chronicle, August 27, 2010.*
13. *San Murugesan and G.R. Gangadharan (Editors), Harnessing Green IT: Principles and Practices. 2012 by Wiley IEEE Publishers ,United Kingdom.*
14. *Smart 2020: Enabling the Low Carbon Economy in the Information Age AC versus DC Power Distribution for Data Centers*
15. *Vinod Kala and VivekGarg (2014), "Issue paper on Green Bonds in India", Issue Paper by PACE, December 13.*
16. *YadavRambalak and Pathak Govind (2014). "Environmental Sustainability through green banking: A Study on Private and Public sector banks in India" International Journal of Sustainable Development 6(8), 37-47.*

WEBSITES

1. *www.sbi.co.in*
2. *www.idfcbank.com*
3. *www.pnbindia.in*
4. *www.axisbank.com*
5. *www.yesbank.in*
6. *www.climatepolicyinitiative.org.*

Impact of MGNREGA on Women Empowerment: A Study of Tonk District (Rajasthan)

Gajendra Singh Meena
Assistant Professor, Govt. College, Khanpur (Jhalawar)

shodhshree@gmail.com

Abstract

Mahatama Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) is a landmark legislation which empowers the rural population with the legal rights to demand work. The paper attempts to study the impact of MGNREGA on women empowerment through study the participation of women in MGNREGA scheme in various block of Tonk district of Rajasthan. Women participation in MGNREGA is measured in total number of women registered, person days generated by women, number of women workers employed and amount earned by the women workers. It is found in study that all blocks of Tonk district are comprises more than 45 per cent of women registration and total number of women worker employed under scheme in district is more than the men workers. The share of 59.02 per cent of the total person days generated in Tonk district are related to women workers. It is concluded that the scheme ensure the women empowerment through the active participation of women in Tonk district.

Key words: *MGNREGA, Women Empowerment, NREGA, Millennium Development Goals.*

Women empowerment has been studies as an important medium to achieve the goal of gender equality in recent time. Need for women empowerment got felt around 1970's and in 2000. The Millennium Development Goals (MDG's) indicated a campaign for women's rights areas such as education, health and poverty. The Government of India (GOI) initiated National Rural Employment Guarantee Act (NREGA) which is not only a scheme but an Act to that provides guarantees to work. The objective of the scheme is to improve the purchasing power of the rural people by providing them unskilled work in rural India. This scheme is renamed later as Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme (MGNREGS).

MGNREGA also aims to empower the important section of our society women by giving them independent income earning opportunities. Women empowerment was not the specific objective of MGNREGA. However the provision in the constitution like parity for women in the ratio of one third of total worker [schedule II(6)], equal wages for men and women [schedule II(34)] and crèches for the children of women Workers [schedule II(28)] were made in the act ensuring that women should get equal benefit from the MGNREGA scheme. This paper has made an attempt to study the participation of women in MGNREGA scheme in various block of Tonk district of Rajasthan. The paper is related with the issue of women empowerment reality in rural area.

What is women empowerment?

Women empowerment refers to the power of having decision making of the own. Government of India adopted the national policy empowerment of women on 28 March 2001. To bring about the advancement, development and empowerment of women to eliminate all kind of discrimination against women and to ensure their creative participation in all spheres of life was the objective of the policy. Women's rights are secured under the constitution of India-mainly, equality, dignity, and freedom from discrimination; further, India has various statutes governing the right of women.

Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (2005)

MGNREGA act is an act to provide for the enhancement of livelihood security of the household in rural areas of the country by providing at least 100 days of guaranteed wage employment in every financial year to every household whose adult members volunteer to do unskilled manual work. It is a landmark legislation which empowers the rural population with the legal rights to demand work. The MGNREGA creates a shift in the economy from supply side to demand side approach. The objective of the MGNREGA is following:

- To enhance the livelihood security of the rural poor by generating wage employment opportunities.
- To create a rural asset base to enhance the productive ways of employment augment and sustain rural household income?

The National Rural Employment Guarantee Bill, 2004 was enacted as an Act on 7th September 2005 and with great hope and hype the NREGA came into force on 2nd February 2006. It was initially implemented as NREGA in 200 backward districts of India. It was extended to an additional 130 district in its second phase in year 2007-2008 with effect from 1st April 2007. Later the remaining 295 districts were covered from 1st April 2008. On 2nd October 2009, The NREGA was renamed as the Mahatma Gandhi National Rural Employment Act (MGNREGA) after the National Rural Employment Guarantee (Amendment) Act, 2009.

Status of MGNREGA in Tonk

MGNREGA scheme was Implementation in Tonk district in the 2nd phase in 2007-08 from 1 April 2008. Total 6 blocks and 230 Gram Panchayats and 1070 villages are covered by this scheme in district. Total number of Job Cards issued is 2.78 Lakh, total number of workers is 7.47 Lakh, total number of active Job Cards is 1.98 Lakh and total number of active workers is 3.39 Lakh including SC worker against the active worker is 19.79 % and ST worker against the active worker is 16.88 %. This is illustrated in the table 1 as following.

Table 1: MGNREGA scenario: Tonk (As on 05/03/2020)

Total number of Job Cards issued (in Lakh)	**2.78**
Total number of workers (in Lakh)	**7.47**
Total number of active Job Cards (in Lakh)	**1.98**
Total number of active workers (in Lakh)	**3.39**
SC worker against the active worker	**19.79%**
ST worker against the active worker	**16.88 %**

Source: www.mgnrega.nic.in (Retrieved on 05/03/2020)

Why Tonk district has been selected

The present study selected Tonk district of Rajasthan for the intensive study. The rationale for selecting the district is that Tonk named as one of the country's most backward district by the Ministry of Panchayat Raj in year 2006 and it is also receiving funds from Backward Regions Grant Fund (BRGF) Programme. Tonk also ranks first in Rajasthan state in urban sex-ratio. MGNREGA implementation is requiring extensively and intensively for the socio-Economic development of the district.

Objectives of the study

1. To study the women participation and earning of women worker under MGNREGA in Tonk district.

2. To analyze the improvement in economic condition of women and women empowerment through MGNREGA in in Tonk district.

Methodology

This study is based only secondary data which has been taken from the official website of MGNREGA. In this paper we made an attempt to study the block-wise participation of women in MGNREGA in Tonk district of Rajasthan. Women's participation under MGNREGA measured in total number of women registered, person day generated by women, number of women worker employed and in the scheme. One another significant variable is also taken to understand the improvement in economic condition of women which total amount earned by the women through MGNREGA. The data has been collected for the period of 2016-17 to 2019-20. The current financial and also be taken into consideration to identify situation off the scheme of current year also. Graph percentile and tabulation has been used in the study.

Women Empowerment through MGNREGA: Analysis

MGNREGA is being implemented in all the rural districts and villages of the country. Most important feature of MGNREGA is that it pays similar wage to men and women. MGNREGA provides that 33% of the employment provided should be given to women. To identify the women participation we need to understand the situation of women workers under different category of variable as following:

1. Women Registration in MGNREGA

Table 2 presents the data relating to the total number of worker registered (block-wise) in MGNREGA in Tonk district. Table shows the block-wise distribution of total number of registered worker under MGNREGA.

Table 2 Block-wise Registrations under MGNREGA in Tonk District

S.No.	Block	Number of Workers Registered in MGNREGA			
		Total	Men	Women	Women %
1	Deoli	178196	92298	85898	48.20
2	Malpura	208329	108212	100117	48.06
3	Niwai	166376	86853	79523	47.8
4	Todaraisingh	153620	77549	76071	49.52
5	Tonk	215506	108749	106757	49.54
6	Uniyara	151953	76093	75860	49.92
	Total	1073980	549754	524226	48.81

Source: www.mgnrega.nic.in (Retrieved on 05/03/2020)

The total number of registered worker in the scheme in Tonk district is 1073980 which include 549754 men and 524226 women. The highest number of women registration in Tonk (106757) followed by Malpura (100117), Deoli (85898), Niwai (79523) and Todaraisingh (76071) and lowest number of women registration in Uniyara (75860).

The figure 1 below clearly showing that there is women registration in MGNREGA is looking similar to men registration in all blocks in the district means that women are much interested and ready to work in MGNREGA and they are having good participation in the scheme in the district. All blocks of the district are comprises that more than 45 % women registration out of total registration in that block.

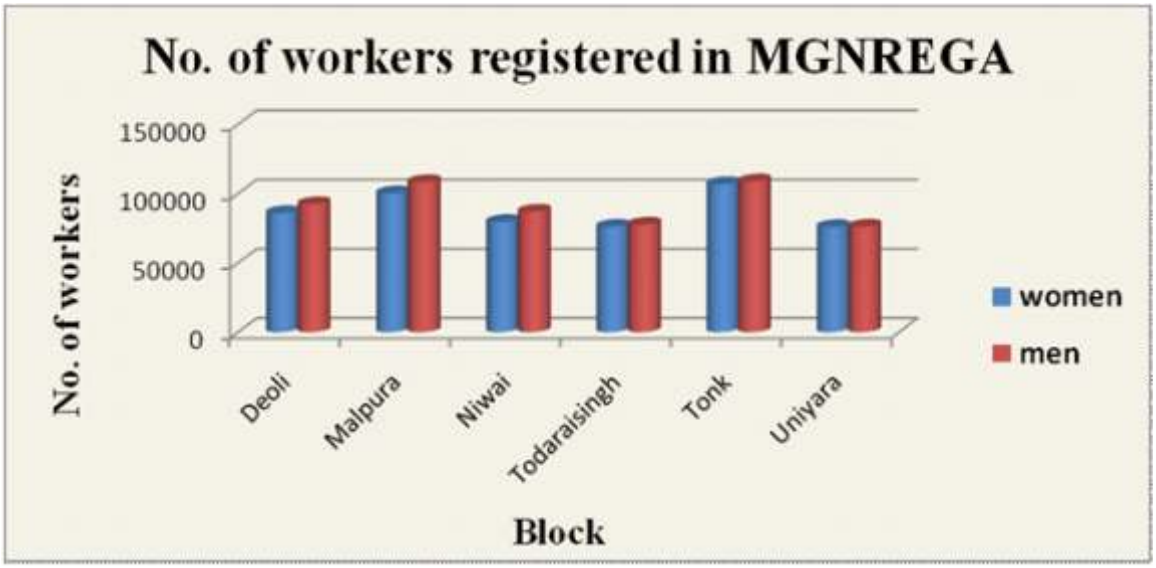

Figure: 1 **Category wise registrations under MGNREGA in Tonk District (Block-wise)**

Figure 2 clearly reflects that 48.81 per cent worker registered MGNREGA are from women category and rest of 51.19 per cent are belongs to men category. Women registration in MGNREGA is looking similar to men registration in all blocks in the district but it is quite higher than the provision for women in MGNREGA to ensure the women participation level of not less than one-third (1/3). The highest number of women registration in percentage in Uniyara block (49.92%) followed by Tonk (49.54%), Todaraisingh (49.52%), Deoli (48.20%), Malpura (48.06%). The lowest number of women registration in percentage in Niwai (47.80%).

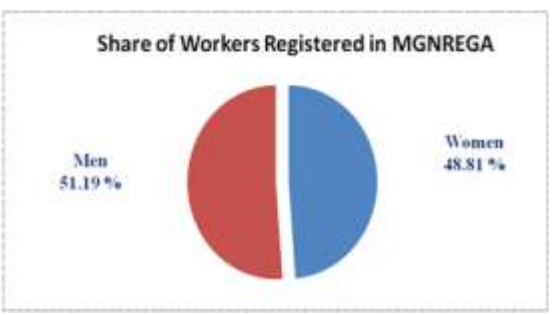

Figure: 2 Shares of Workers Registered Under MGNREGA in Tonk.

2. Total Number of Women Worker Employed

There is a provision in Act that 33 per cent of total employment should be provided to the women workers. So women are equally interested to work under scheme. Table 3 represents the data relating to the total number of worker employed under MGNREGA in Tonk district. The table clearly showing that total number of women worker employed is more than the total number of men worker employed under MGNREGA in district. In 2016-17 total women employed is 161132 and men employed is 105716. Number of employed women is again higher than men employed in year 2017-18 and 2018-19. Current financial year 2019-20 is also showing the same situation.

Financial Year	Total Number of Worker Employed			
	Men	Women	Total	Women %
2016-17	105716	161132	266848	60.38
2017-18	95391	132826	228217	58.20
2018-19	92048	144529	236577	61.09
2019-20	90150	152192	242342	62.80

Source: www.mgnrega.nic.in
(Retrieved on 05/03/2020)

Table also indicating that women share of employment under MGNREGA is nearby 60 per cent in every preceding year and in current year 2019-20 it is 62.80 per cent of total employed worker are women. The figure 3 below showing the total number of workers employed in MGNREGA scheme in Tonk district which indicates that in every financial year the total number of women worker employed in the scheme are higher than the men workers.

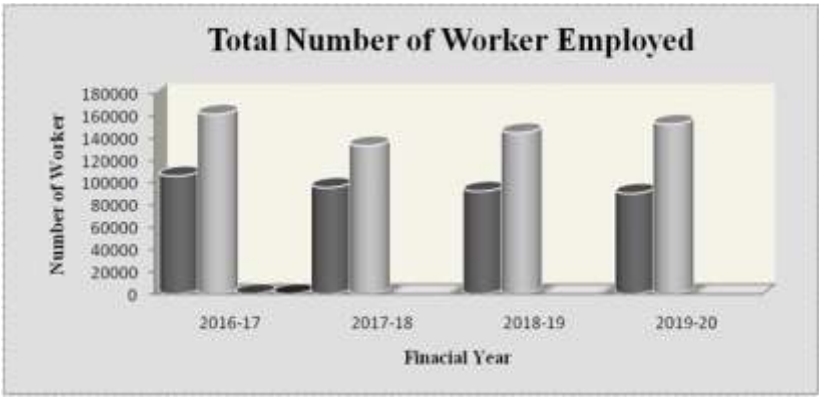

Figure: 3 Total Number of Worker Employed Under MGNREGA in Tonk

3. Total Number of Person Days Generated by Women

Table 4 presents the employment status of MGNREGA and women employment through MGNREGA in different block of Tonk district. A total number of 5748135 person days employment generated in district including women (3808761) and men (1939374). The highest number of person days generated by women workers in Tonk (979614) followed by Niwali (849968), Deoli (708397), Malpura (594484), and Todaraising (340468). Lowest number of person days generated by women worker in Uniyara block (328527). The analysis of graph and table below indicates that there is women participation ratio is very high in all block of the district.

Table 4 Total number of Person Days Generated in Tonk (Block-wise)

S.No.	Block	Total number of Person Days Generated			
		Total	Men	Women	Women %
1	Deoli	1105906	397509	708397	64.06
2	Malpura	934952	340468	594484	63.58
3	Niwai	1213079	363111	849968	70.07
4	Todaraisingh	513628	165857	347771	67.71
5	Tonk	1390741	411127	979614	70.44
6	Uniyara	589829	261302	328527	55.7
	Total	5748135	1939374	3808761	66.26

Source: www.mgnrega.nic.in (Retrieved on 05/03/2020)

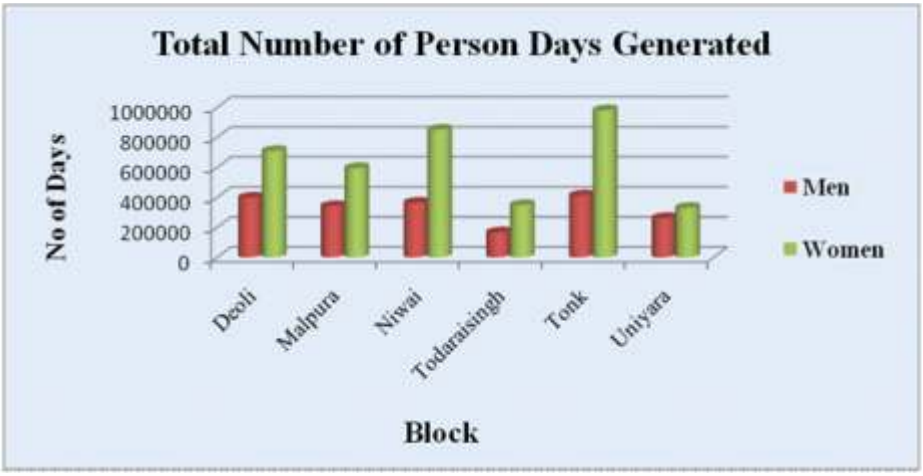

Figure 4: Total number of Person Days Generated Under MGNREGA in Tonk District

In MGNREGA scheme, more than half of the total person days generated in the scheme related to women. The share of women stands at 66.26 % and for men are 33.74 % of the total person days generated in Tonk district as indicates in figure 5. It is clearly indicating that women participation is very high compare to men in Tonk district under MGNREGA. All block in Tonk district are having the total number of person days generated by women is much higher than total number of person days generated by men in the district. The highest employment status amongst women in terms of person days can be seen in Tonk (70.44%). This is followed by Niwai (70.07%), Todaraisingh (67.71%), Deoli (64.06%) and Malpura (63.58%). The least employment status is shown by the Uniyara (55.70%).

Figure 5: Share of Workers in Person days Generated in Tonk

4. Amount Earned by Worker Employed

Table 5 presents the data showing the total amount earned or received as the wage for the work completed under MGNREGA. It is clearly indicate that amount earning by women is more than the earning of men in the scheme. In financial year 2016-17 total earning of men in Tonk is 3050 lakh and for women 4881 lakh. In year 2017-18, total amount earned for women is 4107.72 lakh and for men is 3008.74 lakh and in 2018-19, total amount earned for women is 4104.96 lakh and for men is 2503.43 lakh. In current financial year 2019-20 is also following the same pattern of the previous three years which is showing that earning of women is much higher than the earning of men.

Table 5 Total Amount Earned by Worker Employed Under MGNREGA in Tonk

Financial Year	Amount Earned by Worker [In Lakh]			
	Men	Women	Total Amount	Women %
2016-17	3050	4881	7931	61.54
2017-18	3008.74	4107.72	7116.46	57.72
2018-19	2503.43	4104.96	6608.39	62.12
2019-20	2608.84	4681.18	7290.02	64.21

Source: www.mgnrega.nic.in (Retrieved on 05/03/2020)

Table shows that 61.54 % of the total amount earned under MGNREGA by women workers in year 2016-17 which were continually increased in upcoming year 2017-18, 2018-19 and followed by the current year (64.21%) also. The amount earned by women workers are more than the men workers continuously from 2016-17 to current financial year and the average of 60 % amount earned is going to the women workers that are illustrated in the figure no.4. It is indicating that economic conditions of women are improved and they are contributing more to the family income after the implementation of MGNREGA programme in Tonk district.

Figure 6: Total Amount Earned by Worker Employed Under MGNREGA in Tonk

Conclusion:

Implementation of MGNREGA has highly contributed in women empowerment. The first time equal wages are really paid to both the men and women. It boosted the earning of the women which leading the purchasing power expenditure pattern of the women. One of the significant and unique facts about the MGNREGA is that it has provided equal opportunity to people in rural area of India to earn income without any discrimination of caste, sex and gender. Most important feature of MGNREGA is that it pays similar wage to men and women. MGNREGA provides that 33% of the employment provided should be given to women. MGNREGA scheme has the potential to lead the individual performance of worker under the scheme. Major findings of the study are following:

- All blocks of the district are comprises that more than 45 % women registration. Women registration in MGNREGA is looking similar to men registration in all blocks in the district means that women are much interested and ready to work in MGNREGA and

they are having good participation in the scheme in the district.

- Total number of women worker employed is more than the total number of men worker employed under MGNREGA in district. This shows that the women employment has been increased after the implementation of the MGNREGA scheme.
- The above analysis indicates that there is women participation ratio is very high in all block of the district. In MGNREGA scheme, more than half of the total person days generated (59.02 %) in the scheme related to women.
- They found that the target of MGNREGA to ensure the women participation level of not less than one-third (1/3) of total has been achieved in all blocks of the Tonk district. This shows that MGNREGA scheme is very effective to attract the majority of women to work and earn. It will definitely improve the social status and condition of the women.
- The highest women participation rate is in Tonk and Niwai block in terms of women persondays generation. It is the high performing block of the district in implementation of the scheme. Uniyara block ranks 1st in terms of highest number of women registered in MGNREGA but this block failed in terms of person days generated by women worker. And ranks last in Tonk district.
- It is clear that amount earning by women is more than the earning of men in the scheme for all the respective years. The women become an earning member of the family. It leads the income of the family that will be used for the necessities like food, health and nutrition.

References

1. *Bisht, C. (2015). Impact of MGNREGA on Women's Empowerment. Vol.5, Issue.5, October-2015, pp.218-222.*
2. *Ravindar, M. (2016). Empowerment of Women through MGNREGS: A study in Warngal District of Telangana State. International Journal of Multidisciplinary Research and Modern Education (IJMRME), Vol. II, Issue. I, 2016.*
3. *Sahoo, M. (2014). Impact of MGNREGA on Women Empowerment- A case study of Cuttack district in Odisha. Journal of Organisation & Human Behaviour, Vol.3, Issue.1, January 2014, pp.44-50.*
4. *Xavier & Mari, G. (2014). Impact of MGNREGA on Women Empowerment with Special Reference to Kalakkanmoi Panchayat in Sivgangai District, Tamil Nadu. SSRG International Journal of Economics and Management Studies (SSRG-IJEMS), vol.1 issue.1, August 2014, pp.1-5*
5. *Chaturvedi, S., Singh, D., Singh, V.B., Parmar, K. & Bhatele, A. (2017). MNREGA: Socio-Economic Profile of Women Empowerment in Purabazar Block of Faizabad District, India. International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences, Vol.6, No.6 (2017), pp. 612-615.*
6. *Ahmad, S., Khan, F., Sherwani & Jamshed, M. (2017). Women Empowerment through MGNREGA: An Empirical study of Mewat (Haryana). International Journal of Management and Applied Science, Vol.3, Issue.2, Feb.-2017, pp.68-73.*
7. *Dikshit, G. & Sharma S. (2017). Success of MGNREGA – Delusion or Reality-A Study of Tonk District, Rajasthan, India. International Research Journal of Social Sciences, Vol. 6(4), April (2017), pp. 18-26.*
8. *The Gazette of India, part-II, Section-1, Registered No DL-(N)/ 0007/2003-05, New Delhi, September 7,2005.*

Web Sources:

1. *Data from MIS reports of National Rural Employment Guarantee Act websitehttp://nrega.nic.in/MISreport.htm.*
2. *Information from Ministry of Rural Development website, www.rural.nic.in.*
3. *Information from National Rural Employment Guarantee Act website, www.nrega.nic.in.*
4. *http://nrega.nic.in/rajaswa.pdf.*
5. *http://nrega.nic.in/amendments_2005_2018.pdf*
6. *http://www.panchayat.gov.in/documents/10198/1136810/USQ%20NO.2482%20Dated%2014.12.06.pdf.*
7. *http://nrega.nic.in/MGNREGA_Dist.pdf.*

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Refereed Journal)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018
Shodhshree@gmail.com

Individual Subscription Form

Name .....

Designation .....

Name of Organization .....

.....

Address .....

.....

District .....

State

.....

Pin .....

Tel. No. (R) .....

Mobile .....

e-mail .....

Date (Signature)

Frequency	:	Shodh Shree is Published four time in a year (Quarterly) i.e. January, April , July & October.
Mode of Payment	:	Subscription fee can be deposit through online Banking.
Bank Details	:	Virendra Sharma, OBC Bank, Adarsh Nagar, jaipur SB A/C No. 06722151002965, IFSC Code ORBC 0100672, MICR Code 302022005 Subscription Fees - 1800 Rs.

Membership No. ..... Date .....

(For Office Use only)

DECLARATION FORM FOR CONTRIBUTORS

I.....

hereby declared that the paper entitled'.....

.....'is unpublished original paper which is not sent any where for publication.

This paper is prepared by me/jointly with.....

.....which is exclusively for your journal entitle 'Shodh Shree'.

I/We will not demand any honorarium for the same expect one copy of the Journal in which this paper will appear. Please send copy of the Journal at the address of author whose name is appeared at first,

Copy right of matter is with Shodh Shree. I/We will not reproduce it in any other journal of book except prior permission of the Chief Editor.

Signature .....

Name .....

Designation .....

Official Address .....

.....

Residential Address .....

.....

.....

Phone No. ..... Pin No. .....

e-mail Address .....

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Refereed Journal)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018
Shodhshree@gmail.com

Institutional Membership Form

The Editor
Shodhshree
Jaipur

Dear Sir
I want to become a member of this Journal for -

☐ 1 year	☐ 2 years	☐ 3 years
(Rs. 1000/-)	(Rs. 1800/-)	(Rs. 2500 /-)

I am sending here with Rs..... through online banking/cash for membership of your Journal.

Name of Institution .....

.....

Address.....

..... Pin Code.....

Phone/Mobile No. .....

E-mail ID .....

Date: Signature

For Office Use Only

Membership No. _____ Date _____

Frequency : Shodhshree is Published four time in a year(Quarterly) i.e. January, April, July, October.

Mode of Payment : Subscription fees can be deposit through online Banking.

Bank Details : Cheque /DD must be in Favor of Virendra Sharma ,OBC Bank, Adarsh Nagar, Jaipur
SB A/C NO.06722151002965
IFSC Code ORBC0100672, MICR Code 302022005

Guidelines for the Contributors

1. All research paper must be typed in Microsoft Word and use KRUTI DEV 010 font for Hindi or Times New Roman Font for English can submit by C.D. or through e-mail.

2 All manuscripts must be accompanied by the brief abstract, Abstract including Keywords must not exceed more then 150 words.

3. A separate list of references should be given at the end of the paper and not at each page. Footnotes may be given on the same page if any technical term needs some explanation.

4. Table, Model, Graph or Chart should be on separate pages and numbered serially with appropriate heading.

5. Maximum word limit of research paper up to 2500 words.

6. Special care must be taken to avoid spelling errors and grammatical mistakes in the paper, otherwise it will not be accepted for publication.

7. The author(s) should certify on a separate page that the manuscript is original and it is not copyrighted.

8. The copyright is Reserved for 'Shodhshree' for All Research papers and Book Reviews, published in this journal.

9. Publication of research paper would be decided by our editorial board or subject specialist.

Book Review : For Book Review to be included in this journal only reference books and research publications are considered. One copy of each such publication must be submitted to the Editor.

Note : Shodh Shree have copyright on papers published in the journal therefore, prior permission is necessary for reproduction of paper, anywhere by author or other person. However, papers published in the journal may be freely quoted in further study. All disputes are subject to jaipur jurisdiction.

Research Paper may be sent to our e-mail: shodhshree@gmail.com
For any assistance, Please Contact Dr. Ravindra Tailor - 09413224134

प्रिन्टेड मैटर
If undelivered please return to :

शोध श्री (त्रैमासिक)
54-ए, जवाहर नगर कॉलोनी
टोंक रोड, जयपुर-302018

स्वात्त्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान सम्पादक – वीरेन्द्र शर्मा के लिए मुद्रित व 54–ए, जवाहर नगर कॉलोनी, टोंक रोड, जयपुर–302018 मो. 9460124401